मच्चरित-दर्पण

वाल्मीकीय रामायण का

संक्षिप्त हिन्दी पद्यानुवाद

रचयिता एवम् प्रकाशक

पं. मुन्नालाल मिश्र

प्राप्तव्य स्थान

आर्य प्रतिनिधि सभा, मध्य दक्षिण

महर्षि दयानन्द मार्ग

सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद—आं. प्र.

॥ ॐ ॥

श्रीरामचरित-दर्पण

वाल्मीकीय रामायणका

संक्षिप्त हिन्दी पद्यानुवाद

रचयिता एवम् प्रकाशक

पं. मुन्नालाल मिश्र

प्राचीन मल्लेपल्ली हैदराबाद (आ. प्र.)

मूल्य ३॥. (तीन रु. आठ आने)

मुद्रक :– श्रीश्यामसुन्दर झा

श्रीश्यामसुन्दर मुद्रणालय, हैदराबाद आ. प्रं.

कल्प सम्वत् १९७२९४९०५९ विक्रम सं. २०१५ चैत्र श्रीरामनवमी

भूमिका :—

"एतावानस्य महिमाऽतो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि" ।।
(शु१ यजुर्वेद पु० सूक्त)

यह दृश्य जगत् परब्रह्मका व्यक्त स्वरूप है, विव्यक्त स्वरूप तो अवाङ्-मनसगोचर' है, उसे कोई जानता ही नहीं। पूर्णब्रह्मका मानसीकरण असम्भव है। मानव मनकी दो मूल और प्रमुख वृत्तियाँ हैं, पहली है हृदय और दूसरी है बुद्धि। इन दोनोके योगसे ही मानव अभ्युदय और निः-श्रेयसकी ओर अग्रसर होता है। हृदयके माध्यमसे मानवको श्रद्धा, विश्वास और प्रेमकी उपलब्धि होती है तथा बुद्धिके द्वारा प्राप्ति होती है ज्ञानकी। हृदयका क्षेत्र है ज्ञात जगत् और बुद्धिका क्षेत्र है अज्ञात जगत्। हृदय ज्ञात क्षेत्रमे ही रमता है, किन्तु बुद्धि अज्ञातको जाननेके लिये यत्नशीला होती है। भगवान् शङ्कराचार्य्यने बुद्धिके योगसे अपने ज्ञानआलोकमे अद्वैतवादकी प्रतिष्ठाकी और स्वामी रामानुजाचार्यने हृदयके योगसे व्यक्त जगत्को भी प्राधान्य देकर विशिष्टाद्वैतकी प्रतिष्ठाके साथ उपासनापर बल दिया। व्यक्त जगत् भी ब्रह्मका ही विशिष्ट अङ्ग है। व्यक्त और अव्यक्त, सभी वस्तुओंमे उसका अधिष्ठान है, तथापि हमारा हृदय केवल दृश्य वा व्यक्त वस्तुओंमे ही रमता है। जिस वस्तुमे गुणोका सर्वापेक्षया आधिक्य दृष्टि आता हैं, उसमे हमारा मन विशेषतया रमता है। ब्रह्म सभी गुणोकी समष्टि है, अतः जहाँ ये गुण अनुपाततः अधिक होते हैं, वहाँ ब्रह्मत्व अनुपाततः अधिक होगा ही। इसी निष्कर्षको दृष्टिमे रखकर भगवान् श्रीकृष्णने गीताका उपदेश करते हुये अर्जुनसे कहा था —

"यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंशसम्भवम्" ।।

इसी विचारसूत्रके सहारे अवतारोंकी कल्पना मानव मनसे प्रसूत हुई। भगवद्विभूतियोंका आकलन करते हुये उनमेसे तीन विभूतियोंको प्रमुखता दी गई, वे हैं सौन्दर्य, शक्ति और शील। ये विभूतियाँ जिस किसी व्यक्तिमे दृष्टि आती हैं, उसकी ओर जन साधारणका हार्दिक झुकाव सहज ही हो जाता है। सभी देशों और सभी कालोंमे यह सत्य समान रूपसे गृहीत हुआ है। वीरपूजा सभी देशोंमे सदासें चलती आ रही है। केवल शक्ति अपने

निर्विशेषरूपमे पूज्य नहीं हो जाती है, उसके साथ शीलका समन्वय होने पर ही हमारा हृदय उसके प्रति श्रद्धा अर्पित करनेको तत्पर होता है। यह शक्ति वह गुण है, जो शक्तिको लोकरक्षणार्थ प्रस्तुत करता है। लोकोत्पीड़क शक्तिकी पूजा कभी किसी मानव समुदाय द्वारा नहीं हुई।

आत्म-रक्षणार्थ ब्रह्मको उपासना वेदोंमे भी विविधरूपोंमे की गई है, किन्तु उसका कोई स्वरूप निर्धारण न होनेके कारण उसमे पूर्ण हृदयका योग सम्भव नहीं था। इसीलिये वेद कभी काव्यके नामसे अभिहित नहीं हुये। महर्षि वाल्मीकिको राममे ब्रह्मकी उपर्युक्त तीनो विभूतियोंका अव-स्थान दृष्टि आया, अतः पूर्ण हृदयकें योगसे उनकी यशोगाथा गाई। हृदय की मूल भावनायें जहाँ परिस्थितिविशेषके कारण उद्वेलित होकर भाषाके परिधानमे उदगीर्ण हो पड़ती हैं, वहीं काव्यकी अवतारणा होती है। इसीलिये आचार्य्य आनन्दवर्धनने कहा है, यथा--

"काव्यस्यात्मा स एवार्थस्तथा चादिकवेः पुरा।
क्रौञ्चद्वन्द्ववियोगोत्थः शोकः श्लोकत्वमागतः"।

इस प्रकार महर्षि वाल्मीकि विश्वके आदि कवि हैं। इस आदि कवि का प्रथम काव्य ही आगेके कवियोंके काव्योंकी कसौटी हो गया। वि-भिन्न अङ्गोपाङ्गोंकी पूर्णताके साथ काव्यका जो महिमा-मण्डित स्वरूप रा-मायणमें मिलता है वह अन्यत्र सर्वतोभावेन सम्भव नहीं हो सका। लक्षण ग्रन्थकार आचार्य्योंने लक्षण-निर्धारणके लिये वाल्मीकिरामायणको आदर्श बनाया, कवियोंने भी इससे आदर्श और प्रेरणा पाई। मानव चरित्र और प्रकृतिके स्वरूपका वैविध्य रामायणमे देखनेको मिलता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। वहाँ प्रकृति मानव जीवनके एक अनिवार्य अङ्गके रूपमे उतारी गई है, उसके बिना मानवजीवन अपने दिगम्बरत्वमे अपनी दीनताको ही लेकर सामने आता। महर्षि वाल्मीकि आपादमस्तक कवि हैं, उनकी साधारणसेसाधारण उक्ति पूर्ण काव्य होगई है, जैसे उनकी वाणीको कविताका वरदान सहजोप-लब्ध था। महर्षिकी एक उक्ति परीक्षणार्थ लीजिये, सीताहरण हो चुका है, राम विरह ज्वरसे सन्तप्त हैं। यह वियोग भी साधारण नहीं है, सीता अपने मैहर वा ससुरालमे सुखमय वातावरणमे नहीं हैं, उन्हें दुर्वृत्त रावण बल पूर्वक उठा ले गया है। पति-पत्नीमे सैकडों कोसकी दूरी है। जो सीता रामके वियोगकी व्यथाके अनुमान मात्रसे वनवासके दुःखको सहनेके लिये सहर्ष प्रस्तुत हो गई थीं, वे ही बलात् उनसे दूर कर दी गई हैं। राम लक्ष्मण से कहते हैं यथा---

"हारो नारोपितः कण्ठे मया विश्लेषभीरुणा ।
इदानीमावयोर्मध्ये सरित्सागरभूधराः" ॥

- अर्थात् मेरे और सीताके बीच तिल मात्रका भी अन्तर न रहे, यह सोच कर मैंने कभी गलेमे हार तक नहीं पहना, किन्तु अब हम दोनोके बीच नदियों, पर्वतों और सागरोंका अन्तर आ पड़ा है। बात साधारण हैं, किन्तु कितनी मर्मभेदी होकर कविकी वाणीसे उतरी है। यही है काव्य और यही हैं काव्यका आत्मा। क्या नगर क्या वन ? सभी कविकी वाणीमे तदाकार विम्ब रूपमे उतर आये हैं। यह है उसका काव्यात्मक स्वरूप।

दूसरी विशेषता ह, उसकी ऐतिहासिकता। प्राचीन परम्पराके विश्वासी जनोमे तो एक जनश्रुति चली आती हैं कि महर्षिने रामके जन्मसे सहस्रों वर्ष पहले ही रामायणकी रचना कर डाली थी। किन्तु सच तो यह हैं कि महर्षि वाल्मीकि भगवान् रामके समकालीन प्रख्यात पुरुष थे, उन्होंने रामके जीवनको निकटसे देखा था। अतः उनकी बातोंमे यथार्थता और सत्यता अधिक हैं, यह अवश्य हैं कि उन्होंने इतिवृत्त प्रस्तुत न करके उसे काव्य रूप प्रदान किया हैं। इतिहासके जिज्ञासुओंको तो वाल्मीकिके ही पास जाना पडेंगा, जिन्होंने रामके चरितको मानव चरितके रूपमे प्रस्तुत किया है, उसे अलौकिकताके परिधानसे आवेष्टित नहीं किया है। आजके हिन्दी भाषी युगमे वाल्मीकि सबके पास पहुँचनेमे समर्थ नहीं है, केवल संस्कृतज्ञ जन ही उनतक पहुँच पाते हैं, अतः रामायणका हिन्दी रूपान्तर आजकी अनिवार्य आवश्यकता हो गई है। कुछ विद्वानोने रामायणकी हिन्दी टीकायें अवश्य की हैं, जिनके माध्यमसे लोग वाल्मीकि महर्षिकी बातोंको सुन सकते हैं। किन्तु उसका काव्यानुवाद आज तक मेरे देखनेमे नहीं आया था।

अत्यन्त हर्षकी बात है कि मेरे परमसुहृद् पं० श्रीमुन्नालालजीमिश्रने इसकार्य को बडे परिश्रम और लगनसे सम्पन्न किया है। वे विद्वान् होनेके साथ ही एक सहृदयकवि भी हैं, अतः इसकार्यको वडीसुरुचि और सफलतासे इन्होने पूर्णता प्रदान की है। इनका अनुवाद यद्यपि वाल्मीकिरामायणका संक्षिप्त रूपान्तर है, तथापि कोईभी प्रमुख ऐतिहासिक घटना या तथ्य छूटने नहीं पाया है। इन्होंने इसमे अपनी ओरसे किसीप्रकारका नमक मिर्च मिलानेका यत्न नहीं किया है, जो कुछ है वाल्मीकिका है, मिश्रजीने इसे अपनी भाषाके साँचेमे ढाल दिया है। मिश्रजीकी भाषा भी सर्वसाधारणकी सहज भाषा है, अतः साधारण जन भी इसे पढ़कर रसास्वादनमे समर्थ हो सकते ह। अनुवादमे भी अनेक स्थलोंपर मौलिक काव्य

का-सा आनन्द प्राप्त होता है। एक बात और, वाल्मीकिने अपने काव्यको गेय रूप दिया था, लव और कुशने उसे रामकी राजसभामे गा कर सबको मन्त्र-मुग्ध कर दिया था। मिश्रजी स्वयं एक अच्छे गायक हैं अतः इन्होनें भी इसको गेय रूपकी सफलतापूर्वक रक्षा की है। मुझे पूर्णविश्वास है कि मिश्रजीके इस अनुवादका हिन्दी भाषी जनतामे सर्वत्र सोत्साह स्वागत होगा और लोग इनके इस प्रयत्नके प्रति आभारी होंगें यथा —

"न हि कस्तूरिकामोदः शपथेन विभाव्यते" ॥

अलं विस्तरेणेति दिक ॥

श्रीलालधर त्रिपाठी "प्रवासी"

वैद्यनाथ धाम, कमच्छा, वाराणसी
चैत्र शु. १ संवत् २०१५ वि.

मूल्य :- ३॥. (तीन रु. आठ आने)

पुस्तक मिलनेका स्थान :-
प. मुन्नालाल मिश्र
प्राचीन मल्ले पल्ली हैदराबाद आ. प्र.

प्राक्कथन

मै कथाओं तथा भजनो द्वारा लगभग २७ वर्ष हुये प्रचार करताआरहाहू. मैने बहुत खोज की कि वाल्मीकीयरामायणका पद्यानुवाद मिलजाय तो उसका प्रचार करूं ? पर कोई पद्यानुवाद नहीं मिला। एक दिन इच्छा हुई कि क्यों नहीं स्वयं ही प्रयास करूं ? बस फिर क्या था लिखना आरम्भ किया। संय्योगसे कविवर श्री. श्रीलालधरजी "प्रवासी" बिरई उ. प्र. निवासी कविसम्मेलन पर हैदराबाद आये हुए थे, उनसे भट हुइ। उन्होने इसपद्यानुवादको देखा और सराहना करते हुए कहा,इसे छपाना चाहिये ? मंने कहा कि यदि आप कविताकी त्रुटियोंको शुद्ध करनेकी कृपाकरें तो साहस कर सकता हुँ। तब उन्होंने त्रुटियां दूर करनेकी कृपा की और मंनं छपान का तथा प्रुफ शुद्धिका भार श्रीप.लक्ष्मीनारायणजी झा शास्त्री जो श्रीश्यामसून्दर प्रेस के संचालक है उन्हें सोंप दिया। वही पुस्तक आपकेहाथोंमें है शुद्धिका ध्यान रखने पर भी कुछ त्रुटियां रहगई हैं पाठक उन्हें सुधारकर पढें रामायणके सम्वन्धमे कइयोंके कई विचार होते हुए भी मानते सव हें। रामका चरित्र इतना उँचा है कि जिसकी तुलना किसीसे नहीं की जासकती। रामायणके द्वारा जो शिक्षाएं प्राप्त होसकती हैं अन्य ऐतिहासिक ग्रन्थोंसे नहीं हो सकती.

रामायाण एक काव्यमय इतिहास है इसमे अतिशयोक्ति अलङ्कार हैं और कुछभाग क्षपक भी हे वहां "क्षेपक"का संकेत भी है और कई श्लोक भी क्षेपक प्रतीत होते है क्योंकि रामायण से वे मेल नहीं खाते कुछ दन्तकथाएंऐसी हे जिनका वाल्मीकि रामायणसे कोई सम्बन्ध ही नहों हैं वाल्मीकिमे बहुत से ऐसे उत्तम प्रसङ्ग ह कि जिनका उल्लेख आधुनिक कवियोंने किया ही नहीं है इस पुस्तक मे जो कुछभी है वाल्माकिका है मैंने अपनी आर से कोई विवादग्रस्त बात नहीं मिलाई है हां कविताकी पूर्ति करने कुछ शब्दों और कुछ वक्योंको बढाया है पर भावार्थमे भेद नहीं आने दिया, यह बात भी निश्चित है कि मैने क्षेपक प्रसङ्ग को स्थान नहीं दिया है क्योंकि क्षेपकमे मेरा विश्वास नहीं है।

इस पद्यानुवाद द्वारा जनतामे आस्तिकता, धार्मिकता, नैतिकता एवं राष्ट्रीयताका संचार हुआ तो मैं अपना प्रयास सफल समझूंगा।

अन्तमे मैं सभी सहायकों तथा विशेषकर कविवर श्रीप. श्रीलालधरजीं त्रिपाठी "प्रवासी" तथा श्री पं. लक्ष्मीनारायणजी झा शास्त्रीको धन्यवाद देता हूं कि जिनकी कृपासे यह पुस्तक छप सकी। शमिति-

ग्रन्थकर्ता

समर्पण :—

है सदाचार अपनाना ही जिनका प्रण।
जो सच्चरित्रताका ही करते चित्रण॥

पर हितमे जिनके बीते हैं जीवन क्षण।
दे डाला सेवामे शरीरका कण-कण॥

जो दानवतासे सदा किया करते रण।
है नैतिकताका जिनमे शुभ आकर्षण॥

अतिविनय सहित यह 'रामचरितका' दर्पण।
श्रद्धासे करता "मिश्र" उन्हींको अर्पण॥

उद्देश्य :--

रामका शुभ गुण गाना है।
"राम कथाके" द्वारा जगको हमे जगाना है ॥

भारतीय "सँस्कृतिका" बतलाना है उच्चादर्श ।
बतलाना है आर्य जातिका था कैसा उत्कर्ष ॥
उन्हींके पथ पर जाना है ॥ १ ॥

सदाचार कहते हैं जिसको बनकर वह साकार।
रामरूपमे प्रकट हुआ था लेकरके अवतार ॥
उसे हमको अपनाना है ॥ २ ॥

"नाम रामका" अमर हुआ क्यों ? क्या थी उनमे बात ?
बतलाना है बात हमे वह सुनो ! ध्यानके साथ ॥
समय ना व्यर्थ गमाना है ॥ ३ ॥

"तर्क बुद्धि, श्रद्धा व प्रेमसे" सुनिये राम चरित्र ।
चित्र, चरित्र, पवित्र बनायें आयें, सब मिल मित्र !!
"मिश्रको" यही सुझाना है ॥ ४ ॥

॥ ओ३म् ॥

श्रीरामचरित दर्पण

भगवन्! इस संसारमे, हो चरित्र निर्माण।
जिससे नित होता रहे, जीवोंका कल्याण॥

॥ वाल्मीकि नारद संवाद ॥

प्रथम सुनाना है हमे, वह प्रसङ्ग साह्लाद ।
वाल्मीकि ऋषि और श्री नारदका संवाद ॥

श्री वाल्मीकिने पूछा यों, हे नारद ! यह बतलाओ तो ।
है कौन व्यक्ति अत्यन्त श्रेष्ठ, मानव महान् समझाओ तो ॥

धर्मज्ञ, राजनीतिज्ञ तथा, सत्य-व्रतका धारी होवे ।
सुन्दर चरित्रसे युक्त और सब जनका हितकारी होवे ॥

हो सर्वशास्त्रसम्पन्न, वेद, वेदाङ्ग आदिका ज्ञाता हो ।
हो कान्तिमान्, विद्वान् और सम्मान सदा ही पाता हो ॥

जिसके क्रोधित हो जाने पर, दानव मनमे भय खाते हों ।
सुख पूर्वक रहते जीव सदा, जिससे सज्जन हर्षाते हों ॥

ऐसे नरको निश्चय करके, श्रीमान् जानते होंगे ही ।
कर कृपा आप बतला दीजे, भगवान् जानते होंगे ही ॥

नारद बोले हे मुने ! सुनो, अपने विचार मै कहता हूँ ।
जिस भाँति आपके हैं विचार, उस ही प्रकार मै कहता हूँ ॥

॥ धन, बल, बुद्धि, ये तीनों एक मनुष्यमें रहना असाधारण बात है ॥

वैवस्वतमनुके ज्येष्ठपुत्र, इक्ष्वाकुवंश उत्पन्नराम ।
विख्यातजितेन्द्रिय,बुद्धिमान्,द्युतिमान् तथा आनन्दधाम
सुन्दर, सुडौल, देदीप्यमान, आजानुबाहु जिनके विशाल ।
ऊँचे कन्धे, हैं कमलनेत्र, उत्तम ग्रीवा औ उच्च भाल ।।
जो दिव्य कृशोदर उच्च वक्ष, मोटी जङ्घा साँवल स्वरूप ।
प्रतिभाशाली, संयमी, व्रती, हैं सर्वगुणालङ्कृत अनूप ।।
हैं शान्तवृत्ति, अति मृदु स्वभाव, व्यवहार कुशलतामे महान् ।
कोपायमान हो जायँ कहीं, तो कालानलके ही समान ।।
हैं शूर, वीर, गम्भीर, धीर, स्थिर बुद्धि और उत्तम विचार ।
दानी, अभिमानी, पराक्रमी, समदर्शी एवं अति उदार ।।
दशरथ कौशल्याके नन्दन, सबको ही जो सुखदायक हैं ।
असहाय, दीन, निर्बल जनके, जो तत्पर सदा सहायक हैं ।।
अथसे लेकर इति तक सारी, नारदने कथा सुनायी है ।
श्री वाल्मीकिको महाकाव्य, लिखनेकी मनमें आयी है ।।

इस प्रकारसे जब सुनी, नारदजीकी बात ।
सुनो सज्जनो! क्या हुआ? इसके फिर पश्चात ।।
खड़े एक वनमें जहां, वाल्मीकि मुनिराय ।
अनायास घटना घटी, वहाँ एक निरुपाय ।।

तरुके ऊपर था क्रौञ्च युगल, क्रीड़ा विलास सुखमे विभोर ।
इतनेमे छोड़ा एक बाण, व्याधाने आकर अति कठोर ।।
नर मरा देख उसकी नारी, तड़पने लगी भर कातर स्वर ।
भरगया वनान्त करुण स्वरसे, ऋषिकी भी आँखें खिंची इधर ।।

मुनि बोले अरे दुष्ट दुर्जन? तूने यह पाप कमाया है।
कामातुर जोड़ेका वियोग कर, इन्हें दुःख पहुँचाया है॥
जो शब्द कहे यों अनायास, बन गया छन्दका रूप वही।
आरम्भ हो गया महाकाव्य, रामायण रूप अनूप वही॥

इक्ष्वाकुके वंशमे, अज सुत दशरथ राज।
करते कौशल देशमे, कुशल पूर्वक काज॥
माप–दण्ड उस राज्यका, था कैसा उस काल।
ध्यान लगाकर सज्जनो, सुनिये सारा हाल॥

बारह योजन लम्बी नगरी, साथ ही तीनकी चौड़ाई।
चहुँओर उसी नगरीके थी, जलसे प्रपूर्ण गहरी खाई॥
बहुतेरे दुर्गम दुर्गोंमे, सौ शतघ्नियाँ थीं धरी हुईं।
रक्षाहित शस्त्रोंसे सज्जित, सेना उसमे थीं भरी हुईं॥
पथ थे चौड़े, चौड़े जिन पर, गन्दगी नहीं दिख पाती थी।
युग पार्श्व वाटिकायें शोभित, जो जलसे सींची जाती थीं॥
दायें बायें पथके सुन्दर, अतिभव्य भवन थे बने हुए।
फिर यथा योग्य सुस्थानों पर, थे वृक्ष झुके औ तने हुए॥
उत्तम क्रीड़ा-स्थल थे जिनमे, सुन्दर जल भरे सरोवर थे।
थीं उत्तम पुष्प वाटिकायें, जिनमे सुन्दर चिड़िया घर थे॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य औ, तबके शूद्र समस्त।
अपने अपने कर्ममे, थे सारे ही व्यस्त॥

श्रम जीवीके श्रम करने पर, मिलता था सिक्का सोनेका।
मजदूरीके तो लिये नहीं, था काम कभी भी रोनेका॥

॥ देशकी प्रगति करनेवाले शासक ही शासक कहला सकते हैं ॥

उत्तम थी सभी व्यवस्थाएँ, कोई न क्षुधासे मरता था।
ऐसी थी न्याय व्यवस्थाएँ, निर्बल न सबलसे डरता था॥
प्रायः सब रत्न सुवर्णोंके, गहनोंसे शोभित रहते थे।
अर्थात् दीनता थी न जहाँ, धनकी गङ्गामें बहते थे॥
हाथी, घोड़े, रथ वाहन भी, जो थे समर्थ वे रखते थे।
उत्तमतासे गौओंको रख, घृत मक्खन उनका चखते थे॥
थे उत्तम उत्तम साँड जहाँ, गोवंश वृद्धि करने वाले।
थे व्यर्थ निकम्मे पशु न जहाँ, केवल फिर फिर चरनेवाले॥
नगरीमे अन्य देशके नित, व्यापारी आया करते थे।
अपना सामान बेच, भारतसे, भी लेजाया करते थे॥
राजाके द्वारा अति उत्तम, शिक्षण, रक्षण, पोषण होता।
निज कोष कभी भरने न कहीं, जनताका भी शोषण होता॥
कामी कायर औ क्रूर, धूर्त, तस्कर भी जहाँ न रहते थे।
होते थे अग्नि होत्र घर घर, सुख धारामे सब बहते थे॥
ऐसा कोई भी पुरुष न था, जो नियम नहीं पालन करता।
ऐसा न कहीं था अधिकारी, जो अनुचित सञ्चालन करता॥
थे सभी हृदयसे देश भक्त, तब देशद्रोहका नाम न था।
परमार्थ दृष्टिमें रहता था, कुछ लोभ मोहका काम न था॥

वाल्मीकि मुनिने लिखा, काव्य सहित विस्तार।
पर हमने संक्षेपमे, बतलाया है सार॥

राजा दशरथके जीवनमें, जग भरका सारा ही सुखथा।
दुखमे दुख देखा जाये तो, बस पुत्र न होनेका दुख था॥

॥ अनुशासनमे रहनेवाली प्रजा द्वारा ही राजा सुखी रह सकता है॥

मछलीकी भाँति तड़पते थे, राजा दशरथ सन्तान बिना।
अनुभव करते थे अपनेको, जैसे शरीर हो प्राण बिना॥
फल बिना वृक्ष, जल बिना मेघ, हो पुष्प जिस तरह गन्ध बिना।
दशरथका जीवन सूना था, इस पिता पुत्र सम्बन्ध बिना॥
नारी रहती है दुखित सदा, अपने उत्तम गुण रूप बिना।
दशरथ चिन्तित थे इसी भाँति, निज मनमें भावी भूप बिना॥
यह कभी दोष देते रहते, अपने ही भाग्य विधाताको।
तो स्मरण कभी किया करते, इस जगके उस निर्माताको॥
फिर कभी निराशावादी बन, लम्बी श्वासोंको लेते थे।
तो कभी निराशा त्याग, धैर्यसे मनको समझा देते थे॥
अन्ततः एक दिन गुरुवरके, हो गये खड़े आगे जाकर।
सन्तान हेतु कुछ यत्न करें, कर जोड़ कहा यों समझाकर॥

नृपको समझाने लगे, गुरुवर नीतिनिधान।
है महान संसारमें, प्रभुका विविध विधान॥
यत्न करे मानव सदा, बने न मनसे दीन।
होते रहती बात है, सदा भाग्य आधीन॥

करिये न व्यर्थकी चिन्ता यों, यह चिन्ता अति दुखदायी है।
चिन्ता है चिता समान, बात विद्वानोंने बतलायी है॥
यह चिता जलाती मृतकोंको, चिन्ता जीतोंको खाती है।
पी रक्त मांस खा जाती है, आँखोंसे दीख न पाती है॥
चिन्तासे जो भी दूर रहा, बन पाया है बलवान् वही।
चिन्ताको जिसने अपनाया, कहलाया है नादान वही॥

चिन्ताको तज कर यत्न करो, आलस्य त्यागकर काम करो।
कर्तव्य परायण बन करके, इस जगमें अपना नाम करो ॥
करने पर यत्न, न काम बने, तो बैठे रोना ठीक नहीं।
होकर निराश फिर व्यर्थ समय, अपना यों खोना ठीक नहीं ॥

राजन्! अपने रोगका, करो उचित उपचार।
जिससे होवे आपके, शिरसे हल्का भार ॥

पहले श्रृङ्गीऋषिको लेने, दूतोंको भेज दिया जाये।
फिर पुत्र कामनाको लेकर, पुत्रेष्टि सुयाग किया जाये ॥
गुरु आज्ञाको कर शिरोधार्य, श्रृङ्गीऋषिको बुलवाते हैं।
ऋषि, मुनिगण, ब्राह्मण मण्डलको, फिर आमन्त्रण भिजवाते हैं ॥
फिर विधि विधानके साथ अश्व, फिर सादर छोड़ा जाता है।
तब एक वर्ष पश्चात् वही, फिर लौट अवधको आता है ॥

देश देशके आ गये, महामहिम महिपाल।
चतुर्वर्णके व्यक्ति भी, जुटे वहाँ तत्काल ॥

अब धर्मशास्त्र आज्ञानुसार, सब ठीक कार्य आरम्भ हुआ।
सरयूके उत्तरीय तट पर, यह अश्वमेध प्रारम्भ हुआ ॥
राजाके कर्मचारियोंने, सबका सुयोग्य आतिथ्य किया।
जिसको देना था जिस प्रकार, उस ही प्रकार सम्मान दिया ॥
सम्पूर्ण यज्ञ हो जाने पर, विप्रोंको पुनः दक्षिणा दी।
सबको सन्तुष्ट किया नृपने, देनेमें कोई कमी न की ॥

यज्ञ पूर्ण पुत्रेष्टि कर, मन इच्छित फल पाय।
औषध रूपी खीर ले, नृपति गये हर्षाय ॥

था एक वर्ष तक व्रत रक्खा, तीनों ही महारानियोंने।
पश्चात् वही पायस चक्खा. तीनों ही महारानियोंने॥
कौसल्या और कैकईको, राजाने उनका भाग दिया।
कुछ अधिक सुमित्रा देवीको. नृपने समेत अनुराग दिया॥
तीनों ही महारानियोंको, पायस पाकर अति हर्ष हुआ।
तीनोंके ही मुख मण्डल पर कुछ, नूतन ज्योति प्रकर्ष हुआ॥
हो गया कार्यक्रम जब समाप्त, आमन्त्रित मण्डल विदा हुआ।
ब्राह्मण क्षत्रिय औ वैश्य शूद्र, सब लोगोंका दल विदा हुआ॥

बड़ी शीघ्रताके सहित, बीत गये नौ मास।
प्रसवकालका आ गया, अवसर झटसे पास॥

नवमी तिथि चैत्र शुक्लकी थी, नक्षत्र पुनर्वसु कर्क लग्न।
पा प्रथम पुत्रको नृपति हुए, मनमें अपने आनन्द मग्न॥
नक्षत्र पुष्य था मीन लग्न, जब भरतलाल उत्पन्न हुए।
दूसरे पुत्रको पा करके, दशरथ अत्यन्त प्रसन्न हुए॥
आश्लेषा था नक्षत्र और, था कर्क लग्न अति सुखकारी।
लक्ष्मण, शत्रुघ्न भाइयोंकी, आ पहुँची है अब तो बारी॥
चाहा था नृपने एक पुत्र, बदलेमें जब ये चार हुए।
परिवार सहित राजा दशरथ, हर्षित अत्यन्त अपार हुए॥
लोगोंमें वह उत्साह भरा, आपेको अपने भूल गये।
सुधि खो दी अपनी सारी ही, अत्यन्त हर्षसे फूल गये॥
तब वित्त सचिवको आज्ञा दे, नृपने था इतना दान दिया।
लेनेवाले ले जा न सके, इतना अपार सामान दिया॥

बच्ची बच्चे सब नाच कूद, अति ही उत्साह मनाते हैं ।
गन्धर्व आदि गा मधुर गान, सबका ही मन बहलाते हैं ।।

स्थान स्थान पर फिर हुए, उत्सव आदि अनेक ।
हर्षित चित आनन्द है, आज व्यक्ति प्रत्येक ।।
फिर ग्यारहवें दिन हुआ, नाम करण संस्कार ।
गुरु वशिष्ठजीने रखा, नाम विचार विचार ।।

जो कौशल्याके नन्दन थे, श्रीराम नाम प्रख्यात किया ।
कैकई सुवनका भरत नाम, घोषित इसके पश्चात् किया ।।
दो लाल सुमित्रासे जो थे, गुरु उनके नाम सुनाते हैं ।
लक्ष्मण, शत्रुघ्न कहायेंगे, गुरुवर सबको समझाते हैं ।।
बातों बातोंमें आठ वर्षके, चारों राजकुमार हुए ।
चारोंके ही गुरुके द्वारा, यज्ञोपवीत संस्कार हुए ।।
अध्ययन किया चारोंने ही, गुरुवरके आश्रममें जाकर ।
सोलह वर्षोंमे निपुण हुए, नाना विधिकी शिक्षा पाकर ।।
श्रीराम और श्रीलक्ष्मणका था, बचपनसे ही प्यार रहा ।
शत्रुघ्न भरत इन दोनोंका, आपसमें प्रेम अपार रहा ।।
ये एक दूसरेको प्रसन्न, रखकर आनन्दित होते थे ।
ये एक दूसरेको हर्षित, करके ही हर्षित होते थे ।।
अनुचित बर्ताव नहीं करते, लड़नेका लेते नाम नहीं ।
आपसमे मन मुटाव कुछ हो, ऐसा करते थे काम नहीं ।।
माताएँ एक दूसरीके, पुत्रोंसे प्यार किया करतीं ।
चारोंमे रखतीं भेद नहीं, ऐसा व्यवहार किया करतीं ।।

।। बच्चोंके नामसे मातापिताके विचारोंका पता लग जाता है ।।

चारों ही भ्राता सबकी ही, आज्ञाका पालन करते थे ।
डरते न किसीसे भी पर हाँ, नित बुरे कर्मसे डरते थे ॥

इस प्रकार आनन्दमें, बीते सोलह वर्ष ।
दिन प्रति दिन करते हुए, नित अपना उत्कर्ष ॥
वेद और वेदाङ्गमें, पारङ्गत सब भ्रात ।
हुए शस्त्र अस्त्रादिमें, भी थे जग विख्यात ॥
जमा हुआ था एक दिन, दशरथका दरबार ।
द्वार पालने आ कहा, वाक्य सहित विस्तार ॥

श्रीविश्वामित्र नामधारी, ऋषि तेज निधान पधारे हैं ।
आज्ञा हो तो मैं आने दूँ, जो खड़े हुए प्रभु द्वारे हैं ॥
इतना सुनते ही दशरथने, अपना सिंहासन छोड़ दिया ।
जा स्वयं गाधिसुतके आगे, शिर झुका करोंको जोड़ दिया ॥
बोले, हैं मेरे धन्य भाग्य, श्रीमान् आपने दर्श दिया ।
यह कह कर उनके चरणोंको, राजा दशरथने स्पर्श किया ॥
मुनि बोले राजन्! यह कहिये, सारा परिवार कुशल तो है ?
यज्ञादि कर्म सब करते हो ? वशमें सब वैरी दल तो है ?
फिर गुरुवशिष्ठ, वामादिकसे, मिल यथा योग्य सत्कार किया ।
जिससे करना था उस प्रकार, सब लोगोंसे व्यवहार किया ॥
बोले दशरथ हे महाराज ! कहिये क्या सेवा की जाये ।
जो भी इच्छा होवे भगवन्! सेवकको आज्ञा दी जाये ॥
मुनि बोले हे नर-श्रेष्ठ ! सुनो, मैंने जो यज्ञ रचाया है ।
दीक्षा धारण की है जिसमे, कुछ विघ्न वहाँ पर आया है ॥

॥ श्रेष्ठतम कर्मोंको ही यज्ञ कहते हैं ॥

मारीच, सुबाहु नामधारी, दो राक्षस अतिबलशाली हैं।
नित मांस रुधिरकी वर्षा कर, बाधाएँ उसमें डाली हैं॥
हो निरुत्साह अपने मनमें, बस यहाँ चला आया हूँ मैं।
श्रीराम काम यह साधेंगे, इस योग्य इन्हें पाया हूँ मैं॥
इस सिंह सदृश नरके आगे, कोई न ठहरने पायेगा।
इससे जो लड़ने आयेगा, वह मरा हुआ दिखलायेगा॥
दश रात्रि यज्ञकी रक्षामें, श्रीरामचन्द्रको दे दीजे॥
कर पुत्र स्नेहका त्याग नृपति! अक्षय इस यशको ले लीजे॥

ज्यों ही वचनोंको सुने, निज मनके विपरीत।
दशरथ अति दुःखित हुए, और हुए भयभीत॥
क्षणभरको मूर्च्छित हुए, फिर जब खोले नैन।
मुनिवर विश्वामित्रसे, बोले ऐसे वैन॥

हयदल, गजदल, रथदल, पयदल, ले दशरथ प्रस्तुत चलनेको।
सेनापति हैं समर्थ मेरे, दुष्टोंके दलको दलनेको॥
हैं राम अभी कोमल बालक, इससे ले जाना उचित नहीं।
हैं योग्य नहीं रण करनेके, इससे लड़वाना उचित नहीं॥
अत्यन्त कठिनतासे मैंने, वृद्धावस्थाके आने पर।
पाया है सुख सन्तानोंका, अन्तिम घड़ियाँ आ जाने पर॥
जिन असुरोंके दलके बलसे, भयभीत सभी योद्धा गण हैं।
उन पर विजयी यह राम बने, संशय मुझको यह भगवन्! है॥
मुनि बोले हे नरश्रेष्ठ! सुनो, परिचय मुझसे उन असुरोंका।
लङ्काका जो पति रावण है, वैरी है वह ऋषि मुनियोंका॥

उसके द्वारा प्रेरित होकर, निशिचर सुबाहु मारीच आदि ।
नित विघ्न डालते रहते हैं, यज्ञोंके जो हैं महाव्याधि ॥
रावणका नाम सुना नृपने, फिर तो मनमें अति घबराकर ।
सामर्थ्यहीन बन बोले यों, मुनिके आगे अति दुखपाकर ॥
ऋषिराज! क्षमा करिये मुझको, सुत देने मैं तैयार नहीं ।
आज्ञा हो मैं चल सकता हूँ, इसमे हैं अस्वीकार नहीं ॥

राजा दशरथके सुने, ऐसे वचन विरुद्ध ।
मुनिवर विश्वामित्र भी, हुए उसी क्षण क्रुद्ध ॥

बोले, दे करके वचन मुझे, अपना वह वचन तोड़ते हो?
तुम सत्यपाल क्षत्रिय होकर, मुँह क्यों इसभाँति मोड़ते हो??
मैं लौट चला जाऊँगा पर, यह बात तुम्हारे योग्य नहीं ।
कुछ तो विचार करिये नृपवर! यह बात तुम्हारे योग्य नहीं ॥
इतनेमें बोले गुरु वशिष्ठ, राजन्! यह तुम क्या करते हो?
हे वीर! प्रतिज्ञासे अपनी, हैं खेद इसतरह टरते हो??
जो व्यक्ति प्रतिज्ञा करके फिर, पूरी करने फिर जाता है ।
हो जाते उसके सुफल नष्ट, वह अक्षय अपयश पाता है ॥
हैं गाधिसूनु ये स्वयं वीर, शस्त्रास्त्र सभी जानते हैं ।
अच्छे अच्छे योद्धा इनका, लोहा जग बीच मानते हैं ॥
ये नहीं चाहते हैं लड़ना, इसलिये कि, दीक्षा ले ली है ।
लेने आये दशरथसुतको, किसलिये? कि दीक्षा ले ली है ॥
निश्चय श्रीरामचन्द्रको ये, शस्त्रास्त्र सभी सिखलायेंगे ।
कुछ सीखे हुए प्रथम ही हैं, फिर चार चान्द लग जायेंगे ॥

गुरुवरके यों, समझाने पर, प्रस्ताव तुरत स्वीकार हुआ।
कुछ धैर्य हुआ, सन्तोष हुआ, दशरथका मन तैयार हुआ॥
राघवके साथ लक्ष्मण भी, तैयार हो गये जानेको।
दोनों बालक आगे आये, आदेश पिताका पानेको॥

दोनों बालक शिर झुका सामने आए।
दशरथ नृपने तब ऐसे वचन सुनाए॥
हे लाल! सङ्ग गुरुवरके जाओ तुम।
दें जो भी आदेश, उन्हें मत कभी भुलाओ तुम॥

आदर गुरुका जो शिष्य सदा करते हैं।
गुरुवचनों पर जो जीते हैं मरते हैं॥
हे लाल! वही बनते हैं व्यक्ति महान्।
इसीलिये आज्ञा पालनका रखना मनमे ध्यान॥

अति उत्तम यों उपदेश दिया दोनोंको।
नृपने शिर सूँघा, विदा किया दोनोंको॥
सानन्द सजाया उनको वस्त्रोंसे।
चले साथ गुरुके, सज्जित हो अस्त्रों, शस्त्रोंसे॥

पुत्रोंको आदेश दे, इस प्रकार महिपाल।
तीनोंको सानन्द फिर, विदा किया तत्काल॥

दोनों शिष्योंको साथ लिये, निश्चित सुस्थल पर जाते हैं।
अतिबला, बला विद्याओंको, मुनिवर इनको सिखलाते हैं॥
मुनि बोले, इन विद्याओंसे, तू ऐसा शक्तिवान् होगा।
बलमे न कहीं योद्धा कोई, जगमे तेरे समान होगा॥

गुरुवरके फिर कथनानुसार, विद्याओंका अध्ययन किया।
हो गई रात्रि तब तीनोंने, कुशकी शय्या पर शयन किया॥
नियमानुसार तीनोंने ही सन्ध्या, हवनादिक कर्म किया॥
जब प्रात हुआ तब गुरुवरने, दोनों शिष्योंको जगा दिया॥
सुसमय पर निकल पड़े तीनों, फिर उसी स्थान पर आते हैं।
"ताटका" जहाँ आया करती, वह स्थान इन्हें बतलाते हैं॥
इतनेमे विकट रूप वाली, राक्षसी वहाँ पर आती है।
अस्थियाँ, रुधिर, कङ्कर, पत्थर, कर घोर शब्द बरसाती है॥
नारी पर शस्त्र चलानेमे, सङ्कोच किया श्री रघुवरने।
"नारी अवध्य है" इसीलिये, पड़ गये शोचमे वध करने॥
मुनि बोले, नारीवधके इस, संशयको दूर करो रघुवर!
वध कर इस महाराक्षसीका, जगका भय आज हरो रघुवर!
अबलाओंका वध करनेमे, निश्चय डरना है बुरा नहीं।
पर ऐसी दुष्टाओंका वध, समझो, करना है बुरा नहीं॥
उसको इस जगसे विदा करो, जो करे, हानियाँ जग भरकी।
चाहिये वीरको किया करे, रक्षा निर्बल नारी- नरकी॥
जो आततायि हैं उनका वध, करनेसे होता पाप नहीं।
इनका वध किये विना जगका, मिट पाता है सन्ताप नहीं॥
रघुवर बोले गुरु आज्ञाका, मुझको तो करना पालन है।
हो निशंकोच, निर्भयतासे, कर दिया शस्त्र सञ्चालन है॥
शस्त्रोंका होते ही प्रहार, उस दुष्टाका प्राणान्त हुआ।
उस प्रथम विजयसे, "रघुवरकी" निर्भय स्वतन्त्र वह प्रान्त हुआ॥

गुरु विश्वामित्र प्रसन्न हुए, मन ही मन आशीर्वाद दिया।
"चिरजीवी हों" दोनों भ्राता, ऐसा यह प्रेम प्रसाद दिया ॥

मुनिवर यों कहने लगे, दुष्टदलन हे राम !
आज रात्रिमे करेंगे, सभी यहाँ विश्राम ॥
मठ जाकर मुनिने दिये, आयुध विविध प्रकार।
सिखलाये करके इन्हे, शस्त्र स्वयं व्यवहार ॥
मुनिके द्वारा हो गया, पुनः यज्ञ आरम्भ ।
स्वाहाकी ध्वनि भर उठी, छू दश दिशिके स्तम्भ ॥
पाँच रात्रि तक तो नहीं, आया कोई शूर।
किन्तु छठे दिन "असुरदल" आ पहुँचा भरपूर ॥

असुरोंके द्वारा वेदी पर, पत्थर आना आरम्भ हुए ।
अस्थियाँ रुधिर आदिक सब ही, बस बरसाना आरम्भ हुए ॥
असुरोंको सावधान करके, रघुवीर तीर बरसाते हैं ।
गाजर मूलीकी भाँति उन्हे, धरतीके बीच गिराते हैं ॥
फिर मानवास्त्रसे सौ योजनके, पार पहुँच मारीच गिरा।
आग्नेय अस्त्रसे फिर सुबाहु, मरकर धरतीके बीच गिरा ॥
वायव्य अस्त्रके द्वारा सब, असुरोंको मार गिराया है।
सब ही नर और नारियोंमे, हर्षोल्लास अति छाया है ॥
इस भाँति सफलता पाने पर, हो गये मुग्ध वे गाधितनय।
आश्रममे एवं जनतामे, गूँजी "श्रीरामचन्द्रकी जय"

रामका हुआ तुमुल जय घोष ।
मानव ही क्या ? जीवमात्रमे हुआ महासन्तोष ॥

जलचर, थलचर, नभचर सबका, मिटा आज सब क्लेश।
त्राण मिला इन असुरोंसे अब, सुखमय हुआ प्रदेश ॥
मानवोंमे भर आया जोश ॥ रामका० ॥

दानवता पर मानवताकी, विजय हुई है आज।
सुखका अनुभव हुआ और है, हर्षित सकल समाज ॥
कि जैसे मिला विश्वका कोश ॥ रामका० ॥

रावणने निज असुरों द्वारा, चलना चाहा चाल।
सूझबुझके द्वारा मुनिने, नष्ट किया जञ्जाल ॥
मिट गया असुरजनोंका रोष ॥ रामका० ॥

कुछ दिन आश्रममे रहे, फिर इसके पश्चात्।
"मिथिलापुरको" चलपड़े, गुरु शिष्योंके साथ ॥

पहुँचे फिर उस निर्जन वनमे, परित्यक्ता जहाँ अहिल्या थी।
पाषाण विनिर्मित नारीकी, अतिदिव्यमूर्ति ही वह या थी ॥
जिसका वृतान्त पूर्वमे ही, दोनों ही भ्रात सुन चुके थे।
पति-द्वारा कैसे? त्यक्त हुई, विस्तृत यह बात सुनचुके थे ॥
दोनोंने उस ऋषिपत्नीके, जा निकट हर्षसे दर्श किया।
श्रद्धा पूर्वक करके प्रणाम, चरणोंको झुककर स्पर्श किया ॥
फिर यत्न पूर्वक उसको वे, पतिलोक तुरत पहुँचाते हैं।
कर इस प्रकार उद्धार पुनः, तीनों ही आगे जाते हैं ॥
फिर यज्ञक्षेत्रमे जा पहुँचे, श्री जनक राजके यहाँ सुनो।
"मिथिलापुरमे" जो महायज्ञ, होनेवाला था वहाँ सुनो ॥

॥ पापका सच्चा प्रायश्चित्त यही है कि उसे पुनः न करें ॥

श्रीशतानन्दके साथ जनक, इनके स्वागतको आते हैं।
आदर एवं सम्मान सहित, ऋषिको यों वचन सुनाते हैं ॥
ऋषिवर! मेरे हैं धन्य भाग्य, सचमुच मैं आज कृतार्थ हुआ।
मुनिवरके आज आगमनसे, गुम्फित परार्थमे स्वार्थ हुआ ॥
ये वीर सिंहके सदृश और हैं देव तुल्य बालक किनके।
अश्विनीकुमारोंके समान, बलशाली हैं शरीर जिनके ॥
शस्त्रोंको धारण किये हुए, किनके हैं ये सुकुमार कहें ?
यदि कष्ट न अनुभव करें आप, तो बात सहित विस्तार कहें?
यह सुनकर मुनिने दोनोंका, विस्तृत परिचय दे डाला है।
सन्तोष जनकको हुआ, सुनो, आगे क्या? होनेवाला है ॥

बोले विश्वामित्र यों, हे राजन् मिथिलेश !
सुना हमे दो धनुषका, तुम वृत्तान्त विशेष ॥

उत्तरमे कहने लगे जनक, जो श्रेष्ठ धनुष शङ्करका है।
देवों पर होकरके प्रसन्न, जो दिया हुआ प्रभुवरका है ॥
देवोंके द्वारा धरा हुआ, है मेरे पास धरोहरमे।
प्रत्यक्ष प्रकटमे बात मुने! यह है विख्यात जगत भरमे ॥
मेरे घरमे "सीता" नामक, कन्या है, इसको पानेको।
इच्छायें की राजाओंने, वे अपना व्याह रचानेको ॥
तब मैंने उनसे कहा कि, जो इस महाधनुषको तानेगा।
"सीताको" देगा उसे जनक, जामाता उसको मानेगा ॥
कइयों राजाओंने आकर, बलपूर्वक यत्न किया फिर भी।
चढ़ना तो दूर रहा उनसे, पर शक्ति उठानेकी न हुई ॥

:। कन्याके विवाहकी चिन्ता राजाओंको भी उद्विग्न कर देती है ॥

तब मैने उन राजाओंको, लज्जित करके मारे तानें ।
क्रोधित हो उन राजाओंने, आक्रमण कर दिये मनमाने ॥
मैने सहायता अन्योंकी, लेकर उन सबको भगा दिया ।
ईश्वरने बेड़ा पार मुने! इस भाँति कृपा कर लगा दिया ॥
श्री विश्वामित्र लगे कहने, वह धनुष हमे दिखलाओ तो ।
कैसा है महाधनुष? ऐसा?? इस समय यहाँ मँगवाओ तो ॥
मुनिकी आज्ञा पा, जनक राज, वह धनुष तुरत मँगवाते हैं ।
श्रीराम धनुषको देख पुनः, गुरुकी आज्ञाको पाते हैं ॥
उस जन समूहके आगे झट, साधारणतया उठाते हैं ।
जो भी दर्शक थे, वे सब ही, आश्चर्य चकित रह जाते हैं ॥
लीला पूर्वक यों धनुष उठा, धीरेसे उसको मोड़ दिया ।
देखते देखते राघवनें, उस महाधनुषको तोड़ दिया ॥
परिवार हो उठा हर्षमग्न, मिथिलापतिका प्रण पूर्ण हुआ ।
उन मदोन्मत्त राजाओंका, अतिमान, गर्व सब चूर्ण हुआ ॥

जनकका मिटा मानसिक क्लेश .

मन अनुकूल मिला "जामाता" पूर्ण हुआ उद्देश । जनक० ॥
चिन्ता थी मिल जाय योग्य वर, गुण औ रूप समान ।
अनायास यों घर बैठे ही, भेज दिया भगवान ॥
आज तो चिन्ता रही न शेष । जनक० ॥
मन इच्छित जब पूर्ण हो गई, जनक राजकी चाह ।
छाया है पूरे कुटुम्बमे, अमित गुणा उत्साह ॥
कृपा की दीनदयालु दिनेश ॥ जनक० ॥

राजा हो या प्रजा और हो, निर्धन या धनवान्।
कन्याकी चिन्ता रहती है, सबको एक समान ॥
ढूँढना पड़ता देश विदेश ॥ जनक० ॥

मुनिकी आज्ञा ले तुरत, निज दूतोंके हाथ।
समाचार अवधेशको, भेजा सुखके साथ ॥
अवध नृपतिनें जब सुना, समाचार सानन्द।
लगा उछलने बल्लियों, उनका मन मकरन्द ॥

दूतोंको करके विदा पुनः, मन्त्री सुमन्तको बुलवाया।
सम्मति "श्रीगुरुवशिष्ठकी" ले, सारी सेनाको सजवाया ॥
हाथी, घोड़े रथमे सज कर, पुरजन सानन्द जा रहे हैं।
तो, कइयों पैदल ही चल कर, मनमे आनन्द पा रहे हैं ॥
दिन रात चार दिन चलने पर, पहुँचे जाकर मिथलापुरमे।
आगे आकर मिल गये जनक, छा गया हर्ष जन उर उरमे ॥
आनन्दित हो दोनों समधी, अत्यन्त हर्षसे मिलते हैं।
कलियोंकी भाँति हृदय उनके, सत्वर फूलों सम खिलते हैं ॥
तदनन्तर सबको यथा स्थान, सुखसे ठहराया जाता है।
कर यथा-योग्य आतिथ्य, रात्रिमे उन्हें सुलाया जाता है ॥
उठ प्रातकाल मिथिलेश्वरने, कर ली जब पूरी तैयारी।
आमन्त्रित कर नृप दशरथको, ले आये फिर बरात सारी ॥
उस सजे सजाये मण्डपमे, सब यथा स्थान थे बैठ गये।
हो गये चकित सब बाराती, उपकरण देख कर नये नये ॥

यों कहा जनकने दशरथसे भगवन्! यह विनय हमारी है।
ऊर्मिला लक्ष्मणको वरलें, यह हमने बात विचारी है॥
तब गुरु वशिष्टने कहा, भरत, शत्रुघ्न यहीं पर व्याहेंगे।
लघु भ्राताकी कन्याओंको, व्याहना यहीं पर चाहेंगे॥
जब उभय पक्षके लोगोंने, प्रस्ताव सुखद स्वीकार किया।
फिर थी विलम्बकी बात नहीं, आरम्भ मङ्गलाचार किया॥
सोनेसे मढ़ी सींगवाली, फिर उत्तम चार लाख गायें।
दीं चारों राजकुमारोंको, जो बैठे थे दाँयें बाँयें॥
विप्रोंको दान दक्षिणा दे, नृपने हार्दिक सम्मान किया।
आमन्त्रित जो भी आये, उन, सबको सम्मान प्रदान किया॥

परिणय मण्डपमे मुदित, विधिपूर्वक सब कार्य।
लगे कराने शान्तिसे, दोनों ही आचार्य॥

चारो ही राजकुमारोंने उन कन्याओंको ग्रहण किया।
आठोंने प्रतिज्ञप्त होकर, आदेश आर्यका मान लिया॥
आदेश आपके जो भी हैं, जीवन पर्यन्त निभायेंगे।
पति-पत्नीका कर्तव्य पूर्ण, करके निश्चय दिखलायेंगें॥
अक्षत द्वारा सब जनताने, आठोंको आशीर्वाद दिया।
आगन्तुक सभी व्यक्तियोंने, शुभ वचन सहित सम्मान किया॥
थे उभय पक्षके लोग जमा, वे सभी हर्षको प्राप्त हुए।
मंगलवाद्योंके सहित वहाँके, सारे कार्य समाप्त हुए॥
श्रीविश्वामित्र विदा लेकर, चल दिये वहाँसे उठ करके।
जाते जाते उन शिष्योंको, प्रमुदित हो देखा जी भरके॥

॥ दाम्पत्य जीवनकी सफलता उसे जीवन पर्य्यन्त निभानेमे है॥

श्रीविश्वामित्र ऋषीश्वरको, सम्मान सहित कर दिया विदा।
मिथिलेश्वरने अवधेश्वरका, सत्कार किया फिर किया विदा

सेनाके सहित अयोध्यापति, मिथिलापुरसे प्रस्थान हुए।
दोनों ही समधी आपसमें, मिल ब्रह्मानन्द समान हुए।।

कुछ दूर निकल जानेपर फिर, हो गया उपद्रव एक खड़ा।
छा गया हर्षके बाद शोक, वह महाविघ्न था आन पड़ा।।

था एक धनुर्धर महाकाय, शिर जटाजूटसे शोभित था।
जिसके दोनों थे नेत्र लाल, अति कुपित भावसे प्रेरित था॥

प्रज्ज्वलित अग्निके सदृश तेज, मण्डित वह वीर दिखाता था।
जिस ओर चले जाते थे ये, वह उसी ओरको आता था।।

तब वशिष्ठादि ऋषि मुनि मिलकर, बोले ऐसे धीमे स्वरमे।
प्रतिशोध पिताका लेने क्या, आये हैं लिये परशु करमें?।

क्षत्रिय कुलका क्या सर्वनाश, करनेको फिर ये आए हैं?
यह सोच सभी चिन्तित व्याकुल, आतुर भयसे घबराए हैं।।

इतनेमें बोले परशुराम, हे राम! सुना है यह मैने।
शिवके उस महाशरासनको, कर खण्ड खण्ड तोड़ा तैंने।

अत्यन्त पराक्रम दिखलाकर, जो सुयश जगतमें पाया है।
इसलिए दूसरा धनुष लिए, यह परशुराम अब आया है।।

जमदग्नि ऋषीश्वरका यह धनु, ले इसको अभी चढ़ा दे तू।
अथवा मेरे सम्मुख रणमे, अपना विक्रम दिखला दे तू।।

भयभीत दीन हो दशरथ तब, शिर झुका जोड़ कर यों बोले।
है किसमें इतनी शक्ति देव? सामने आपके मुँह खोले।।

।। सत्य और न्यायकी रक्षा शक्तिशाली व्यक्ति ही कर सकता है।।

आपने प्रतिज्ञा करली है, हम शस्त्र न कभी चलायेंगे।
बालकको कर दें क्षमा देव! क्या इस पर शस्त्र उठायेंगें ?

बातें करते हैं सभी लोग, भयके मारे धीमे धीमे।
ईश्वर जाने अब क्या होगा ?, घबराहट है सबके जीमें॥

रामचन्द्रने यों कहा, हो करके गम्भीर।
ध्यान लगा मेरा विनय, सुनिये हे रणवीर!!

योद्धा हो किन्तु विप्र हो तुम, इसलिए नहीं हम मारेंगे।
हो पूजनीय तुम सबके ही, हम तो यह बात विचारेंगे॥

कोई क्षत्रिय आगे आकर, देता जो हमें चुनौती तो।
हम भी कुछ उसे समझ लेते, इच्छा यदि उसकी होती तो॥

यों कह, आगे बढ़ रघुवरने, श्री परशुरामसे धनुष लिया।
देखते देखते सारोंके उस, महाधनुषको चढ़ा दिया॥

श्री परशुराम फिर बोले यों, तुमने यह धनुष चढाया है।
अब तो महेन्द्र गिरि पर हमने, जाना निश्चय ठहराया है॥

श्री परशुरामकी पूजा कर, श्रीरामचन्द्र हर्षाते हैं।
गुरुवर वशिष्ठ, राजा दशरथ, एवं सब जन सुख पाते हैं॥

सन्तोष हुआ, आनन्द हुआ, जो आई थी वह बला टली।
अब तो बरातमे हर्ष सहित, हो गई एक दम चला-चली॥

बढ़ चले सभी चलते चलते, शुभ धाम अयोध्या आते हैं।
पुरवासी स्वागत कर सबका, सुख पूर्वक मङ्गल गाते हैं॥

कौशल्या आदि रानियोंने, सुख पाया बहुओंको पाकर।
हर्षित हो किया प्रणाम तभी, चारो भ्राताओंने जाकर॥

स्नानादिकसे हो निवृत पुनः, सन्ध्यादिक हवन किया सबने।
विप्रोंको खुले हृदयसे धन, एवं वस्त्रादि दिया सबने ॥
विजयी श्रीरामचन्द्रका यश, सब ही पुरवासी गाते हैं।
मन-मोद भरे अतिहर्षित हो, अति गर्वित हो सुखपाते हैं ॥
कहते हैं सब ही अहोभाग्य, सचमुच है आज अयोध्याका।
शिव धनुष तोड़ जो सीताको, जीता युवराज अयोध्याका ॥
आग्रह करने पर भरतलाल, मामाके सङ्ग ननिहाल गए।
श्रीभरतलालके साथ अनुज, उनके रिपुसूदनलाल गए॥

ब्रह्मचर्य व्रत पूर्ण कर, पा विद्या भरपूर।
विधिवत् स्नातक बन गए, बलमे अति ही शूर ॥

षड् अङ्ग सहित वेदोंको पढ़, लग गए नियमके पालनमे।
हो धनुर्वेदमे पूर्ण, पूर्ण बन, बाणोंके सञ्चालनमे ॥
सब धर्म अर्थका तत्वज्ञान, कर लिया प्राप्त निज जीवनमे।
नित समयोचित आचार और व्यवहार समझ जाते मनमे ॥
प्रतिभाशाली मृदुतर स्वभाव, गम्भीर हास्य मुख था जिनका।
नित मात पिताकी आज्ञा पर, चलना ही सब सुख था जिनका॥
वे व्यर्थ न करते शोक कभी, वे व्यर्थ मनाते हर्ष नहीं।
वे व्यर्थ न लाते रोष कभी, औ व्यर्थ कभी सङ्घर्ष नहीं ॥
जिस भाँति पुष्पसे मधुमक्खी, मधुका सञ्चय कर लेतीहैं
जिस भाँति सूर्य किरणें जलका, समझो शोषण करदेतींहैं
बस इसी भाँति बिन पता चले, 'कर' राम लिया करते सबसे
सबको ही सुखपूर्वक रखकर, सब काम लिया करते सबसे॥

सब वयोवृद्ध विद्वानोंका, सम्मान पितासम करते थे।
क्रोधायमान हो जायँ नहीं, बस इसी बातसे डरते थे॥
जो समवयस्क थे उन्हें राम, थे रहे समझते मित्र सदा।
देते न किसीको कष्ट कभी, रख अपने भाव पवित्र सदा॥
बच्चोंसे बच्चोंके सम ही, बन बच्चे, प्यार किया करते।
समता ममताके साथ सदा, सबका सत्कार किया करते॥
अपने तीनों भ्राताओंको, रखते थे प्राणोंसे बढ़कर।
उन सबसे प्यार किया करते, मानो सन्तानोंसे बढ़कर॥
मन, कर्म वचनसे पर नारीको, माना मातृ समान सदा।
आया अवसर ऐसा जब भी, इस व्रतका रक्खा ध्यान सदा।
कारण वश क्रोध कहीं करते? तो फिर न कभी रुक पाते थे॥
अच्छे अच्छे योद्धाओंके, फिर तो छक्के छुट जाते थे।
अर्थात् क्षमा थी पृथ्वी सम, सहना वह सब सह लेते थे।
कालाग्नि सदृश था क्रोध, दण्ड देना उसको तो देते थे॥
इस भाँति सुयोग्य पुत्रको पा, दशरथ न कहो क्यों? गर्वित हों?
सब कुछ अपने सुतको देने, क्यों नहीं हृदयसे हर्षित हों??

नृपने सोचा अब तो मेरी, वृद्धावस्था भी जाती है।
हो गई शिथिल इन्द्रियाँ सब ही, मृत्यु निकटतम दिखलाती है॥
पल पल छिन छिन दिन दिन गिनते, जीवनके दिन बीत रहे हैं।
हार हुई जाती है फिर भी, समझ रहे हम जीत रहे हैं॥
इतनी रखकर समझ फेर भी, तृष्णा छूट नहीं पाती है।
नृपने सोचा अब तो मेरी, वृद्धावस्था भी जाती है॥

अब तो सम्हल सम्हल आगे चल, फँस मत तू दशरथ दल दलमें ।
तुझको रहा चाहिये अब तो, कमलपत्र रहता ज्यों जलमें ।।
चक्करमें आना मत, तृष्णा, रात दिवस यह बहकाती है ।
नृपने सोचा अब तो मेरी, वृद्धावस्था भी जाती है ।।
राज काज युवराज रामको, दे देकर निवृत्त हो जा तू ।
कर सुकर्म जीवन है तब तक, प्रभुके बस आश्रित हो जा तू ।।
अन्तरात्माकी सम्मतिको, मान तुझे जो मन भाती है ।
नृपने सोचा अब तो मेरी, वृद्धावस्था भी जाती है ।।

यही सोचकर एक दिन, दशरथने तत्काल ।
करवानेका कर लिया, निश्चय सभा विशाल ।।

बुलवाकर सभी मन्त्रियोंको, कर परामर्श फिर राजाने ।
सब संस्थानोंमे आमन्त्रण, भेजे सहर्ष फिर राजाने ।।
हो गये इकट्ठे सब नृपाल, सब व्यक्ति प्रजाके आते हैं ।
पर जनक और केकय नरेश, दो नहीं बुलाये जाते हैं ।।
इन सबको सम्बोधित करके, सिंहासनसे नृप बोले यों ।
जन जनकी सम्मति लेनेको, अपने विचार फिर खोले यों ।।
यह पुत्र तुम्हारे रामचन्द्र, राजा बनकर अब राज करें ।
नियमानुसार सिंहासनपर, बैठें औ सारे काज करें ।
हैं सर्वगुणोंसे युक्त राम, यह बात आप सब जान रहे ।
यह बात आजसे नहीं आप सब, वर्षोंसे पहचान रहे ।।
प्रस्ताव रखा जो यदि उसका, सब लोग समर्थन करते हैं ।
अर्थात् सर्वसम्मति द्वारा, इसका अनुमोदन करते हैं ।।

तो निर्विरोध स्वीकार हमें हैं, कह कर आज्ञा दी जाएँ।
राजाकी जो सेवाएँ हैं, वे रामचन्द्रसे ली जाएँ॥

धृति, विजय, सुराष्ट्र, राष्ट्र वर्धन, पाँचवें वीर मन्त्री जयन्त।
फिर धर्मपाल, एवं अकोप, आठवें प्रमुख मन्त्री सुमन्त॥

इन आठोंने सम्मति अपनी की, प्रकट प्रजाके आगे जब।
फिर हर्षित होकर सभी प्रजा, अपनी अनुमति दे डाली तब॥

इस भाँति लोग फिर बोल उठे, अति शीघ्र नृपति! यह काम बने।
हम कहते बात हृदयकी हैं, हम सबके राजा राम बने॥

राजा हो जहाँ चरित्रवान्, सब प्रजा वहाँ सुख पाती हैं।
अत्याचारी शासक द्वारा, सब प्रजा सताई जाती हैं॥

सभा विसर्जन हो गई, फिर इसके पश्चात्।
श्रोताओ! सुनिये सभी, अब आगेकी बात॥

बुला मन्त्रियोंको तुरत, बोले अवधनरेश।
हो जाये आरम्भ अब, कार्य विशेष विशेष॥

कल है नक्षत्र पुष्य इससे, कल का ही दिन अति उत्तम है।
सब अपना अपना कार्य करें, आज्ञा जो जो देते हम हैं॥

मन्त्री सुमन्तके द्वारा फिर, श्री रामचन्द्रको बुलवाया।
विस्तार सहित जो भी विचार, सोचा था उनको समझाया।

हैं भरतलाल घर मामाके, इस बीच काम सब हो जाएँ।
कल ही सब कार्य पूर्ण होवे, इसमें न देर होने पाएँ॥

हे राम! तुम्हारे साथ भरतने, रखा कभी भी द्वेष नहीं।
अब तक तुम दोनोंके मनमें, आया विभेदका लेश नहीं॥

फिर भी सम्भव है कारणवश, मानव विचलित हो जाता है।
जो आज भला कल वही बुरा, मानवका चित हो जाता है ।।
इसलिये शीघ्रता सहित अभी, जा तैयारी करलो बेटा !
जो बात सामने रक्खी है, उसका रहस्य समझो बेटा ! !
जब पिता पाससे होकर वे, पहुँचे निज माताके घरमें।
देखा वे जगकी सुध खोकर, थी ध्यान लगाये ईश्वरमे ।।
थी वहाँ सुमित्रा औ सीता, लक्ष्मण भी वहाँ उपस्थित थे।
जब सुना रामसे विषय सभी, हो गये और भी पुलकित थे ।।
लक्ष्मणसे बोले रामचन्द्र, सङ्ग मेरे तुम भी राज करो।
कल ही है राजतिलक मेरा, इसलिए शीघ्रता आज करो ।।
सब गए स्थान अपने अपने, सीताके सङ्ग श्रीराम चले।
तैयारी जो भी करनी थी, दोनों वह करने काम चले ।।
श्रीसीता राम उभयने ही, सँयम पूर्वक उपवास किया।
अनुरूप कार्य कर लिया सभी, था गुरुने जो आदेश दिया ।।

सायं सन्ध्या प्रार्थना, हवनादिक कर राम।
दोनोंने जा रात्रिको, किया सुखद विश्राम।
उठकर प्रातः काल फिर, हवनादिक कर जाप।
तैयारीमें लग गए, सीताके सङ्ग आप।

घरमें, गलियोंमे सड़कोंमे, अब तो हो रही सफाई है।
सब घर भी और दुकानें भी, सारी जा रही सजाई है ।।
नर नारी बाल, बालिकाएँ, वस्त्राभूषण धारण करके।
उत्साहित आनन्दित गर्वित, हो रहे आज हैं जी भरके ।।

यह दृश्य भवनके ऊपरसे, जब सभी मन्थराने देखा ।
हो गई चकित अपने मनमे, कुछ अनहोनीको था लेखा ॥
धाईसे कहा मन्थराने, क्यों ऐसा आज हो रहा है ?
प्रत्येक व्यक्ति आनन्दित हो, सुध, बुध क्यों आज खो रहा है?
क्या कार्य करेंगे नृपति आज, क्यों जनता इतनी आई है ?
कुछ नहीं समझमें आती, क्यों, इतनी प्रसन्नता छाई है ?
धाईने सारी बात उसे, विस्तार सहित जब समझाई ।
वह रुक न सकी क्षणभर ऊपर, कैकयी पास चटपट आई ॥
क्रोधायमान होकर बोली, कैकयी! तुम्हारा अनहित है ॥
तुम कान खोल करके सुन लो, हो रहा रङ्ग परिवर्तित है ॥
कौशल्याकी बातोंमें आ, राजाने की मनमानी है ।
जड़ ही उखाड़नेकी जैसे, तेरी अब मनमे ठानी है ॥
सौभाग्यवती हूँ समझ अरी! तुम मदमे चूर हो रही हो ।
मै कहती हूँ कैकयी! सुनो, तुम सुखसे दूर हो रही हो ॥

सुनी मन्थराकी कही, पूरी पूरी बात ।
नम्र भावसे कैकयी, बोली तत् पश्चात् ॥

खो होश, रोषमे आई यों, क्यों? कारण कुछ बतलाओ तो ।
कहनेका क्या है तात्पर्य? हेप्रिये! मुझे समझाओ तो ॥
यों कभी नहीं सो आज अरी! क्यों इस प्रकारसे रूठी हो ?
क्या अघटित घटना घटी आज,तुम किस विचारसे रूठी हो??
अभिनयके साथ मन्थराने, यों कहा नहीं क्या ध्यान तुम्हें?
होंगे अब राजा "रामचन्द्र", क्या नहीं तनिक भी ज्ञान तुम्हें??

यह समाचार सुन अनायास, हो दुखित यहाँ पर आई हूँ ।
समझाती हूँ लो समझ आज, जो बात समझ में पाई हूँ ।।
राजा दशरथका मनोभाव, तुम नहीं समझने पाई हो ।
चक्करमे रहकर अबतक तुम, राजाजीके गुण गाई हो ।।
मीठी मीठी बातोंमे रख, नरपति तुमसे छल करते हैं ।
ऊपरसे प्रेम बता तुमको, घर कौशल्याका भरते हैं ।।
राज्यासन रामचन्द्रको अब, नृप दे देनेको प्रस्तुत हैं ।
हो रहे मङ्गलाचार यहाँ, मामाके घर तेरे सुत हैं ।।
कैकई कैकई! बतलाओ ? क्या छुपा है इसमें भेद नहीं ।।
इस अवसर पर भी भरत न हों,इसका राजा को खेद नहीं??
सुन बात कैकई मुसकाई, वह नहीं तनिक भी रुष्ट हुई ।
कर कान मन्थराकी बातें, वह और अधिक सन्तुष्ट हुई ।।
बहुमूल्य एक सुन्दर भूषण, देकर उसका सम्मान किया ।
बोली तू माँग और कुछ भी, ले यह तो अभी प्रदान किया ।।
इस राजतिलकके अवसर पर, मन्थरे! सभी मिल हर्ष करो ।
उलटी बातें मनमे बिचार, मत व्यर्थ खड़ा सङ्घर्ष करो ।।
भूषणको फेक मन्थराने, यों कहा कि बुद्धिहीन हो तुम ।
हो राजनीतिसे शून्य तथा कर्तव्योंसे विहीन हो सुम ।।
दुखको सुख समझ रही मनमें, उलटा ही समझाती मुझको ।
तेरी इस महामूर्खता पर, अत्यन्त हँसी आती मुझको ।।
है रामचन्द्र नीतिज्ञ पुरुष, अबतो वे पता नहीं देंगे ।
पर अवसर आ जाने पर क्या, धत्ता वे बता नही देंगे??

कौशल्याके आगे तुझको, रहना होगा दासी बनकर।
जी हाँ! जी हाँ! यों रात दिवस, कहना होगा दासीबनकर

फिर भरत रामके आगे जा, बोलेंगे दास भावसे ही।
भयभीत हुएसे अपना मुंह, खोलेंगे दास भावसे ही॥

उत्तरमें कहा कैकईने, तुझको हो गई निराशा है।
श्रीराम दुष्ट आचरण करें, ऐसी न मुझे तो आशा है॥

है राम सत्यवादी धार्मिक, उस पर ऐसा आघात न कर।
विपरीत भावना ला मनमें, ऐसी तू उल्टी बात न कर॥

यह सुन बोली मन्थरा, बन न एक दम मूढ़।
ध्यान लगा करके सुनो, आज वचन ये गूढ़॥

निश्चय ही होगा अहित आज, मेरा न कहा जो मानोगी।
पछताओगी जीवन भरको, अपना ही जो हठ ठानोगी॥

यह बात ध्यानमें रख लो तुम, अवसर जब पलटा खाता है।
देखते देखते ही जगमें, सज्जन दुर्जन बन जाता है॥

है बात सत्य यह रानीजी! मानवका कुछ विश्वास नहीं।
किस अवसर पर कब बदल जाय, इसका होता आभास नहीं॥

आता फिर कुछ भी हाथ नहीं, शुभ अवसरके खो जाने पर।
दुख ही दुख पाना पड़ता है, जग हँसता है पछताने पर॥

मामाके घरसे तुरत भरत, भैयाको बुलवाया जाए।
कर राज्यतिलक राज्यासन पर, उसको ही बैठाया जाए॥

फिर रामचन्द्रको साथ साथ, वनवास चतुर्दश वर्ष मिले।
विश्वास न जब तक राजा दें, तब तक यह अपना हठ न हिले॥

इतने वर्षोंमें भरतलाल सबके प्यारे बन जायेंगे।
है प्रेम रामके प्रति जिनका, उसको सब लोग भुलाएँगे॥

वर माँगें जाएँ किस प्रकार, तुमको वह मार्ग दिखाती हूँ।
उस घटना पर तुम ध्यान करो, तुमको मैं ध्यान दिलाती हूँ।

हुआ दण्डकारण्यमें, देवासुर सङ्ग्राम।
प्रतिद्वन्दी वह शूर था शम्बर जिसका नाम॥

करनें सहायता देवोंकी, राजा दशरथ भी जाते हैं।
असुरोंके द्वारा अङ्ग सभी, जब क्षत विक्षत हो जाते हैं॥

सङ्गमें राजाके तुम भी थी, रक्षा की अति चतुराईसे।
राजाके प्राण बचाए थे, सम्मुख ऐसे अन्याईके॥

राजाने तब होकर प्रसन्न, दे डाले दो वरदान तुम्हें।
"लूँगी फिरक भी"कहा तुमने, हो आया होगा ध्यान तुम्हें?

दो वरदानोंके बदलेमें, दो बातें माँगो रानी तुम।
कहना, दो वे वरदान मुझे, यदि राजा हो वरदानी तुम॥

पहले तुम लेना बाँध वचनमे, जिससे पीछे हट न सकें।
पक्का कर लेना इस प्रकार, वचनोंको कभी पलट न सकें॥

चौदह वर्षोंके बाद राम, जब लौट अवधको आएँगे।
चाहेंगे राम हटाना भी, तो भरत न हटने पाएँगे॥

पलटा खाया समयने, पलटे तुरत विचार।
पलट गई बस कैकई, झट हो गई तयार॥

कहने यों लगी मन्थरासे, तुझको मैं समझ न पाई थी।
तेरी उत्तम बातें मेरी, कुछ भी न समझमे आई थी॥

॥ विचारका परिवर्तन होने पर अनुचित बात भी उचित प्रतीत होती है॥

अब पूर्णरूपसे समझ गई, सब भले बुरेको जान लिया।
राजाकी मनोभावनाको अब, भली भाँति पहचान लिया॥
तेरा शरीर ज्यों सुन्दर है, सुन्दर तेरे विचार भी हैं।
इस कूबड़के अतिरिक्त नहीं, तुझमे कोई विकार भी है॥
सब काम सफल हो जाने पर, मैं तुझे पारितोषिक दूँगी।
वस्त्रादि अलङ्कारोंसे मैं, तेरा तन भूषित कर दूँगी॥
अपना कल्याण - कार्य साधन, करनेमे तत्पर होऊँगी।
निश्चय ले समझ मन्थरे ! तू, निश्चिन्त न हो अब सोऊँगी॥

इस प्रकार कह कैकई, लगी मचानें दम्भ।
अथवा यों कहिये किया, अब अभिनय आरम्भ॥

गहने निकालकर फेंक दिये, पहुँची था क्रोधागार जहाँ।
नारी जब हठ पर चढती है, रह पाता सद्व्यवहार कहाँ ?
यो बोली "वन" जाएगा वह, या अपने प्राण तजूँगी मै।
यह ध्यान रहे राजा दशरथ! बस आज तुम्हे समझूँगी मै॥
राजा यदि "राम" बन गया तो, अनुताप तुम्हे करना होगा।
या राजा भरत बनेंगे या, निश्चय मुझको मरना होगा।
विषधर भुजङ्गकी भाँति क्रोध, करके फूंकार मारती थी॥
धीमें स्वरमे ओ कभी कभी, ऊँचे स्वरसे पुकारती थी।
गिर गिर पड़ती थी बैठ बैठ, विकराल रूपवाली होकर।
कुछ बिना बिछाए आँगनमें, वह लेट गई सुध बुध खोकर॥
इतनेंमे नृप हर्षित चितसे, मनमे विचारते आते हैं।
राज्याभिषेकके बारेमें, अनुमान लगाते जाते हैं॥

जब गए कैकईके घरमें, उसको न वहाँ पर पाते हैं ।
दाएँ बाएँ मुड़ देखा फिर, प्रहरी पर दृष्टि जमाते हैं ॥
कर जोड़ कहा प्रहरीने यों, रानीजी कोप भवनमे हैं ।
आश्चर्य हुआ कइयों विचार, आए राजाके मनमे हैं ॥
देखा जा कोप भवनमें तो, रानीकी बड़ी दुर्दशा है ।
देवीके जैसी रानी थी, अब तो वन गई कर्कशा है ।
राजा दशरथके अङ्ग शिथिल, पड़ गए हुए आश्चर्य चकित॥
जीवनमे कभी न देखा था, कैकेईको इस भाँति कुपित ॥
शिर उसका रखा निज गोदीमें, राजा यों बोले नम्र वचन ।
रानी! बोलो होकर सचेत, क्यों हुआ आज बेसुध यह तन ?
तुम कहो जिसे वध कर दूँ मैं, तुम बोलो उसे पकड़ लाऊँ ।
यदि किसी रोगसे पीड़ित हो, उपचार अभी मैं करवाऊँ ॥
संकुचित हृदयके भाव त्याग, रख कर मुझ पर विश्वास कहो ।
इच्छानुसार लो माँग प्रिये! जो भी है मेरे पास कहो ॥
रानी! मेरी सौगन्ध तुम्हे, बोलो बोलो जो शङ्का हो ॥
निर्भय होकर तुम अपना मुख, खोलो बोलो जो शङ्का हो ॥

रानीनें सुन कर वचन, खोले अपनें नैन ।
राजासे कहनें लगी, इस प्रकारसे वैन ॥

अब तक न किसीने भी मेरा, साहस करके अपमान किया ।
पशु, पक्षी, मानव, दानवनें, कुछ नहीं किसीने कष्ट दिया ॥
पहले दें वचन आप मुझको, फिर कह दूँगी जो कहना है ।
आघात हृदय पर जो होगा, उसको तो नृपवर! सहना हैं ॥

दशरथ बोले है प्रिय मुझको, अतिरिक्त रामके और नहीं ।
पश्चात् रामके तुम्हीं मुझे प्रिय है, न दूसरा और कहीं ॥

है रामचन्द्रकी शपथ मुझे, वचनोंको दे, न टरूँगा मैं ।
सच कहता हूँ, सच कहता हूँ, कह दोगी वही करूँगा मैं ॥

फिर वचन कैकई बोली यों, राजन्! वचनोंका ध्यान रहे ।
अपना औ अपने वचनोंका, जग बीच सदा सम्मान रहे ॥

शम्बर वधके पश्चात् आप, दे रक्खे हैं वरदान मुझे ।
दे दें मेरे जो देना है, इस समय वही श्रीमान् मुझे ॥

मेरे वर यदि न मिले मुझको, प्राणोंका त्याग करूँगी मैं ।
है निश्चय यही अटल मेरा, बिन आई मृत्यु मरूँगी मैं ॥

श्रीरामचन्द्रके बदलेमे, श्रीभरतलालको राज मिले ।
सब अधिकारोंके साथ साथ, यह चमर-छत्र औ-ताज मिले ॥

हो गई अवस्था शोचनीय, राजाकी इन वचनोंको सुन ॥
हो गये उसी क्षण शोक ग्रस्त, रह गए ठगेसे निज शिर धुन ।

राजाका हृदय डोल उठा, क्षण भरको हुए विसुधतन वे ।
अनुभव यों करने लगे नृपति, ज्यों देख रहे, हो सपना ये ॥

कैकई पुनः यों बोल उठी, वचनोंकी पूर्ति कीजियेगा ।
वरदान दूसरा माँग रही, उस पर भी ध्यान दीजियेगा ॥

यह "राम" अयोध्याको तजकर, चौदह वर्षों वनवासी हो ।
पक्के हैं वचनोंके तो फिर, कह दें वह सहज उदासी हो ॥

यह बात दूसरी सुनते ही, राजाके शिर पर वज्र गिरा ।
पर कटे विहँगसे गिरे तुरत, आँखोंमे सारा विश्व फिरा ॥

राजा क्रोधित होकर बोले, ओ महापापिनी कैकेई !
ओ दुष्टचरित्रे! पतिघातिनि!, सुन अरी डाकिनी कैकेई !!
श्रीरामचन्द्रने क्या तेरा, कोई भी काम बिगाड़ा है?
श्रीभरतलालका या तेरा, कोई भी काम बिगाड़ा है??
माता समान तेरी सेवा, प्रति दिवस किया करता है वह।
कौशल्याके समान तुझको, सम्मान दिया करता है वह॥
उसने तो तेरे साथ किया, तिल भर अनुचित व्यवहार नहीं?
अब तक भी रखती आई है, क्या बतला तू भी प्यार नहीं??
प्राणोंका त्याग करूँ चाहे, कर सकता उसका त्याग नहीं।
चाहे शरीर यह छूट जाय, पर छूटेगा अनुराग नहीं॥
उसका मुख कमल बिना देखे, हो सकती मुझको शान्ति नहीं।
रख कर अपनेसे दूर उसे, पा सकता मै विश्रान्ति नहीं॥
अच्छा ले, राज भरतको दे, पर रामचन्द्रको दूर न कर।
होकर अधीर राजा बोले, झूठी शङ्काओंमे मत मर॥
अब तक तो तू यह कहती थी, प्रिय अधिक भरतसे राम मुझे।
सबसे ही तेरा कहना था, बिन राम नहीं विश्राम मुझे॥
मैने न समझ पाया अब तक, क्यों हुआ आज परिवर्तन है?
आया न समझमे कारण भी, यों हुआ आज परिवर्तन है॥
क्या कभी बड़ा भाई रहते, छोटेको राज मिला बतला?
दिखला सकती है यदि तू तो, दे करके उदाहरण दिखला??
तेरी सदैव सेवा करके, तुझको जो सुख पहुँचाया है।
ऐसा सुपुत्र वनवासी हो, क्यों तेरे मनमे आया है??

॥ कभी कभी छोटीसी भूलका परिणाम भी भयङ्कर होता है॥

छोटोंसे लेकर बडों तलक, सबसे ही जिसने प्यार किया ।
अनजानेमे भी नहीं किसीका, जिसने है अपकार किया ।।

ले तेरे पाँवों पड़ता हूँ कहता हूँ हाथ जोड़कर मैं ।
फिर जी न सकूँगा इस जगमें, बस उसका साथ छोड़कर मैं ।।

निर्दोष राम पर जीतेजी, कर सकता मै अन्याय नहीं ।
दे वचन मुझे मरना होगा, है ही फिर अन्य उपाय नहीं ।।

होकर अचेत फिरसे सचेत, होकर यों बातें करते हैं ।
लम्बे श्वासोंको ले लेकर, लम्बी आहोंको भरते हैं ।।

फिर भी तो दया कैकईको, आती न कभी दिखलाती है ।।
निष्ठुर बन कर दृढ़तापूर्वक, इस भाँति बोलती जाती है ।।

परीक्षा हो ही जाती है, मनुजकी, वक्त आने पर ।
है कितने टंचका सोना, पता लगता तपाने पर ।।

है कितने मूल्यका मोती, है कितनी आब दाने पर ।
पता पानीका लगता, जौहरीके ही बनाने पर ।।

हम ऐसे है हम ऐसे हैं, कहा करते हैं सब लेकिन ।
चौकड़ी भूल जाते हैं जब आते हैं नशाने पर ।।

सिर्फ बकवाद करनेकी, हुआ करती नहीं कीमत ।
हुआ करती है कीमत, बातको कहकर निभाने पर ।।

"मिश्र" अभिमान मत करना, अगर मरना न आता हो ।
हँसेंगे लोग तेरे व्यर्थके इस बड़बड़ाने पर ।।

रघुराज! बचन देकर फिरना, कहलाता है यह धर्म नहीं ।
ऐसी कातरता दिखलाना, है यह वीरोंका कर्म नहीं ।।

सौगन्ध आपकी साथ साथ, सौगन्ध भरतकी खाती हूँ ।
लूंगी अवश्य वरदान सुनो, डङ्केकी चोट सुनाती हूँ ।।
राजा फिरसे मूर्छित होकर, गिर पड़े एकदम धरती पर ।
चुभ गया हृदयमे ज्यों मृगके, प्राणान्तक व्याधाका खर शर ।
चैतन्य हुए तब बोले यों, कैकई ! मुझे यह तो बतला ।
क्या तेरी यह अनुचित आज्ञा, स्वीकार करेगा भरत भला?
विश्वास मुझे है लेगा यह, अधिकार रामका भरत नहीं ।
अपने अन्तरसे त्यागेगा, यह प्यार रामका भरत नहीं ।।
बनवास रामको देने पर, मुझको संसार कहेगा क्या ?
क्या जाने कैसे वचनोंसे, सारा परिवार कहेगा क्या ??
राजा होंगे श्रीरामचन्द्र, यह वचन दिया है जब मैंने ।।
सब प्रजाजनोंके आगे यह, स्वीकार किया है जब मैंने ।।
उनके आगे भी तो मुझको, यह वचन तोड़ना होगा ही ।।
की हुई प्रतिज्ञाको अपनी, है खेद, छोड़ना होगा ही ।
निर्मल प्रकाशके बाद तिमिरकी, कैसी घड़ी उतर आई ।
होठोंसे लगी अमृत प्याली, तूने धरती पर ढुलकाई ।।
वह कौशल्या जब पूछेगी, क्यों राम जा रहा है वनको ? ।
अपराध विना ही सिद्ध हुए, क्यों दण्ड मिल रहा इस जनको ??
यह कष्ट झेलना होगा क्या, इस दुष्टाके कारण उसको ?
हा ! दैव? उठाना ही होगा, यह दुःख असाधारण उसको ।।
सेवामें दासीके समान, जो सुख पहुँचाया करती है ।
भोजनके समय मातृसम वह, नित स्नेह जताया करतीहै ।।

ऐसी पत्नीका भी मैंने, इससे कम ही सत्कार किया।
उस कौशल्यासे अधिक सदा, इस कैकेईसे प्यार किया॥
बस उसका आज मिला बदला, कर्मोंका फल पाया मैंने।
रखनेमे ऐसा भेद भाव, कुछ भय न कभी लाया मैंने॥

रह रह कर उठने लगे, मनमे कई विचार।
शान्ति नहीं नृपको मिली, मनमे किसी प्रकार॥

सोचा विश्वास सुमित्रा भी, आगेसे कभी करेगी क्यों?।
मुझसे अन्याई राजासे, यह सारी प्रजा डरेगी क्यों ?॥
श्रीरामचन्द्र वन जाते हैं, जब सीता यह सुन पायेगी।
दशरथ नरेशकी मृत्यु हुई, सुन कर वह घबरा जाएगी॥
कैकई! कैकई!! विधवा बन, फिर राज चला लेना अपना।
मेरे मरनेकी चिन्ता तज, करना अपना पूरा सपना॥
सब लोग कहेंगे यह दशरथ तो, पुत्र बेचनेवाला है।
पत्नीके डरसे बेटेको, दे डाला देश निकाला है॥
फाँसीका फन्दा डाल गले, छतसे मुझको लटका दे तू।
कर काम सभी मेरा समाप्त, रस्सीका वह झटका दे तू॥
मेरे वचनों पर अच्छा हो, श्रीराम नहीं जाए वनको।
पर ऐसा कभी करेगा? वह, विश्वास नहीं मेरे मनको॥
जब उसें कहूँगा ऐसे मैं, तुम वनको अब जाओ बेटा।
यह दे दो राज भरतको ही, वनमें तुम सुख पाओ बेटा॥
तब शोक रहित होकर वह तो, "जो आज्ञा" यह ही बोलेगा।
क्यों? क्या कारण है? कहनेको, अपना न कभी मुँह खोलेगा॥

लक्ष्मण भी रामचन्द्र से जो, नित प्यार अधिकतर करता है।
रहना ही पृथक रामसें तो, उसको क्षण एक अखरता है ॥
वह यहाँ अयोध्यामें रहकर, उनके न साथको छोड़ेगा।
वनवास राम जाएंगे तो, वह उनसे आगे दौड़ेगा ॥
कौशल्या और सुमित्रा भी, निश्चय दोनों मर जाएँगी।
होगा जब वज्रपात ऐसा, वे आत्म घात कर जाएँगी ॥
कैकई! कैकई!! निष्कण्ठक फिर, अपना राज चलाना तू।
सबको दुख सागरमें ढकेल, बैठी बैठी सुख पाना तू ॥
यदि राज्य भरत ले लेवे तो, तू सुन मेरे मर जाने पर।
उससे न कराना प्रेत कर्म, रख ध्यान अयोध्या आने पर ॥
श्रीरामचन्द्र पैदल न कभी, धरतीके ऊपर चलते थे।
हाथी घोड़े रथवाहन पर, जाते जिस समय निकलते थे ॥
नाना प्रकारके व्यञ्जनादि, मन चाहे खाया करते थे।
मोटे मोटे गद्दों पर सो, जो रात बिताया करते थे ॥
खाएँगे अब वे कन्द मूल, कैसे वे खाए जाएँगे ?
कलसे वे मेरे राम अरे ? वन वनमें कष्ट उठाएँगे ?
कैकई! मुझे यह तो बतला, किसने यह पाठ पढ़ाया है?।
सच्ची सच्ची दे बात बता, किसने तुझको बहकाया है ? ॥
हाँ समझ गया हाँ समझ गया, नारियाँ सभी शठ होतीं हैं।
वे नहीं समझ पाती जब तक, उनको न पूर्ण हठ होती है ॥
भूला भूला मै भूल गया, शठ होती सब नारियाँ नहीं।
उत्तम या अधम किसी युगमें, होती है कब नारियाँ नहीं ॥

॥ भूलको स्वीकार करनेसे आत्माको शान्ति मिलती है ॥

कैकेई! तुझे मैं कहता हूँ, निश्चयसे तू पुरी शठ है।
थे दिये कभी जो वचन तुझे, उनकी अब लगा रही हठ है।।

कैकई बीचमे बोल उठी, ये वचन न देना है दूषण।
हे महराज! पीछे न हटें, कहलाकर तुम रघुकुल भूषण।।

यदि आप वचन पालन करके, निज देह नहीं रख पाएँगे।
तो बिना लिए वर मेरे भी, यह प्राण स्वर्गको जाएँगे।।

इसको न आप धमकी समझें, करके प्रण पूर्ण दिखा दूँगी।
पुत्री केकय नरेशकी हूँ, यह जगको मै दिखला दूँगी।।

रघुराज! आपका इस प्रकार, रोना धोना है व्यर्थ यहाँ।
इस भाँति दीनता दिखलाकर, व्याकुल होना है व्यर्थ यहाँ।।

बातों बातोंमें सभी, बीत चुकी है रात।
सूर्यदेवकी प्रभासे, अब हो गया प्रभात।।

अब तक ये सारे समाचार, कुछ लोगों तक ही सीमित थे।
औरोंको इसका पता न था, इसलिए सभी जन पुलकित थे।।

सब जन उत्सव उत्साह सहित, उत्सुकता लिए मनाते हैं।
गुरु आदि यज्ञकी तैयारी, नियमानुसार करवाते हैं।।

गुरु बोले श्रीसुमन्तसे यों, महलोंमे झटसे जाओ तुम।
जा रहा समय अतिशीघ्र, शीघ्रतासे नृपको ले आओ तुम।।

राज्याभिषेककी आज्ञा दें, तो तैयारी सब की जाए।
कहला भेजा है गुरुवरने कहिए क्या बात कही जाए।।

धीमे स्वरमे अत्यन्त शोकके साथ तभी बोले दशरथ।
मन्त्री! मन्त्री! क्या बोलूँ मै, मुझको न दिखाई देता पथ।।

कैकई बीचमे बोली यों, श्रीरामचन्द्रको ले आएँ ।
मन्त्री बोला लाऊँगा तब, जब नृपवरकी आज्ञा पाएँ ।।
फिर दशरथ बोले इस प्रकार, मैं कहता हूँ जाओ मन्त्री !
श्रीरामचन्द्रको साथ साथ, ले शीघ्र यहाँ आओ मन्त्री ! !
मन्त्री विस्मयमे डूब गया, कुछ नहीं समझमे आता है ।
कारण न बताकर रामचन्द्रको, क्यों बुलवाया जाता है ।।
श्रीरामचन्द्रके आगे जा, हो गए खड़े लटका गर्दन ।
रघुनन्दन बोले हे सुमन्त! चुप क्यों हो? कुछ तो कहो वचन? ?

देखा जितना कह दिया, सुमन्तने तत्काल ।
चलनेको तत्पर हुए, कौशल्याके लाल ।।

सीतासे कहा सुनो सीते ! मै पास पिताके जाता हूँ ।
तुम सङ्गिनियोंके सङ्ग रहो, मै अभी लौटकर आता हूँ ।।
हो गए उपस्थित सेवामे, नृपवरने मुखसे राम! कहा ।
दुःखित राजा दुख भूल गया, उसने फिर मुखसे राम! कहा ।।
राजाकी ऐसी दशा देख, श्रीरामचन्द्र अति घबराए ।।
सन्तोष भला होवे कैसे? कुछ भी तो समझ नहीं पाए ।।
पूछा कैकेईसे माता! मैने क्या कभी विरोध किया ?
किसलिए पिताजीने मुझ पर, फिर इस प्रकारसे क्रोध किया? ?
शत्रुघ्न, भरत तो अच्छे हैं? कहिए ये शोक ग्रस्त क्यों हैं ?।
हे माता! मुझसे कहो पिता, मेरे इस भाँति त्रस्त क्यों हैं ?।।
कैकेईने सारी बातें जो मुख्य मुख्य थी बतला दीं ।
अन्तिम दो बातें कहनी थी वे इस प्रकारसे समझा दीं ।।

बोली तुमसे न कहेंगे ये, इसलिए कहे देती हूँ मैं।
मानोगे वचन पिताके तुम, यह प्रथम वचन लेती हूँ मैं॥
चौदह वर्षों तक नगर छोड़, जाकर सुदूर वनवास करो।
बस यही पिताकी आज्ञा है, इस आज्ञामे विश्वास करो॥
राजा होंगे श्रीभरतलाल, मैंने यह मनमे ठानी है।
बस? इसी बातके लिए हुए, यों नृपवर पानी पानी हैं॥
उत्तरमे राम लगे कहने माँ! तुम्हें हृदयकी कहता हूँ।
किस भाँति पिताकी आज्ञाको, पालनमे तत्पर रहता हूँ॥
यदि पिता मुझे आज्ञा दे दें, तो अभी अग्निमें जल जाऊँ।
कह दें 'विष खाले राम अभी' तो विष खाकर भी दिखलाऊँ॥
कह दें समुद्रमें गिरनेको, तो जाकर अभी कूद जाऊँ।
जो पूज्य पिताकी आज्ञा हो, सब कुछ करके मैं बतलाऊँ॥
हे माता! ध्यान रहे तुमको, यह राम पलटता बात नहीं।
जो कहता कर दिखलाता है, पीछेसे करता घात नहीं॥
श्रीभरतलालके लिए दूत, अत्यन्त शीघ्र भेजा जाए।
राज्याभिषेक हो उनका ही, घर घरमे मङ्गल छा जाए॥
कौशल्या एवं सीताको, समझाने भरकी देरी है।
फिर तुरत चला जाऊँगा मैं, अन्तिम इच्छा यह मेरी है॥

पिताकी आज्ञा, मन कर्म बाणीसे निभाऊँगा।
रहो निश्चिन्त हे माता! न वचनोंको फिराऊँगा॥
परीक्षा धैर्यकी लेनी है, यदि मेरी विधाताको।
रखो विश्वास माता मैं सफल होकर दिखाऊँगा॥

कष्ट तो क्या? नहीं है? प्राण भी कर्तव्यसे बढ़ कर ।
उचित पथसे न हटकर मै, सुयश जगमे कमाऊँगा ।।

कष्टसे ही निखरता है, जगतमे मनुजका जीवन ।
तपस्या है समझ कर, पाँव आगे ही बढ़ाऊँगा ।।

समय रहता नहीं पर, बात रह जाती जगतमे है ।
"मिश्र" इस ही लिए, मै बातसे गिरने न पाऊँगा ।।

राज्य तिलकके स्थान पर, मिला कठिन वनवास ।
किन्तु न किञ्चित् मात्र भी, श्रीमुख हुआ उदास ।।

हर्षित चित नित रहने वाले, अब भी वे तो हर्षित चित हैं ।
सुख दुख जिनको होता समान, रहते वे तो आनन्दित हैं ।।

फिर तुरत वहाँसे उठकरके, कौशल्या माँके पास गए ।
स्मृतिमे आई चट बात एक, जिससे हो तनिक उदास गए ।।

इस दारुण आज्ञामे क्या है? हम तो इससे अनुराग करें ?
पर हो न कहीं ऐसा अनर्थ, माता प्राणोंका त्याग करें ??

बस यही सोचते हुए राम, फिर अन्तःपुरको जाते हैं ।
हो जाते हैं सब लोग दुखी, जो भी घटना सुन पाते हैं ।।

दशथरकी और पत्नियोंने भी, जब यह चर्चा सुन पाई ।
रोती विलाप करतीं सब वे, कौशल्या माके ढिग आई ।।

इन सबको पूरा पता न था, यह दुर्घटना जो घटी यहाँ ।
था स्नेह रामसे उन सबका, थी जमा हो गई तभी वहाँ ।।

।। कष्टोंसे विचलित न होने वाले ही महामानव कहलाते हैं ।।

यों ऐसे साधु पुरुषको भी, क्यों नृपति भेजते वनमे हैं।
कुछ समझ न पाई हैं हम भी, ऐसे क्यों आई मनमे हैं॥
लक्ष्मणको लेकर साथ राम, कौशल्या माँके पास गए।
मा बैठीं हवन कर रही थीं, दोनोंने जाकर चरण छुए॥
माताने सुतको छातीसे, था लगा लिया गद्‌गद हो कर।
क्षण भरके लिए भूल बैठी, अपनेको ही सुध बुध खोकर॥
फिर बोली, लो इस आसन पर, बैठो कुछ अल्पाहार करो।
सन्देह नहीं है काम अधिक, पर इनका अब न विचार करो॥
अत्यन्त विनीत भावसे तब, श्रीराम लगे कहने ऐसे।
माता! मुझको वन जाना है, फिर अल्पाहार करूँ कैसे?॥
सीताको लक्ष्मणको तुमको, कुछ भय करनेका अवसर है।
इसलिए कि तुम तीनोंका ही, नित भार रहा मेरे पर है॥
चौदह वर्षों तक मै वनमे, करने निवास अब जाऊँगा।
तुम मनमे धैर्य धरो माता, फिर लौट अयोध्या आऊँगा॥
इतना सुनते ही कौशल्या, गिर गई भूमि पर मूर्छित हो।
रघुवरने तुरत उठाया फिर, मनमे अपने अति दुःखित हो॥
मा बोली राम! तुम्हें यदि मैं उत्पन्न न करती अच्छा था।
पड़ता न देखना इस दिनको, यह दुःख न भरती अच्छा था॥
राज्याभिषेककी वर्षोंसे, बैठी थी आश लगाकर मैं।
सन्तोष कर लिया करती थी, अपने मनको समझाकर मैं॥
क्या पता मुझे था दुर्घटना, होएगी ऐसे अवसर पर।
बदला तूने ले लिया अरी, कैकेयी! कैसे अवसर पर॥

कैकेईकी बातोंको मै, सुन सुन कर भी चुप रहती थी।
उसके अनुचित बर्ताओंको, चुप्पी साधे मै सहती थी॥
तबसे भी अधिक मुझे अब तो चुप ही चुप रहना होयेगा।
उसके अनुचित व्यवहारोंको, निशदिन ही सहना होयेगा॥

इन अशुभ समाचारोंको सुन, फिर भी मै हाय? जी रही हूँ।
हे मृत्यु! मुझे ले जा अब तो, दुःखोंकी घूँट पी रही हूँ॥
है हृदय वज्रका बना हुआ, इससे ही मृत्यु न आती है।
हे मृत्यु! मुझे आकर ले जा, यह दुखिया तुझे मनाती है॥

जप तप शुभ कर्मोंके फल क्या? हो गए आज हैं नष्ट सभी?
किस कारण फिर धिर आए हैं? चहु दिशि मेरे ये कष्ट सभी??
लक्ष्मण बोले कौशल्यासे, दशरथ नारीके वशमे हैं।
वे काम बासनामें रत हो, अपनी प्यारीके वशमे हैं॥

ऐसा मानव जो भी चाहे, विपरीत कर्म कर सकता है।
गुणवान पुत्रका त्याग और ऐसा अधर्म कर सकता है॥
हे राम! आप आगे बढ़कर, इस शासन पर अधिकार करें।
अन्याय सहा क्यों जाए यों, इसका तुरन्त प्रतिकार करें॥

मै महाकाल की भाँति धनुष, धारण कर आगे रहता हूँ।
जनशून्य अयोध्या कर दूंगा, यह नहीं व्यर्थ मै कहता हूँ॥
देखूंगा कौन वीर हैं जो, राज्याभिषेकमे वाधक है।
देखूंगा कौन भरतके अब, राज्याभिषेकमे साधक है॥

जो भी सम्मुख आ जाएगा, उसका संहार करूँगा मै।
भैया सन्देह न करिएगा, उसका प्रतिकार करूँगा मै॥

हेराम! सरलता तज अपनी, अब तो कठोरतम बन जाएँ।
वध करनेमे भयभीत न हों, दशरथ भी यदि सम्मुख आएँ
अथवा राजा दशरथको तुम, अब रखो बना करके बन्दी।
गुरुको भी दण्ड दीजिये यदि, आजाएँ बन कर प्रतिद्वन्दी॥
हेराम! आपका शत्रु नहीं, जगमे जीवित रह सकता है।
दुस्साहस करके क्या कोई, तुमको दोषी कह सकता है??

लक्ष्मण जब यों कर चुके, अपनी पूरी बात।
कौशल्या कहने लगी, फिर यों तत्पश्चात्॥

हे वत्स! समझमे आती हों, यह बातें तो स्वीकार करो।
इस शोक ग्रस्त माताको तज, जानेमे तनिक विचार करो॥
हैं पूजनीय श्रीमान पिता, तो पूजनीय है माता भी।
शास्त्रोक्त नियम भी देखें तो, बढ़कर है मेरा नाता भी॥
इसलिए मान आज्ञा मेरी, हे राम! न वनको धाओ तुम।
मेरे ही कारण वत्स! सुनो, अपने घरमे रह जाओ तुम॥
सुन दीन वचन यों माताके, बोले श्रीरामचन्द्र ऐसे।
श्रीआदरणीय पिताजीकी, आज्ञा माता टालूँ कैसे??
इस लिए आज तुम धैर्य धरो, वनवास मुझे अब जाने दो।
श्रीमान् पिताजीको मुझको अपनी यह आन निभाने दो॥
हे लक्ष्मण! अपना क्रोध त्याग, तुम भी कुछ धैर्य धरो भैया!
साधे जाएँ सब काम आज, ऐसा ही यत्न करो भैया!!
राजाका इसमे दोष नहीं, कैकेईका भी दोष नहीं।
जो लिखा भाग्यमे होता है, लाओ भैया तुम रोष नहीं॥

अपने बेटेसे अधिक मुझे, समझा एवं नित प्यार किया ।
मेरी बाधक बन कर उसने, जो यों कठोर प्रतिकार किया ॥

क्या है रहस्य? तुम समझो तो, यह बात नहीं साधारण है ।
जिसको सब जान नहीं पाते, कुछ छुपा हुआ हाँ कारण है ॥

जो इच्छा भाग्य विधाताकी, होती वह होकर रहती है ।
अपनी अपनी दृष्टिसे सभी, जनता मन माना कहती है ॥

जो किया चाहता मनुज नहीं, वह कार्य तुरत हो जाता है ।
जो किया चाहता है वह तो, कुछ काम नहीं हो पाता है ॥

हे लक्ष्मण! सोचो तो तुम भी, कैसा विधिका विधान है यह ।
हर कोई समझ नहीं पाता, ऐसा ही तत्व - ज्ञान है यह ॥

अन्तर्मुख होकर देखो तो, वनवास बड़ा सुखदाई है ।
दे ध्यान बात तुम सोचो तो, मेरी इस बीच भलाई है ॥

वनमे ऋषि मुनि औ जनताका, दुख दूर करेंगे हे लक्ष्मण !
सन्तापित जो भी है उनका, सन्ताप हरेंगे हे लक्ष्मण !!

पालन भी होगा आज्ञाका, अनुभव भी होगा जग भरका ।
पालन होगा कर्तव्य, और ऋण भी उतरेगा कुछ शिरका ॥

लक्ष्मण बोले, हे राम ! नहीं, ये बात समझमे आती हैं ।
ये भाग्यवादकी बातें सब, क्यों व्यर्थ पिरोई जाती हैं ॥

कर्तव्य कर्म क्या अपना है, यह सोची जाए बात यहाँ ।
लड़ कर अन्याईसे हमको, बस दिखलाने हैं हाथ यहाँ ॥

ये शस्त्र न धारे हैं मैने, केवल बोझा ही ढोनेको ।
इनको न लिए फिरता हूँ मै, प्रख्यात जगतमे होनेको ॥

॥ भाग्यकी आड़मे कर्तव्यको भूल जाना भूल है ॥

मेरी तलवार वार करके, वैरीके शिरको काटेगी।
बन महाकाल विकराल यही, बैरीका शोणित चाटेगी॥
मेरे शस्त्रोंकी चोटोंसे, लाशें चहुदिशि बिछ जायेंगीं।
सेना यदि लड़ने आयेंगीं, सम्मुख न ठहरने पायेंगीं॥
कह उठी बीचमे कौशल्या, इस भाँति वचन रघुनन्दनसे।
हे वत्स! साथ ले चलो मुझे भी, दूर यहाँकी उलझनसे॥
बोले रघुवर मैंने देखा है, दशा पिताकी ठीक नहीं।
इसलिए न होगा गमन उचित, यह अवध छोड़ कर और कहीं॥
अब अधिक विवश मत करिए मा, आज्ञा दे दीजै जानेकी।
आवश्यकता है नहीं जननि, कुछ और अधिक समझानेकी॥
कौशल्या मा अब मान गई, पा ली है विजय निराशा पर।
टिक गए प्राण थे अब इनके, उस दीर्घ अवधिकी आशा पर॥
बोली वन जाओ लाल अभी, भगवान करें रक्षा तेरी।
वनके पशु पक्षी ऋषि मुनि गण, विद्वान् करें रक्षा तेरी॥
ऋषि विश्वामित्र दिए तुझको, वे शस्त्र करें रक्षा तेरी।
सर्वत्र सदा ही अन्य अन्य, दिव्यास्त्र करें रक्षा तेरी॥
मेरा है आशीर्वाद यही, वन तुझे सुखोंका दाता हो।
तेरे शुभ कर्मोंके द्वारा, तेरे अनुकूल विधाता हो॥
सब ऋतुएँ हो अनुकूल और सब जीव तुझे सुखदायक हों।
तू सदा सहायक हो सबका, तेरे सब लोग सहायक हों॥
यों कह कर हवन किया माने, विप्रोंको दान दक्षिणा दी।
घावोंकी भरने वाली फिर, औषधियाँ भी उनको ला दी॥

शिर सूँघा रक्षा बाँधी फिर, बोली बेटा अब जाओ तुम।
हर्षित चित नित रहकर वनमे, जग भरके सब सुख पाओ तुम॥

स्थिर रहे कर्तव्य पर, जीवन उसीका नाम है॥
कार्य करता ही रहे, निष्काम हो अविराम है॥
सुख तथा दुखकी न चिन्ता, कर सदा आगे बढ़े।
उस मनुजका ही हृदय, समझो सुखोंका धाम है॥
मोहमे मातृत्वके जो, कहदिया सो कहदिया।
किन्तु हाँ कर्तव्य पर, चलना तुम्हारा काम है॥
सुख प्रथम फिर बादमें मिलता है दुख दुष्कर्मसे।
धर्मका होता रहा अच्छा सदा परिणाम है॥

माताजीके छू चरण, बिदा हुए तत्काल।
सीतासे लेने विदा, पहुँचे दशरथ लाल॥
सीताने देखा तभी, आते हैं श्रीराम।
स्वागत करनेको उठी, सभी छोड़कर काम॥

बोली यह प्रथम बतायें तो, श्रीमुख ऐसा मलीन: क्यों है?
ऐसे शुभ अवसर पर, भगवन्! कहिये यों उदासीन क्यों हैं??
ली छीन मुस्कुराहट किसने? क्यों हुआ एक दम परिवर्तन?
सङ्कोच रहित होकर मुझको, बतलायें तो हे जीवन धन!!
उत्तरमे राम लगे कहने, हे प्रिये! मुझे वन जाना है।
नृपवर दशरथके औ अपने, अब मुझको वचन निभाना है॥

॥ बडे व्यक्ति कहनेके आदी होते हैं सुननेके नहीं ॥

विस्तार सहित घटना सारी, जो घटी सुना दी सीताको।
करना क्या होगा आगे ? वे बातें समझा दी सीताको॥

बोले हे सीते ! अब तुमको, कुछ सावधान हो रहना है।
राजा होंगे अब भरतलाल, इसलिये तुम्हें कुछ कहना है॥

उनको प्रसन्न रखना प्रतिदिन, करना तुम कभी विरोध नहीं।
वे बुरा भला कह दें तो भी, उनपर तुम करना क्रोध नहीं॥

सम्राट भरतके होने पर, मेरे न अधिक गुण गाना तुम।
अपनेको बड़ी मानकर मत, अपना अधिकार जताना तुम॥

रखना न कभी विपरीत भाव, निज पुत्रभाव रखना उनपर।
तीनों माताओंकी सेवा, करना सङ्कोच रहित होकर॥

सीताने कहा आपकी सब, बातें विचित्रसी लगती हैं।
आती है बड़ी हँसी मुझको, बातें सचमुच ये कैसी हैं॥

बातें ऐसी कायरपनकी, हैं कभी आपके योग्य नहीं।
जो पद्धति स्यारों वाली है, क्या उसे पकड़ता सिंह कहीं ??

अर्धाङ्गिनि ही पतिके सुखमे, दुखमें देती है योग सदा।
जो पतिको भोग भोगने हैं, वे स्वयं भोगती भोग सदा॥

हे आर्य ! आपके आगे क्या, कुछ अनुचित कार्य किया मैंने?
किस कारण मुझे त्यागते, क्या दूषित व्यवहार्य किया मैंने ??

हे राम ! आप जब कइयोंका, अपने शिर भार उठाते हैं ?
फिर वन ले चलनेमें मुझको ही, ऐसे क्यों घबराते हैं ??

हे आर्य ! आप जो खायेंगे, सन्तुष्ट उसीमें हूँगी मैं।
जो धर्म एकपत्नीका है, वह धर्म सदा पालूँगी मैं॥

उच्चाति उच्च गिरिशृङ्गों पर, चढ़नेसे नहीं डरूँगी मैं।
सुन्दर जल भरे सरोवरमे, निर्भय हो स्नान करूँगी मैं ॥
हे आर्य! आपके सङ्ग सङ्ग, सब दुख भी सुख बन जाएँगे।
इन भवनोंके आनन्द कभी, मुझको न ध्यानमे आएँगे ॥

सीताकी इस बातको, सुन कर सीतानाथ।
उत्तर यों देने लगे, बड़े विनयके साथ ॥

हे अबले! सुन उपदेश और, उसपर कुछ आज विचार करो।
घरमे रहकर ही हे सीते! धर्मानुसार व्यवहार करो ॥
वनमे चलकर नानाविधिके, नित कष्ट उठाने ही होंगे।
हे सुकुमारी सीते! तुमको, वनमे दुख पाने ही होंगे ॥
सिंहादिक हिंसक पशुओंका भय, सदा रहा करता वनमे।
होता है वीरपुरुष वह भी, हे सीते! नित डरता मनमे ॥
होती हैं बड़ी बड़ी नदियाँ, रहते हैं जिनमे मगर वहाँ।
हाथी भी फँस जा सकते हैं, फँसने पर बच सकते न जहाँ ॥
फल आदि समय पर मिले न तब, भूखों ही मरना पड़ता है।
जो भी पदार्थ मिल जाय, उदर उससे ही भरना पड़ता है ॥
इन बातोंका कुछ भी प्रभाव, सीताके ऊपर पड़ा नहीं।
सीताकी दृढ़ताके आगे, भय भी रह पाया खड़ा नहीं ॥
प्रतिरोध लगी ऐसे करने, कर रहे आप कैसी बातें ?
हे देव! युवा होकर तुम हो, करते बच्चों जैसी बातें ??
हे आर्य! सुनो हिंसक पशु कब, क्यों पास आपके आएँगे ?।
यदि आ भी जाएँगे तो भय खा, भाग तुरत ही जाएँगे ॥

॥ पत्नीकी रक्षा करनेवालेका नाम ही पति है ॥

हे वीर ! आपके आगे आ, कोई भी टिकने पाता है ?
रहने पर मेरे साथ कहें, क्या प्रभुका मन घबराता है??
इस पर भी यदि हठ पूर्वक ही, वन मुझे न लेकर जाओगे ।
तो ध्यान रहे हे आर्य ! मुझे, बस मरी हुई ही पाओगे ।।
इतना कह देने पर भी जब, श्रीराम हुए तैयार नहीं ।
सीताने देखा बातें तक, सुनना इनको स्वीकार नहीं ।।
तब रोष प्रगट कर सीताने, यों कहा कि हे रघुनाथ! सुनो ।
यह बात नहीं है शोभनीय, इसको मनसे दे ध्यान गुनो ।।
होता यह पता पिताजीको, "नर"तुम आकार मात्र ही हो ।
जामाता बननेके न अभी, हो योग्य न और पात्र ही हो ।।
तो कभी नहीं मेरा विवाह, हे आर्य ! आपसे करते वे ।
बलका परिचय लेते न कभी, प्रण भी न सामने धरते वे ।।
सारी जनता कह वीर तुम्हें, जो सदा दुहाई देती है ।
हे आर्य आज यह बात मुझे, मिथ्या दिखलाई देती है ।।
बस इसीलिए तो मुझ जैसी, नारीको त्याग रहे हो तुम?
करनी होगी रक्षा बनमे, इससे ही भाग रहे हो तुम??
क्या पतिका है कर्तव्य यही, पत्नीको ऐसे त्याग चले?
औरोंके छोड़ भरोसे, हो भयभीत इस तरह भाग चले??
हे आर्य! दुःख औ सुख क्या है ? यह बात आप भी जान रहे ।
मनके विपरीत कार्यको दुख, हैं आप सदासे मान रहे ।।
मनके विपरीत राज वैभव, क्या मुझको सुख पहूँचाएँगे ?
मनके अनुकूल वनोंके दुख, क्या मुझको दुख पहुँचाएँगे ??

जगमे सुख क्या है दुख क्या है? सब मन पर केवल निर्भर है।
यह कष्ट तथा आनन्द सभी, सबके सब इस मन ही पर है ॥

मनके विरुद्ध ये भव्य भवन, क्या हो जायेंगे नर्क नहीं?
मनके अनुकूल स्वर्ग होगा, वन भी इसमे है फर्क नहीं ॥

यह सब विचार करके ही मै, कहती हूँ साथ लिए चलिए।
पड़ झूठी दुश्चिन्ताओंमे हे नाथ! हाथको मत मलिए ॥

यह सुन कर रामचन्द्र बोले, हे प्रिये! हुआ है भ्रम तुमको।
क्या किसी भावनाके वश हो, चाहते छोड़ना हम तुमको??

वनमे जानेपर क्या रक्षा, कर सकता नहीं तुम्हारी मैं।
क्या इतना कायर मुझे, सोचती हो, तुम भी अपने जीमे??

मै समझ न पाया था इतनी, इच्छा है प्रबल तुम्हारी भी।
यदि इच्छा ही चलनेकी हो, तो कर लो सब तैयारी भी ॥

अविलम्ब सभी वस्त्राभूषण, जो भी हैं अपने दान करो।
जो बरती हुई वस्तुएँ हैं, भृत्योंको शीघ्र प्रदान करो ॥

सीता भी सङ्ग जा रही हैं, लक्ष्मणने देखा आते ही।
सोचा मै भी वन जाऊँगा, रघुवरकी आज्ञा पाते ही ॥

दोनोंको करके नमस्कार, यों कहा कि सङ्ग चलूँगा मैं।
हे राघव अपने निश्चयसे, सच समझें नहीं टलूँगा मैं ॥

समझा कर राम लगे कहने, हे प्राणोंके प्यारे लक्ष्मण!
वस रहो अयोध्यामे ही तुम, हे आखोंके तारे लक्ष्मण!!

अवधेश कामके वश होकर, कैकेईके सङ्केतों पर।
कौशल्या और सुमित्राका, कुछ अहित न दें भीषणतम कर ॥

ऊर्मिला, माण्डवीका भी तो, रखना है भैया ध्यान हमे।
इन चारोंका ही दीख रहा, अब तो न सुनो कल्याण हमे॥
इस लिए तुम्हारा वन चलना, हो सकता नहीं कभी हितकर।
तुम भी न रहे यदि यहाँ सुनो, विश्वास करूँगा मै किसपर??
यदि कहीं राज्य पाकर इनसे, अनुचित व्यवहार करेगा वह।
तो निश्चय मेरे हाथोंसे, बिन आई मृत्यु मरेगा वह॥
लक्ष्मणने कहा, सुनो भैया! मै रहनेको तैयार नहीं।
माता कौशल्या हैं समर्थ, करिये कुछ आप विचार नहीं॥
वनमे तो साथ चलूँगा औ, सेवाएँ सभी करूँगा मै।
रक्षामे रह कर दोनोंकी, दोनोंका दुःख हरूँगा मै॥
यह नम्र वचन सुन लक्ष्मणके, उत्तरमे रामचन्द्र बोले।
ऐसा निश्चय है तो आओ, निज माताकी आज्ञाको ले॥
श्रीजनक राजने हो प्रसन्न, दो धनुष हमे दे डाले हैं।
शस्त्रास्त्र और भी कई धनुष, घरमे ला करके डाले हैं॥
दो कवच दिव्य तरकस भी हैं, ये सब लेकर आओ लक्ष्मण!
हे वीर धनुर्धर! अधिक यहाँ, ठहरो मत झट जाओ लक्ष्मण!!
आज्ञा पानेकी देरी थी, एवं जानेकी देरी थी।
इससे न अधिक श्रीलक्ष्मणको, वापिस आनेकी देरी थी॥
श्रीरामचन्द्रने लक्ष्मणके, लानेपर शस्त्रोंको देखा।
होकर प्रसन्न मन ही मनमे, सब ही दिव्यास्त्रोंको देखा॥
सीताने और रामने फिर, वस्तुएँ बाँट दी सब अपनी।
लक्ष्मणने भी सबकी सब ही, वस्तुएँ बाँट दी तब अपनी॥

सीता लक्ष्मणके सहित, रामचन्द्र रघुवीर ।
आज्ञा लेनेके लिए, गए पिताके तीर ।।

दशरथकी सब पत्नियाँ, आकर नृपके पास ।
कर विलाप कहने लगीं, है अब सत्यानास ।।

राजा दशरथ निज बेटेसे, मिलनेको आगे बढ़े तुरत ।
पर बेसुध होकर उसी समय, बस! धरती पर गिरपड़े तुरत ।।

मूर्च्छित राजाको रामचन्द्र, आगे बढ़ तुरत उठाते हैं ।
धीमे स्वरमे दशरथ नरेश, अपने यों वचन सुनाते हैं ।।

हे राम! मुझे कारागृहमे, बैठा दो बन्दी करके तुम ।
अधिकार अयोध्या पर करके, सुख भोगो जीवन भरके तुम ।।

कैकेईके वशमे हो मै, यह अत्याचार कर रहा हूँ ।
अपराधी हूँ मै हे राघव! मनसें, स्वीकार कर रहा हूँ ।।

श्रीराम लगे कहने ऐसे, हे पिता! न यों सन्ताप करें ।
वनवासी मेरे बननेकी, चिन्ता न तनिक भी आप करें ।।

कहता हूँ सत्य वचन यह मै, है मुझे राज्यकी चाह नहीं ।
सुखको वैभवको पानेकी, है स्पृहा नहीं उत्साह नहीं ।।

मुझको तो केवल आज्ञाका पालन, करनेमे ही सुख है ।
धर्मानुसार आचरण करुँ, उद्देश्य एक ही सम्मुख है ।।

मेरा यह विनय आपसे है, यों होएँ आप अधीर नहीं ।
अपने निश्चयमे परिवर्तन, कर सकता यह रघुवीर नहीं ।।

हे पिता! आपके वचनोंका, रखना ही होगा ध्यान मुझे ।
वनवासी या राजा बनना, दोनों हैं एक समान मुझे ।।

।। अपराध स्वीकार कर लेने पर वह भार लघु हो जाता है ।।

इतनेमे बोली कैकेई, वास्तवमे धर्मवान् हो तुम।
निश्चल चित निश्चय व्रतधारी,उत्तम मनके महान् हो तुम।।
यह सुनकर बोल सुमन्त उठे, कैकेई! यह क्या करती हो?
यह निन्दनीय कर क्रूर कर्म,मनमे न तनिक भी डरती हो??
छोटा शासन कर सकता है, क्या बता बड़ेके रहने पर ?
क्या बदल जायगा राज नियम, केवल तेरे ही कहने पर??
अन्याय युक्त इस शासनमे, कह कोई विप्र रहेगा क्या?
जनतामेसे कोई प्राणी, अच्छा भी तुझे कहेगा क्या??
यदि राजा भरत बनेंगे तो, हम देंगे छोड़ अयोध्याको।
सब प्रजा छोड़ जाएँगी फिर,अपना मुख मोड़ अयोध्याको।।
फिर तुम्हें पूछता हूँ मै यह, तुम किस पर राज चलाओगी?
निश्चय समझो हे महाराज्ञि! घरमे बैठी पछताओगी।।
लो मान कही अब भी मेरी, बिगड़ी है कुछ भी बात नहीं।
अपने पतिदेव नृपतिको तो, पहुँचाओ यों आघात नहीं।।
यह सुनकर भी कैकेईमे, किञ्चित भी परिवर्तन न हुआ।
वह डटी रही दृढ़ता पूर्वक, ढीला थोड़ा भी मन न हुआ।।
दशरथने फिर सुमन्तसे यों, था कहा कि मेरी बात सुनो।
सेनाके सहित सभी जनता, जाएँ रघुवरके साथ सुनो।।
जिससे राघवके लिए सुलभ, सुखकारी जङ्गल हो जाए।
ऐसा प्रबन्ध कर दो सुमन्त! जङ्गलमे मङ्गल हो जाए।।
कैकेईने जब सुनी बात, मन ही मनमे भयभीत हुई।
घबराई, देखी सभी बात, मेरे मनके विपरीत हुई।।

बोली नृपसे है सभी, बात आपकी व्यर्थ ।
ऐसा होनेपर भला, होगा नहीं अनर्थ??

दशरथ बोले हे कैकेई! तुम आड़ी टाँग अड़ाती हो ।
मै दबता जाता हूँ इससे, दबतेको और दबाती हो??
तुम निज वचनोंपर डटी रहो, उन वचनोंको हम देंगे ही ।
उसके आगे जो अनुचित है, वह बात नहीं मानेंगे ही ।।
श्रीरामचन्द्रनें कहा कि यह, बातें क्यों अधिक बनाते हो ।
यों बुरा भला कह आपसमे, क्यों वैर विरोध बढ़ाते हो ।।
इस शासनपर निश्चय जानो, अबसे अधिकार भरतका है ।
है मेरा प्यार भरतजीसे, औ मुझसे प्यार भरतका है ।।
मै यही चाहता हूँ माता! वल्कल वस्त्रोंको लाओ तुम ।
अपनी इच्छानुसार मुझको, वनवासी अभी बनाओ तुम ।।
कैकेईने जब वस्त्र दिए, श्रीरामचन्द्रने धार लिए ।
थे सुन्दर वस्त्र महीन उन्हें, तनपरसे तुरत उतार दिए ।।
श्रीरामचन्द्रके साथ साथ, लक्ष्मणने भी वल्कल पहने ।
चाहा अब जनकदुलारीने, बदलूँ मै भी कपड़े गहने ।।
चाहा बहुतेरा, पर वल्कलकी, साड़ी नहीं पहन पाई ।
पूछा रघुवरसे यह कैसे, पहनी जाती है रघुराई ??
रघुराईने निज हाथोंसे? वल्कल वस्त्रोंको पहनाया ।
पहने जाते हैं इस प्रकार, सीतादेवीको समझाया ।।
यह दृश्य देख सब लोगोंकी, आँखोंसे उमड़ी अश्रुधार ।
सन्नाटा छाया और शोकका, उमड़ पड़ा सागर अपार ।।

रह सके न यह सब दृश्य देख, गुरुवरने किया सामना है।
चट बोले, कैकेई ! बतला, क्या बाकी रही कामना है ??

वनवास रामके लिए लिया, सीता पर क्या अधिकार रहा।
हम देख रहे हैं अनुचित ही, अबतक तेरा व्यवहार रहा ॥

तूने महीपको धोखा दे, रघुवरपर अत्याचार किया।
इस अनुचित आज्ञा पालनको, सीताने क्यों स्वीकार किया??

सीता शासन कर सकती थी, अनुपस्थित पतिके रहनेपर।
अनुचित न कभी होता शासन, करती जो मेरे कहनेपर ॥

राजा दशरथसे रामचन्द्र, बोले यह अन्तिम वचन जभी।
उन वचनोंको एकाग्रचित्त, हो ध्यान लगाकर सुने तभी॥

मेरी माता कौशल्याको, हो पाए कोई कष्ट नहीं।
होवे न किसीके द्वारा भी, सम्मान कभी भी नष्ट नहीं ॥

मेरे अनुपस्थित रहनेपर, यह सारा भार आपपर है।
है ज्ञात मुझे कौशल्याका, सब कुछ अधिकार आपपर है ॥

दशरथ नृपने मौन रह, सुन ली सारी बात।
इस प्रकार कहने लगे, नृपवर तत्पश्चात् ॥

हे सुमन्त! रथ रामका, करदो शीघ्र तयार।
बोले कोषाध्यक्षसे, मेरे सुनो विचार ॥

श्री वैदेहीके लिए सभी, भूषण वस्त्रादिक लाओ तुम।
हे राम! न वल्कल वस्त्रोंमे, इस सीताको ले जाओ तुम ॥

नृपवरकी अन्य रानियोंसे, फिर इस प्रकार बोले रघुवर।
अनजाने भूल हुई हो तो, कर क्षमा कृपा रखिये मुझपर ॥

करके प्रणाम कौशल्याको, नृपवरको पुनः प्रणाम किया ।
तीनोंने ही नत मस्तक हो, सबका ही आशीर्वाद लिया ॥

लक्ष्मणने भी निज माताके, आगे जा तुरत प्रणाम किया ।
माता गद्‌गद होकर बोली, बेटा! तूने वह काम किया ॥

जिससे सारा संसार सुयश, नित मुक्त कण्ठसे गाएगा ।
हे बेटा! यह चरित्र तेरा, आदर्श एक बन जाएगा ॥

तूने वह काम किया बेटा! पूर्वज जो करते आए हैं ।
बचपनसे लेकर अद्यावधि, सब काम मुझे मन भाए हैं ॥

है पिता तुल्य यह राम और तुम सीताको माता समझो ।
तुम सेवक हो इन दोनोंके, ये हैं सुखके दाता समझो ॥

सेवामे इनकी, रक्षामे, अपना सर्वस्व लुटा देना ।
आलस्य रहित होकर बेटा! इनके सब काम बना देना ॥

दे आशीर्वाद सुमित्रा यों, अपने मनमे हर्षाती है ।
लक्ष्मणके उत्तम भावोंको, गति देकर और बढ़ाती है ॥

होनी थी सो हो रही, हारा जन समुदाय ।
राम न रुक पाए, हुए असफल सभी उपाय ॥

अटल जो सत्य पर होते, वही मानव कहाते हैं ।
सुयश संसारमे पाते, नाम जगमे कमाते हैं ॥
हुआ करते हैं जो भी, तत्वज्ञानी जानते हैं वे ।
कि दुखको सुख समझते, बे सदा आनन्द पाते हैं ॥
कार्य संसारके सारे रहा करते हैं अस्थिर ये ।
समझते हैं इसीसे वे न अपनेको फँसाते हैं ॥

सदा कर्तव्यका पालन, किया करते हैं दुख पाकर।
तपस्या है समझकर, क्लेश अनुभवमे न लाते हैं ॥
सम्पदा विश्वकी मिल जाय, उनको सुख नहीं होता।
दुखोंके शैल भी टूटे, "मिश्र" वे भय न खाते हैं ॥

—

दशमी शुक्ला चैत्रकी

चैत्र शुक्ल थी प्रतिपदा, और पुष्य नक्षत्र।
पहुँच गए चहुओरको, समाचार सर्वत्र ॥
सुन्दर रथ जब स्वर्णका, आया जग विख्यात।
राम, लक्ष्मण, जानकी तीनों बैठे साथ ॥
गहनोंकी पेटी धरी, और रखे वस्त्रादि।
नाना विधिके कवच औ, रखे शस्त्र अस्त्रादि ॥

फिर पवन सदृश अतिवेगवान, घोड़े सुमन्तजीनें जोड़े।
पर बढ़ना नहीं चाहते हैं, वे घोड़े भी खाकर कोड़े ॥
जनता भी आर्तनाद करके, हाहा? कर रुदन मचाती है।
कैकेईको नृप दशरथको, मनमाने वचन सुनाती है ॥
आँखोंसे सबके अश्रुधार, बह चली न रोके रुकती है।
रथ जाता था जिस ओर उधर, सारी ही जनता झुकती है ॥
श्रीराम कह रहे धीरेसे रथको अतिशीघ्र चलानेको।
पर घेर रखा है लोगोंने, है मार्ग न आने जानेको ॥
जनताके वाग्वाण आकर, राजाके ही शिर पड़ते हैं।
वे मुर्छित होकर बार बार, धरती पर गिर गिर पड़ते हैं ॥

10

॥ कर्तव्य पालनमे कष्ट उठानेसे ही मनुष्य उत्कृष्ट बनता है ॥

बछड़ेसे बिछुड़ी गैयाकी, जो दशा समझ लो होती है।
है कौशल्याकी दशा वही, डकरा डकरा कर रोती है॥
पीछे आते इन दोनोंकी, जब दशा निहारा रघुवरने।
'रथ शीघ्र चलाओ हे सुमन्त'! ऐसे ललकारा रघुवरने॥
जैसे तैसे कर जोड़ जभी, सारी जनताको समझाया।
घोड़ोंको गति देकर सुमन्त, रथको निकाल आगे लाया॥
दशरथ कौशल्याको फिर तो, इस भाँति लोग समझाते हैं।
आनेकी आशा है जिनकी, पहुँचाने दूर न जाते हैं॥
फिर लौट पड़े दुःखित होकर, घर घरमे हाहाकार मचा।
शिर पीट रहे हैं रो रो कर, इस दुखसे तो कोई न बचा॥
नरनारी क्या पशु पक्षी भी, खाना पीना अब भूल गए।
थे शोक सिन्धुमे या डूबे, जीवनका सुख सब भूल गए॥
दशरथ बोले कैकेईसे, जो तेरा मेरा नाता है।
है नहीं समझ ले अबसे वह, जो चला आज तक आता है॥
तेरे जो सङ्गी साथी हैं, तेरे हैं दासी दास सभी।
भेजना भूल कर भी न उन्हे, सुन ले तू मेरे पास कभी॥
मेरा मरना निश्चित ही है, इसलिए जताता हूँ तुझको।
तेरे अनुकूल भरत हो तो, कर क्रिया न दुख देवे मुझको॥
इस ओर रामके साथ कंई, पुरवासी चले जा रहे हैं।
श्रीराम देखतेहैं मुड़कर, पीछे सब चले आ रहे हैं॥
घर नहीं लौटना चाह रहे, रघुवरके समझाने पर भी।
पीछेसे दौड़े आते हैं, पैरोंके थक जाने पर भी॥

चलते चलते हो गई शाम, तब देख एक प्राङ्गण विशाल।
हो सभी एक मत लोगोंने, अपने फिर डेरे दिए डाल॥
हो गई रात तब सबके सब, निद्राके वहीं अधीन हुए।
बोले सुमन्तसे इस प्रकार, श्रीरामचन्द्र अति दीन हुए॥
यह ही अवसर है इसी समय,बस निकल पड़ें गुप चुप छुप कर।
पीछा छुड़वाना हे सुमन्त! अत्यन्त कठिन है जगने पर॥
पहले यह काम करो रथको, चहुँओर घुमा कर ले आओ।
उसमे फिर हमको बैठाओ बैठाकर आगे ले जाओ॥
पहियोंके चिन्होंके द्वारा, ये पता लगा पाएँ न कहीं।
भय है मुझको जगने पर ये, पीछे पीछे आएँ न कहीं॥
बिन इस प्रकारका यत्न किए, ये लौट न घरको जायेंगे।
यदि हम समझाना चाहेंगे, तो नहीं समझने पायेंगे॥

मन्त्रीने माना तुरत, रघुवरका प्रस्ताव।
समझ गया रघुवीरके, इस सुझावका भाव॥
इधर उधर रथको घुमा, समयोचित कर काम।
बैठ गए रथमे तुरत, सीता, लक्ष्मण, राम॥
चले गए इस भाँति जब, चकमा देकर दूर।
जाग न पाए लोग सब, थे निद्रामे चूर॥

जब प्रात हुआ तो क्या देखा? लक्ष्मण, सीता, रघुवीर नहीं।
रथ नहीं सारथी नहीं अरे? इस तीर नहीं उस तीर नहीं॥
हल चल मच गई एक दमसे, देखा पीछे आगे सब ही।
बस ढूँढ रहे हैं इधर उधर, फिर फिर भागे भागे सब ही॥

थक गए यत्न करके सब ही पर उन्हें, सफलता मिली नहीं ।
घर लौट अयोध्या जानेको, फिर भी तो जनता हिली नहीं ।।
समझाया फिर कुछ लोगोंने, तब जनता वापस लौट पड़ी ।
घर पर आने पर महिलाएँ, बस सभी एक दमसे बिगड़ीं ।।
बोलीं क्यों आए छोड़ उन्हें, अब नहीं मिलेगा सुख समझो ।
कैकेईके इस शासनमे, अब तो है दुख ही दुख समझो ।।
सौतेले बेटे पर जो मा, अन्याय सुनो! कर सकती है ?
वह कहो प्रजाको दुख देने, क्या कभी कहीं डर सकती है??
शासक ही जब अन्याई हो, क्या न्याय वहाँ हो पाएगा ?
शासक हो दुष्ट, प्रजाका फिर, सत्कार कहाँ हो पाएगा ??
ऐसे शासनमे अब अपना, कुछ दिन भी रहना ठीक नहीं ।
चुप्पी साधे अन्यायोंको, दब करके सहना ठीक नहीं ।।
कुछ लोगोंने यों कहा कि अब, देखें आगे क्या होता है ?
रहकर संयम-पूर्वक देखें, होता अब क्या समझौता है ??
कैकेईकी आज्ञासे क्या, यह राज्य भरत ले लेते हैं ?
अथवा विरोध कर माताका, अस्वीकृति अपनी देते हैं ।।
हो सकता है कि बीचमे पड़, माताकी भूल सुधार करें ।
पहले सब ठीक समझकर हम, आगेको पुनः विचार करें ।।
अपराध किया है माताने, बेटेका इसमे दोष नहीं ।
है हाथ भरतका इसमे तो, करना है फिर सन्तोष नहीं ।।
सबने विचार कर इस प्रकार, बैठे अपने घर जाकर वे ।
जो थे अशान्त हो गए शान्त, निज मनको यों समझा कर वे ।।

यह तीनों इस ओर हैं, करते हुए विहार ।
अति आनन्दित हो रहे, दृश्य निहार निहार ।।
गुह निषादके ग्रामको, पहुँचे फिर श्रीराम ।
गुह निषादके साथ थे, आए लोग तमाम ।।

नाना प्रकारके व्यञ्जनादि, रख दिए सामने ला करके ।
बोला हे राम ! ग्रहण करिए, हम सब पर आप कृपा करके।।
फिर गुह निषादको हृदय लगा, उत्तरमें यों बोले रघुवर ।
आतिथ्य आपका किया हुआ, यह स्मर्ण रहेगा जीवन भर ।।
मै कन्द मूल फल खाकर ही ये पूरे वर्ष बिताऊँगा ।
इस लिए क्षमा करिए मुझको, व्रत अपना सदा निभाऊँगा।।
सन्ध्या होते ही स्नान किया, फिर बैठ गए जा आसन पर।
नियमानुसार निश्चिन्त हुए, जप एवं सन्ध्योपासन कर ।।
सोनेका समय समझ सीता, ओ राम वहाँ सो जाते हैं ।
लक्ष्मण निषाद दोनों मिलकर, बातोंमे रात बिताते हैं ।।
जब प्रात हुआ तब रामचन्द्र, बोले सुमन्तसे जाओ तुम ।
घटना सारी समझा करके, राजाको धैर्य बँधाओ तुम ।।
हे मन्त्रिप्रवर! यह कार्य आपको, निश्चय करना ही होगा ।
श्री पूज्य पिताजीके दुखको, तुमको तो हरना ही होगा ।।
कहियेयों पूज्य पिताजीसे, वे नहीं हमारा सोच करें ।
देनेमे राज्य भरतको वे, मनमे न तनिक सङ्कोच करें ।।
फिर भरतलालसे कह देना, यों तुम तीनों माताओंमे ।
अन्तर न समझना हे भैया ! कुछ भेद न लाना भावोंमे ।।

इस आज्ञाको पाकर सुमन्त, फिर लौट अयोध्या आते हैं ।
बहुतेरा समझाते निजको, पर नहीं समझ कुछ पाते हैं ।।
इस ओर तुरत बट क्षीर मँगा, बालोंमे डाला रघुवरने ।
हाथोंसे अपने बना लिया, वह रूप निराला रघुवरने ।।
जो किया रामने उसका ही लक्ष्मणने भी अनुकरण किया ।
सब रङ्ग ढङ्ग बदला अपना, मुनियों सा बाना बना लिया ।।
इन तीनोंको निषाद गुहने, ले जा बैठाया नौका पर ।
उस पार इन्हें पहुँचानेको, फिर तुरत चढ़ाया नौका पर ।।
केवटने हाँकी नाव तुरत, नौका इस पार उतर आई ।
पश्चात् रामने लक्ष्मणको, इस भाँति बात है समझाई ।।
तुम लक्ष्मण पीछे रहो और आगे आगे मै रहता हूँ ।
हो चलें बीचमे वैदेही, यों चलो तुम्हें ज्यों कहता हूँ ।।

भरतद्वाजके स्थान पर, जा पहुँचे श्रीराम ।
परिचय अपना दे किया, सादर उन्हें प्रणाम ।।

श्रीरामचन्द्रने ऋषिवरसे, पूछा यों हे ऋषिराज हमे ।
रहनेको स्थान बता दीजे, एकान्त सुखद बस आज हमे ।।
मुनि बोले हे रघुवीर सुनो, दस कोस और आगे जाकर ।
है चित्रकूट रमणीक सुखद, उसमे जा रहिए सुख पाकर ।।
हो बिदा वहाँसे तीनों ही, फिर चित्रकूटमे आते हैं ।
कर कुटियाका निर्माण वहाँ, रह जाते हैं सुख पाते हैं ।।
मानव दें बदल विचारोंको, तो दुख सुखमय हो जाता है ।
यदि व्यर्थ करें चिन्तायें तो, फिर सुख दुखमय हो जाता है ।।

अब सुनिए इस ओरका, जो भी है वृतान्त ।
मन्त्री वीर सुमन्तने, छोड़ दिया वह प्रान्त ॥
पहुँचे रोते बिलखते, जब कि अयोध्या धाम ।
देख प्रजाकी दुर्दशा, मुखसे निकला राम ॥

सारे पुरवासी राम बिना, दुःखित हो होकर रोते हैं ।
अत्यन्त शोकमे नर नारी, रो रो कर सुध बुध खोते हैं ॥
फिर सातो द्वार पार करके, पहुँचे जा राजभवनमे हैं ।
देखा सुमन्तने महाशोक, छाया सबके ही मनमे हैं ॥
शय्या पर पड़े हुए नृपके, मन्त्री सुमन्त झट पास गए ।
सुन समाचार विस्तार सहित, नरपति हो तुरत उदास गए ॥
मच गया द्वन्द्व उर अन्तरमे, मन शान्त नहीं हो पाता है ।
उनका वह विकल कलेजा भी, रह रहकर मुँहको आता है ॥
छाती भर आई घटाटोप, आँखोंसे पानी झरता है ।
मुखसे बोला जाता न शब्द, जीना भी आज अखरता है ॥

कौशल्या कहने लगी, अब क्या होगा हाय?।
रामचन्द्र वनको गए, हमे छोड़ असहाय ॥

सबके भोजन कर लेनेपर, शेषान्न बचा रह जाता है ।
उस बचे अन्नको विप्रवर्ग, कोई भी कभी न खाता है ॥
ज्यों सिंह दूसरेकी मृगया, भूखा भी ग्रहण नहीं करता ।
अपना अपमान समझकर वह, इस भाँति न कभी पेट भरता ॥
करनेपर हवन यज्ञके जो, सामग्री बच रह जातीं हैं ।
दूसरे हवनके लिए नहीं, वे काम कभी भी आतीं हैं ॥

त्योंही यह राज्य भरत द्वारा, लेनेपर भोगा जानेपर ।
स्वीकार करेगा राम नहीं, वनसे वापिस आ जानेपर ।।
पतिदेव! आपने यह कैसा, विपरीत कर्म कर डाला है ?
ईश्वर ही जाने अब तो बस, आगे क्या होने वाला है??
पतिका भी नहीं सहारा है, सुतका भी नहीं सहारा है ।
देखो हे जगके नर नारी, कैसा प्रारब्ध हमारा है ।।
बलवान् पुत्रके होते भी, ऐसी असहाय हाय मै हूँ ?
पटरानी कहला करके भी, कैसी निरुपाय हाय मै हूँ ??"
दुख भरे शब्द सुन दशरथने, झट कौशल्यासे बोले यों ।
कर जोड़ झुकाकर शिर अपना, अपने मुखको फिर खोले यों
"अरिको भी करती क्षमा सदा, मै तो प्रिय पात्र तुम्हारा हूँ ।
इस भाँति न होओ रुष्ट देवि, मै स्वयम् भाग्यका मारा हूँ"।।
यह सुनकर बोली इस प्रकार, कौशल्या नृपवर दशरथसे ।
"कल्पना करें ऐसी न कभी, हटकर भगवन्! अपने पथसे ।।
मेरे सर्वस्व आप ही हैं, मेरे पति देव आप ही हैं ।
सुखके देने वाले जगमे, मेरे स्वयमेव आप ही हैं ।।
दुःखित चित होनेसे अनुचित, वाणी मैंने यह कह डाली ।
इस पुत्रशोकमे कह दी हैं, ये बातें दुख देने वाली ।।
रात्रियाँ पाँच बीतीं अबतक, मिल पाया कुछ भी चैन नहीं ।
पतिदेव! आपको या मुझको, कुछ मिली शान्ति दिन रैन नहीं।।"

अब तो षष्ठी रात्रिकी, आई आधी रात ।
दशरथ यों करने लगे, कौशल्यासे बात ।।

हे भद्रे! मानव अशुभ कर्म, करनेमे कभी न डरता है।
फल मिलता है जब भी उसका, तब रो रो आहें भरता है॥
मैने भी योंही अशुभ कर्म, कर लिया एक अनजानेमे।
मैं सुनो! सुनाता हूँ फिर भी, भय होता तुम्हें सुनानेमे॥
जब नहीं तुम्हारा भी विवाह था हुआ बताता हूँ तुमको।
थी तभी हुई घटना भीषण, जो एक सुनाता हूँ तुमको॥
जब सुखद सुहावन मन भावन, वर्षा ऋतुका आगमन हुआ।
आखेट खेलनेके निमित्त, फिर सुनो हमारा गमन हुआ॥
ले धनुष बाण करमे अपने, पहुँचा जा सरयूके तटपर।
चौकन्ना हो रह जाता था, मै भी पशुओंकी आहटपर॥
कोई मृगयाके योग्य जन्तु, मेरे आगे आया न जहाँ।
केवल सरयूके तटपर ही, कुछ पुन पाया था शब्द वहाँ॥
वे घने वृक्ष, तृण, लता, गुल्म, आँखोंपर थे परदा डाले।
मै देख न सकता था अहेर, पर प्राण बने थे मतवाले॥
ऐसा कुछ मुझे लगा जैसे, यह नीर पी रहा हाथी है।
रोमाञ्च तभी होते, घटना जब कभी ध्यानमे आती है॥
तरकससे तीर निकाल तुरत, धर धनुके ऊपर छोड़ दिया।
जा लगा लक्ष्यपर मैने फिर, समझा उसने दम तोड़ दिया॥
आश्चर्य हुआ मुझको उस दम, जब "हाय हाय मुखसे निकला?
किसने मारा यह तीर मुझे?" यह वाक्य बड़े दुखसे निकला??
"मै तो हूँ जटाजूट धारी, तपसी जल लेने आया था?
रे? कौन क्रूरकर्मा है तू? मैने क्या दुख पहुँचाया था??

मुझको है कोई दुःख नहीं, मेरे मरजानेपर भी तो ।
है खेद नहीं मेरी मृगया, ऐसे कर जानेपर भी तो ।।
हैं वृद्ध पिता माता मेरे, बिन मारे वे मर जाएँगे ।
यदि मुझे न देखेंगे, क्षणमे सुरपुर प्रयाण कर जाएँगे" ।
ऐसी यह करुण कहानी सुन, मन ही मनमे मैं दुखित हुआ ।
गिर पड़ा धनुष मेरे करसे, सोचा यह कैसा अहित हुआ ।।
फिर दीन मलीन हृदयसे मैं, जा पहुँचा उसके निकट वहाँ ।
उसकी वह दशा देखकर थी, हो गई समस्या विकट वहाँ ।।
वह मुझको देखा तो बोला, "राजन्! यह क्यों अपकार किया ।
अपराध किया था मैंने क्या? ऐसे क्यों बिना विचार किया ।।
वे अन्धे माता - पिता आज, प्यासे बैठे बिन पानी हैं ।
राजन्! उनसे जा शीघ्र कहो, जो भी घट गईं कहानी हैं ।।
मेरी छातीसे तीर अभी, झटसे निकाल दो हे राजन्!
सह सकता नहीं वेदना यह, कर दो समाप्त मेरा जीवन" ।।
मेरे मुखसे यों निकल पड़ा, यह हुई ब्रह्महत्या मुझसे ।
वर्षों सम बीती घड़िया वे, कौशल्ये! क्या बोलूँ तुझसे ।।
वह बोला "नृपति ! ब्रह्म हत्याके भयसे डरिए आप नहीं ।
हाँ ! पाप लगेगा निश्चय ही, पर ब्रह्म हत्याका पाप नहीं।।
हैं वैश्य पिता शूद्रा माता, इन दोनोंका मैं बालक हूँ ।
उन दुर्बल दोनों अन्धोंका, मैं ही केवल प्रतिपालक हूँ" ।।
करवटें बदलकर धरती पर, वह तड़प तड़प रह जाता था ।
अब मुझे चाहिए करना क्या? कुछ नहीं समझने पाता था ।।

अन्ततः घड़ा पानीसे भर, धीमे धीमे उस ओर चला ।
दम्पतिके पास पहुँचते ही, मेरा दुखसे रुँध गया गला ।।
मेरे जाने पर आहट पा, वे बोले "वत्स ! यहाँ आओ ।
क्यों इतनी देर हुई तुमको,? पानी लानेमे बतलाओ ।।
लग गए खेलने जलसे क्या ? भीतर झटसे अब आओ तुम!
कर रही प्रतीक्षा माता है, पानी अब उसे पिलाओ तुम !!
हम तो दोनों ही अन्धे हैं, तुम ही तो एक सहारे हो ।
वृद्धावस्थामे हे बेटा ! तुम ही तो एक हमारे हो ।।"
हे कौशल्ये ! धीमेसे मै, उनके आगे जैसे तैसे ।
"मै श्रवण नहीं हूँ दशरथ हूँ, करके प्रणाम बोला ऐसे ।।
हाथी है समझ अँधेरेमे, मैने उसको है मार दिया ।
अपराध हुआ अक्षम्य देव ! उसको मैने संहार दिया ।।"
कुछ क्षणके लिए अचेत हुए, जब चेते तो बोले "आओ ।
है पड़ा जहाँ शव वहीं हमे, हे राजन! चलकर पहुँचा ओ ।।"
मै उन्हें सहारा दे करके, ले गया नदीके तीर वहाँ ।
बेटेका शव गोदीमे ले, वे करने लगे विलाप महा ।।
"हे राजन्! पाप किया, उसका हो रहा आज सन्ताप तुम्हे ।
इस ही कारण हम देते हैं, यह छोटासा ही शाप तुम्हे ।।
जिस पुत्र शोकमे हम राजन् ! मर रहे दुखोंको पाकरके ।
तुम भी बस पुत्र विरहमे पड़, मर जाना कष्ट उठाकरके ।।"
यों कहकर वे दोनो प्राणी, जल गए चितामे फिर गिरकर ।
मैं भी अपने घर लौट पड़ा, उस घोर शापको धर शिर पर ।।

इतनेमे ही हो गए, नृपवर संज्ञाहीन ।
शिथिल इन्द्रियाँ पड़गईं, दृष्टि हो गई क्षीण ।।

कुछ ही क्षणमे नृपतिके, निकल गए फिर प्राण ।
छठी रात बीती, हुआ दशरथका निर्वाण ।।

राज भवनमे मच गया, रुदन तुमुल घनघोर ।
मानो करुणा मेघ ही, छाया चारो ओर ।।

कौशल्याने निज गोदीमे, राजाका मस्तक उठा लिया ।
बातें इस भाँति सुनाना भी, अपने मुखसे आरम्भ किया ।।
"हे कैकेई! अब सुख पूर्वक, निश्चिन्त अवधका राज करो ।
निष्कण्टक हो कर स्वेच्छासे, मनमाने सारे काज करो ।।
वन गए राम, राजाधिराज देखो अब स्वर्ग सिधाए हैं ।
अतिरिक्त तुम्हारे, हम सबके, अब निश्चय दुर्दिन आए हैं ।।
बहकाकर तुम्हें कूबरीने, रघुकुलके पतिको नष्ट किया ।
हम सबको बना दिया विधवा, तुमको भी है पथ भ्रष्ट किया ।।
अपना विवेक खोकर जो भी, ओरोंकी बात मानते हैं ।
अन्ततः दुःख पाना पड़ता, जिसको सुख प्रथम जानते हैं ।।"
इतनेमे आए गुरु वशिष्ट, समयोचित सबको समझाया ।
फिर महाराजका शव, संरक्षित मञ्जूषामे रखवाया ।।
मन्त्रियों ब्राह्मणोंके द्वारा, परिषदमे निर्णय हुआ जभी ।
शत्रुघ्न, भरतको ले आने, दूतोंको भेजा गया तभी ।।
सिद्धार्थ, विजय, नन्दन, जयन्त, एवं अशोकको बुलवाया ।
आदेश दिया जो देना था, फिर भली भाँतिसे समझाया ।।

कैकय नरेशके यहाँ दूत, जाकर सन्देश सुनाते हैं।
पर नृपकी मृत्यु हो गई है, यह बात नहीं बतलाते हैं॥
फिर कहा भरतसे, गुरुवरने, दोनोको तुरत बुलाया है।
सन्देश मात्र इतना ही है, कारण कुछ नहीं बताया है॥
यह सुन बोले फिर भरतलाल, "दशरथ महिपाल कुशलतो हैं?
श्रीरामचन्द्र, सीता एवं, श्रीलक्ष्मणलाल कुशल तो हैं??
कौशल्या और सुमित्रा मा, क्या दोनो ही प्रसन्न चित हैं?
आठो मन्त्री श्रीवशिष्ठादि, सबके सब ही आनन्दित हैं ??
अतिक्रूर करनेवाली, माता कैकई कुशल तो हैं?
हे दूतो! प्रथम बताओ यह, सब लोग कुशल मङ्गल तो हैं??"
उत्तरमे बोले दूत जभी, हे भरत! कुशल मङ्गल हैं सब।
है कृपा आप पर लक्ष्मीकी, कर कृपा आप बस चलिए अब॥
भरतने विदा ली नानासे, नानाने नाना विधिसे फिर।
वस्तुएँ अनेक प्रेमसे दे, इस भाँति कहा गुणनिधिसे फिर॥
"हे भरत! बड़ोंके लिए हमारा, नमस्कार कह देना तुम।
छोटोंको कहना प्यार और, शुभ समाचार कह देना तुम॥"
हो विदा वहाँसे चले भरत, पर बना रहा संशय मनमे।
कुछ समझ नहीं पाते थे क्यों? हो रहा आज है भय मनमे??

रातें बीती सात तब, आए जन ये सात।
घुसे अयोध्यामे तभी, था हो रहा प्रभात॥

देखी यह दशा अयोध्याकी, आता जो कोई सम्मुख है।
यह ज्ञात हो रहा है जैसे, कुछ पड़ा हुआ उनपर दुख है॥

उद्यानोंमे जाकर जो जन, सोकर सब रात बिताते हैं।
वापिस घर जाते हुए आज, कोई न दृष्टिमे आते हैं॥
जो हलचल रहती सड़कोंपर, उनपर सन्नाटा छाया है।
अद्‌भुत ही वातावरण देख, मन शान्त नहीं हो पाया है॥
बाजार, दुकानें, घर अपने, कोई भी नहीं सजाए हैं।
हे दूत! हमारे मनमे तो, हो रहीं अशुभ शङ्काएँ हैं॥
जब राज भवनमे पहुँचे तो, यह देखी दशा वहाँपर भी।
चहुओर उदासी पाते हैं, जाते हैं जहाँ जहाँपर भी॥
जिस जगह पिता बैठा करते, उनको जब वहाँ नहीं पाया।
अपनी मातासे मिलनेका, फिर तो विचार मनमे आया।
बेटेको आता देखा जब, माँ गई तुरत ले आनेको।
सोनेकी चौकी ला रक्खी, अपने सुतको बैठानेको॥
शङ्कित हो भरत देखते हैं, घरको औ अपनी माताको।
मन ही मन करने लगे स्मरण, अपने फिर भाग्य विधाताको॥
माताके चरणोंको छूकर, सब समाचार कह देते हैं।
जो दिए द्रव्य नानाने थे, अच्छी प्रकार कह देते हैं॥
माताने सुतसे कहा "पुत्र! नृपका देहान्त हो गया है।
अर्थात् अवधपतिका सहसा, वह जीवन शान्त हो गया है॥"
यह सुनकर व्याकुल हुए भरत, कुछ क्षण मूर्च्छित हो जाते हैं।
श्रीरामचन्द्रसे मिलनेकी, अभिलाषा पुनः बताते हैं॥
कैकेईने, यों कहा "लखन ओ सीता राम गए वनको।
तीनोंको भेजा उधर, इधर नृपने दे डाला जीवनको॥"

माताकी ये बातें सुनकर, कुछ भी तो समझ नहीं पाए।
धीरज मिलना तो दूर रहा, वे अपितु और भी घबराए ॥

वन गमन रामका सुन करके, यों भरत कल्पना करते हैं।
"यों हुआ गमन वन तीनोंका, क्यों"? भरत कल्पना करते हैं ॥

"श्रीराजा रामचन्द्रने क्या, ब्राह्मणके धनको हर डाला?
या निर अपराध किसीका वध, क्या अपने हाथों कर डाला??

या किसी पराई नारीको, कामुकतावश हो हरण किया?
वन हुआ रामको क्यों माता, कुछ उनने दुष्टाचरण किया??"

माताने कहा भरतसे यों, "कुछ किया अशुभ है काम नहीं।
नैतिकतासे ये गिरे काम, कर ही सकता वह राम नहीं ॥

बेटे! तेरा ही हित करने, राजासे राज लिया मैंने।
बाधा न पड़े कुछ भी आकर, इससे वनवास दिया मैंने ॥

सीता, लक्ष्मण ये दोनो भी, अपनी इच्छासे साथ गए।
जब राम हुए वनवासी तो, फिर स्वर्गलोक नरनाथ गए ॥

अन्त्येष्टि कर्म कर राजाका, अपना सिंहासन लो बेटा!
निष्कण्टक राज्य करो अब तो, मनमे प्रसन्न होओ बेटा!!"

श्री भरतलाल बोले ऐसे, "बिन मृत्यु मार डाला तू ने।
अपना भी साथ हमारा भी, मुख कर डाला काला तू ने ॥

करने उजाड़ इस घरको, क्या? बतला इस घरमे आई थी?
हे पतिघातिनि! यह दुख देनेको ही मुझको उपजाई थी??

जिसने तुझसे माता समान, उत्तम व्यवहार किया प्रतिदिन।
बिन भेद भाव रक्खे मनमे, तुझसे है प्यार किया प्रतिदिन ॥

तेरे स्वभावसे डरकर ही, कौशल्या सदा चला करती ।
अपना कर लेती बुरा किन्तु, तेरा तो सदा भला करती ।।
इस पर भी तूने यह बदला, किसलिए लिया यह तो बतला ?
हम सबका ही ऐसा यह क्यों, अपकार किया यह तो बतला ??
यदि तेरे साथ रहा होता, श्री रामचन्द्रका स्नेह नहीं ।
तो तुझे त्याग देता माता!, इसमे कोई सन्देह नहीं ।।
राजाकी रानी हो तूने, इस राज नियमको तोड़ा है ।
छोटेको लेकर राज, बड़ेको तूने वनमे छोड़ा है ।।
हे पापिन्! कभी करूँगा मै, तेरी इच्छाका काम नहीं ।
राजा उनके बन जाने तक, ले पाऊँगा विश्राम नहीं ।।
जाऊँगा उनके पास और उनको लौटाकर लाऊँगा ।
कहता हूँ अपने मनकी मै, कुछ चैन न तब तक पाऊँगा ।।
माता होकर वैरी जैसा, दूषित यह काम किया तूने ।
अपनेको और साथमे ही, मुझको अपकीर्ति दिया तूने ।।"
इतनेमे आई कौशल्या, तानेके साथ कहा ऐसे ।
नीचा दिखलाने वैरीको, कह देता है वैरी जैसे ।।
कौशल्या उसी भाँति बोली," अब सारा राज्य तुम्हारा है ।
तुमको कामना रही, वह सब कुछ आज तुम्हारा है ।।
है राम जहाँपर वहां मुझे, हे भरत! शीघ्र ही पहुँचा दो ।
औ साथ साथ ले जाऊँगी, मै अपने सङ्ग सुमित्राको ।।"
वेदना भरी वाणी सुनकर, श्रीभरत चेतना हीन हुए ।
क्षण भरमे जागृत हो बैठे, मनसे अत्यन्त मलीन हुए ।।

मन ही मन लगे सोचने यों, "विश्वास दिलाऊँ कैसे मैं ?।
निर्दोषी हूँ शतप्रतिशत यह, माँको समझाऊँ कैसे मैं ?॥
मैं कहता हूँ जो भी बातें, सच्ची हैं ये कब मानेगीं ?।
करनेपर लाख यत्न मेरे, झूठा ही मुझको जानेगीं॥
पड़नेपर काम सभी मानव, जगमे मिथ्या कहते ही हैं।
चिकनी चुपड़ी बातें करके, सच्चे बनकर रहते ही हैं॥
यों कहने लगे प्रकटमे फिर, "सौगन्ध मुझे है ईश्वरकी।
कहता हूँ साथ प्रतिज्ञाके, यह बात तुम्हें उर अन्तरकी॥
इस अघटित घटनामे माता! जो समझ रही हैं आप मुझे।
हो सम्मति इसमे मेरी तो, लपटें सब जगके पाप मुझे॥
मै सत्य तुम्हें कहता हूँ माँ ! मुझको है कुछ भी पता नहीं।
जो कुछ भी इधर हुआ इसका, है ज्ञान मुझे सर्वथा नहीं॥"
कौशल्या बोली "बात यही, सच है तो है सन्तोष मुझे।
मैं ही क्या? लोग जगत् भरके, कह देंगे ही निर्दोष तुझे॥"
मुनिवर वशिष्ठ बोले ऐसे, हे भरत! न अधिक विचार करो।
अब चलो शीघ्रता सहित, नृपतिका पूर्ण मृतक सँस्कार करो॥
इतना सुनते ही भरत उठे, दशरथका शव मँगवाते हैं।
सुन्दर रथपर रख कर उसको, नाना विधिसे सजवाते हैं॥
इसके आगे पीछे अश्वा-रोही सैनिक दल चलता है।
विस्तृत उस पुरी अयोध्याका, नरनारी मण्डल चलता है॥
पहुँचे सरयूके तीर सभी, कुछ घण्टोंमे चलते चलते।
नृपका शव चन्दन चिता बीच, रख दिया दिवस ढलते ढलते॥

॥ निर्दोषी व्यक्ति अन्ततो गत्वा निर्दोषी ही रहता है॥

नानाप्रकारके औषध भी, ला लाकर डाल दिए उसमे।
गोघृतसे मन्त्रोंके द्वारा, विधिवत् फिर हवन किया उसमे।।

सामगानके बीच था, हुआ मृतक संस्कार।
सभी शुध्द हो सरितमे, पहुँचे निज निज द्वार।।

पूर्ण मृतक संस्कार सब, होनेके पश्चात्।
उदासीन रहने लगे, वे दोनों ही भ्रात।।

है एक दिवसकी बात, भरत बैठे सन्ताप कर रहे थे।
लम्बी साँसें ले लेकर वे, आहों पर आह भर रहे थे।।
बोले शत्रुघ्न भरतसे यों, राजाने जो वनवास दिया।
कर्तव्य समझ श्री रघुवरने, मानो उसको स्वीकार किया।।
पर लक्ष्मण तो सम्मुख डटकर, राजाजीसे लड़ सकते थे?
अन्याय न्यायका निर्णयकर, लड़ने आगे बढ़ सकते थे??
इतनेमे सजधज कर सम्मुख, मन्थरा वहाँ आ जाती है।
क्या जाने क्या करके विचार, मनमे फूली न समाती है।।
जो द्वारपाल था उसने आ, झटसे जाकर इसको पकड़ा।
श्री शत्रुदमनके आगे ही, चटसे लाकर कर दिया खड़ा।।
बोला हे देव! इसी कुबड़ीके द्वारा ही बहकानेपर।
वनवास मिला रघुनन्दनको, नृप हुए विवश मर जानेपर।।
यदि इस दुष्टाके द्वारा जो, अनुचित व्यवहार नहीं होता।
तो निश्चय ही इस भाँति यहाँ, सब बण्टाढार नहीं होता।।

माता कैकेईको भड़का, प्रोत्साहन जो देती न कहीं ।
हे रिपुसूदन! है बात सत्य, यह घटना होती कभी नहीं ।।
यह सुनते ही रिपुसूदनने, चोटीको पकड़ दिया झटका ।
मारा अत्यन्त कुपित होकर, फिर मार मार नीचे पटका ।।
श्री भरत बीचमें पड़ बोले, यद्यपि यह पिता घातिनी है ।
पर, नारी होनेसे अबध्य है, यद्यपि महापापिनी है ।।
श्री रामचन्द्र हैं धर्म निष्ठ, यह बात न उनको भाएगी ।
लग गया पता उनको भैया! ,सब बात बिगड़ ही जाएगी ।।
वे नहीं करेंगे बात कभी, भैया ! फिर सुनो तुम्हारेसे ।
इसलिए न हो पाए कुछ भी, ऐसा अपराध हमारेसे ।।
भाईकी आज्ञाका पालन कर, छोड़ दिया रिपुसूदनने ।
मनको मसोसकर बैठ गये, माना सन्तोष नहीं मनने ।।

कहा मन्त्रियोंने तभी, बड़े विनयके साथ ।
राज्य ग्रहण कर लीजिए, अब तो हे नरनाथ! !
कहा भरतने मैं नहीं, भोगूँगा यह राज ।
सुने मन्त्रिपरिषद् सभी! , मेरा निश्चय आज ।।

पूरी न कभी होने दूँगा, कैकेईकी अभिलाषाको ।
निश्चय समझो पूरी मुझको, करना है अपनी आशाको ।।
उनका अधिकार उन्हें देकर, राजा मैं उन्हें बनाऊँगा ।
उनके बदलेमें वनवासी बन, मैं जङ्गलमें जाऊँगा ।।
मन्त्रियों ! व्यवस्था चलनेकी, जो भी हो वह करदी जाए ।
ऊबड़ खाबड़ धरती सारी, समतल करके भर दी जाए ।।

खाद्यान्न तथा जल पीनेकी, सुन्दर अनुकूल व्यवस्था हो।
हो कष्ट न कहीं किसीको भी, ऐसी सुखमूल व्यवस्था हो॥
जो भी चलना चाहें वे सब, चलनेको अब तैयार रहें।
पैदल, अश्वोंपर जन रक्षक, चलनेको सब तैयार रहें॥
रक्षा - मन्त्रीसे कहा जाय, तैयार रखें सेना सारी।
हाथी, घोड़े, रथ, ऊँट और, तैयार रहें सब अधिकारी॥
इस भाँति भरतजी सबको ले, चल पड़े उन्हें लौटानेको।
आगए वहाँ जितने पुरजन, तैयार हुए थे जानेको॥
जनता गङ्गाकी भाँति उमड़ कर, बढ़ती हुई जा रही है।
धरतीकी धूलि ठोकरोंसे, बस चढ़ती हुई जा रही है॥
जो लोग दूरसे दृष्टिपात, करते उनको भय होता था।
है किसी नृपतिकी सेना यह, मनमे यों संशय होता था॥
इस ही संशयसे गुह निषादके, दूतोंने उससे जाकर।
"आ रहे भरत हैं" इस प्रकार, कह दिया कानमे समझाकर॥

गुह निषादको जब पता लगा, हुआ सन्देह।
क्योंकि इसे था हो गया, रामचन्द्रसे स्नेह॥

सोचा यों भरत रामका वध, करने तो नहीं जारहे हैं?
वध उन्हे न करना है तो क्यों? दल बलके साथ आरहे हैं??
हो सकता है समझाकरके, उनको लौटाना चहते हों?
हो सकता है उनको जाकर, कुछ बात और ही कहते हों??
झट बुला साथियोंको अपने, बोला तुम सब तैयार रहो।
हो सावधान सबके सब ही, साधे अपने हथियार रहो॥

हो बुरी भावनासे प्रेरित, यदि लड़ना ही ठाना होगा।
तो हमको भी साहस पूर्वक, आगे बढ़ डट जाना होगा।
पर प्रथम मिलेंगे हम उनसे, बातोंसे पता लगाएँगे।
यदि सोचा हुआ सही निकला, तो तुमको तुरत बुलाएँगे॥

यों कहकर आगे बढ़ा तुरत, स्वागतके व्याज पता लेने।
मनके भावोंको छुपा वहीं, पहुँचा अपना परिचय देने॥
देखा सुमन्तजीने, निशाद स्वागत करनेको आते हैं।
तब भरत सहित आगे बढ़कर, उनको फिर गले लगाते हैं॥

बोले "बस राम मिलें झटसे, ऐसा उपाय बतला दीजे।"
बोला निषाद "पहले अपना, सब अभिप्राय बतला दीजे॥"
यह सुनकर बोले भरत "हमे, उनको वापिस ले जाना है।
शङ्का न करो हे गुह निषाद! करते हम नहीं बहाना है॥"

फिरसे यों बोले भरतलाल, "वह सारी कथा सुनाओ तो।
थे रहे कहाँ? सोये खाए? वे सारे स्थान दिखाओ तो॥"
अथसे लेकर इत्यन्त सभी, गुहने वह कथा सुनादी है।
वे रहे सभी किस भाँति कहाँ? वह सारी बात बतादी है॥

यों कहने लगे भरत "ओहो! सोकर अनाथकी भाँति यहाँ?
क्या जीवन राम बिताए हैं, होकर अनाथकी भाँति यहाँ??
हा! सीता जैसी सुकुमारी, ऐसे ये कष्ट उठाती हैं?
दुर्भाग्य हमारे हैं जिससे, इस भाँति सताई जाती हैं??

हे लक्ष्मण! धन्य धन्य हो तुम! भाई तो तुम जैसा ही हो।
भाई तो कहलाता वह ही, विपदामे जो-कि सहायी हो॥

मुझ जैसे अधम व्यक्तिका तो, जगमे आना ही व्यर्थ हुआ ?
मेरे कारण ही तीनोंपर, ऐसा यह हाय अनर्थ हुआ ??

यों विलाप करते हुए, बीती सारी रात ।
चलनेको तत्पर हुए, जब हो गया प्रभात ।।

नौकाओंपर बैठकर, उतरे गङ्गा पार ।
भरद्वाज मुनिराजसे, पा आदर सत्कार ।।

बिना रुके आगे बढ़े, हो मनमे निर्भीक ।
पहुँच गए था पहुँचना, उसी स्थानपर ठीक ।।

इधर रामने दूरसे, देखा दृश्य विचित्र ।
लक्ष्मणसे कहने लगे, देखो तो सौमित्र! !

सब जीव जन्तु भयके मारे, क्यों भागे हुए जा रहे हैं ।
घन घोर और ऊँचे ऊँचे, सुननेमे शब्द आ रहे हैं ।।

हाँ वनमे खड़ा हो गया है, निश्चय कोई उत्पात यहाँ ।
कुछ नहीं समझमे आता है, हो गई आज क्या बात यहाँ??

ऊँचे चढ़ देखा लक्ष्मणने, सेनाकी घटा छा रही है ।
हे राम ! होइये सावधान, यह झञ्झा नई आरही है ।।

सुन कहा रामने देखो तो, किसकी उड़ रही पताका है ?
हाँ यह भी देखो ध्यान लगा, उस ध्वज पर चिह्न लगा क्या है??

लक्ष्मण बोले हे आर्य ! मुझे, देता यह भरत दिखाई है।
मै समझ रहा हूँ, निश्चय ही, उसमे आगई बुराई है ।।

हे राम ! आपको और मुझे, वह वध कर दिया चाहता है ।
अपने शासनको शत्रु रहित, निष्कण्टक किया चाहता है ।।

हे आर्य! भरतका वध कर दें, है योग्य समय वध करनेके।
क्यों नहीं मार डालें उसको, पहले हम अपने मरनेके ॥
दुष्कर्मीके वध करनेसे, किञ्चित् भी होगा पाप नहीं।
मर जाय भरत इसका मुझको, होगा कुछ पश्चात्ताप नहीं ॥
सुन शब्द सुमित्रानन्दनके, श्रीरामचन्द्र बोले ऐसे।
"दुष्कर्मी है यह भरतलाल, तुमने अनुमान किया कैसे ??
क्या कभी किसीका अहित किया है, उसने मुझे बताओ तो ?
मन कर्म वचनसे भरतलालके, कोई दोष लगाओ तो ??
इस भाँति तुम्हारा ठीक नहीं, बिन सोचे अशुभ वचन कहना।
मनमानी व्यर्थ कल्पना कर, लड़नेके हित तत्पर रहना ॥
यदि तुमको राज्य चाहिए ही तो, हम तुमको दिलवा देंगे।
है राज्य तुम्हारा ही सारा, उनसे स्वीकार करा देंगे ॥
बोले श्रीराम सुनो लक्ष्मण! वे हमें लिवाने आए हैं।
वनसे हम सबको लौटाकर, घरपर ले जाने आए हैं" ॥
लक्ष्मण बोले ऐसा है तो, निज पिता तुल्य मानूँगा मैं।
दशरथ नरेश ही आए हैं, सुतको लेने जानूँगा मैं ॥
मै तो सच्चेका साथी हूँ, किससे भी रखता बैर नहीं।
अत्याचारी औ पापीके, आगे मै पड़ता पैर नहीं ॥
केवल मै यही चाहता हूँ, हो कभी कहीं अन्याय नहीं।
लड़ना पड़ता है जब, कोई रहता है अन्य उपाय नहीं ॥
लक्ष्मणने धैर्य किया धारण, रघुनन्दनके समझानेपर।
आगे जो होता है सुनिए, श्रीभरतलालके आनेपर ॥

मुख मलीन अतिदीन ज्यों, वनवासी-सा वेश ।
धूल धूसरित और सब, बिखर रहे हैं केश ।।

इस ओर ढूँढते हुए भरत, आगे ही चले आ रहे हैं ।
श्रीरामचन्द्र का पता अभी, निश्चित-सा नहीं पा रहे हैं ।।
चलते चलते फिर दीख पड़ी, जो लहरा रही पताका थी ।
है रघुनन्दनकी कुटिया यह, यों दर्शा रही पताका थी ।
फिर निकट गए कुटिया देखी, देखा उस महातपस्वीको ।
सीताको, लक्ष्मणको देखा, आनन्द हुआ तब तो जीको ।।
हा आर्य ! शब्द मुखसे निकला, रुँध गया कण्ठ है रो रोकर।
चरणोंको छूनेसे पहले, गिर गए, क्षणिक मूर्च्छित होकर ।।
श्रीरामचन्द्रने उठा लिया, गोदीमे बैठाया सत्वर ।
रिपुसूदनने भी चरण छुए, शीघ्रता सहित आगे बढ़कर ।।
यों लगे पूछने राम इन्हें "हैं पिता कहाँ ? बतलाओ तो ।
सेवा तो भलीभाँति उनकी, करते हो हमे सुनाओ तो ।।
जननी कौशल्या और सुमित्रा कैकेई सकुशल तो हैं ।
साथ ही अन्य माताओंके, परिवार बीच मङ्गल तो हैं ।।
श्रीवशिष्ठादि ऋषि मुनियोंकी, सेवाएँ तो करते हो ना ?
कोई भी अशुभ कर्म करने, उनके आगे डरते हो ना ??
फिर हवनकुण्डकी अग्नि कहो, निशिदिन भैया जलती तो है?
जनता राजाज्ञा पालन कर, कर्तव्य सहित चलती तो है ??
वृद्धोंको सेवकादिकोंको, सम्मान दिया करते हो ना ?
वैद्योंका न्यायधीशोंका, सत्कार किया करते हो ना ?

नीतिज्ञ गुप्तचर ला लाकर, नित समाचार देते तो हैं ?
मन्त्री, सेनापति, अधिकारी, अपने विचार देते तो हैं ??

होकर प्रमादवश सन्ध्यामे, तुम कभी नहीं सोते हो ना ?
तुम सिद्ध प्रयोजन करनेमे, निरुपाय नहीं होते हो ना ??

एक ही साथ बहुतोंसे तो, करते हो कहीं सलाह नहीं ?
हो किसी काममे विलम्ब तो, होते हो निरुत्साह नहीं ??

जो गुप्त बात रखनेकी हो, बाहर तो जाती नहीं कहीं ?
अथवा वैरीके कानोंमे, जाकर पड़ पाती नहीं कहीं ??

जो घूस न खाते हों उनको, उत्तम पद तो देते हो ना ?
छोटेसे छोटा तथा बडोंसे, काम बड़ा लेते हो ना ??

चालाक धूर्त मक्कारोंके, फन्दोंसे तो बचते हो ना ?
उत्तम लोगोंके आगे तुम, उत्तम शासक जचते हो ना ??

मासिक वेतन जिनका, उनको, क्या कहो समय पर देते हो?
क्या सभी बिभागोंकी सुव्यवस्था, ठीक ठीक कर लेते हो??

दे देश निकाला फिर उनके, आनेपर क्या चुप रहते हो ?
चोरों के माल चुराकर ले जानेपर क्या चुप रहते हो ??

हाथी, घोडोंका बैलोंका, पोषण पालन तो करते हो ?
गौओंका गोशालाओंका, तुम सञ्चालन तो करते हो ??

अपने प्रिय प्रजाजनोंको तुम, दर्शन देते रहते हो ना ?
उनसे रख स्नेह भाव मनमे, प्रिय वचन सदा कहते हो ना??

सब दुर्ग सभी शस्त्रास्त्रोंसे, सज्जित तो रहते होंगे ही ?
सब सैनिक रणमे जानेको, हर्षित तो रहते होंगे ही ??

हे भरत! आयसे अधिक कहीं, व्यय तो करते होंगे न कभी?
पड़ व्यर्थ मनोरञ्जनमे व्यसनोंपर मरते होंगे न कभी ??
हे तात! ध्यान रखते हो ना? दोषी तो छूट न जाता है?
रखते होंगे यह लक्ष्य सदा, निर्दोषी दण्ड न पाता है??
अनुचित उपायसे जनताका, शोषण तो कभी न करते हो?
लोगोंको सता सता अपना, पोषण तो कभी न करतें हो??
पड़ नाच रङ्गके कामोंमे, विषयोंमे लिप्त न रहते हो?
जूएके व्यसनी होकर तुम, व्यसनोंमे तृप्त न रहते हो??
अच्छा भैया! अब कहो हमे, किस कारणसे तुम आए हो?
आएसो ठीक किया पर हाँ! उद्देश्य साथ क्या लाए हो??

भरतलाल कहने लगे, "हे रघुकुलके नाथ!
अपना राज सम्हालने, चलें हमारे साथ ॥

अग्रजके रहते राज भला, छोटा कैसे ले सकता है ?
रघुकुलका नियम नहीं है यह, कोई कैसे दे सकता है ??
हम तो थे मामाके घरमे, इस ओर तुम्हें वनवास हुआ ।
हो गया पिताका स्वर्गवास, उसका न हमे आभास हुआ ॥
हम घर आए जब पता चला, फिर तो हम कर क्या सकते थे?
आगए आपके पास यहाँ, फिर कहो कहाँ जा सकते थे"??
जब पूज्य पिताका मरण सुना, कुछ क्षण मूर्छा छाई तनमे ।
जागे तो बोले इस प्रकार, कातर हो चिन्तित हो मनमे ॥
हे भरत! पिताजीने मेरे कारण जब प्राण गँवाए हैं?
तब फिर क्यों इतना श्रम करके, तुम मुझको लेने आए हैं??

तीनोका रोना सुनकरके, सब लोग इधर ही आ पहुँचे ।
थे भरत, लक्ष्मण, सीता सब, बस उसी ओरको जा पहुँचे ।।

श्रीरामचन्द्रने यथायोग्य, सब लोगोंको सम्मान दिया ।
फिर कुशल आदि पूछी सबकी, बैठाया सबको स्थान दिया।।

माताओंको कर नमस्कार, गुरु आदि सभीको नमन किया ।
आपसमे एक दुसरेका दुख, शोक आदिका शमन किया ।।

हो गई रात सोए सब जन, जागे जब हुआ सवेरा है ।
पश्चात् सभाकी एक बड़ी, राघवको सबने घेरा है ।।

"श्रीभरतलाल बोले भैया ! यह भूल पिताजीने की है ।
नारीके वश हो बात सभी, प्रतिकूल पिताजीने की है ।।

सब लोग पिताजीकी निन्दा, करते हैं तनिक विचार करें ?
हैं पुत्र आप उनके इससे, अब तो यह भूल सुधार करें ??

कैकेई और पिताजीका, मेरा कल्याण इसीमे है ।
हम तीनोका भी हे भैया ! समझो सम्मान इसीमे है ।।

जब आप अयोध्याके राजा, बनकर जगको दिखलाएँगे ।
उद्धार तभी होगा सच्चा, औ कीर्ति तभी हम पाएँगे ।।

हे आर्य ! आप यदि कह दें तो, अभिषेक यहीं पर कर दें हम ।
सबके जो मुख मुरझाए हैं, सो क्लेश सभीके हर दें हम ।।

उत्तरमे राम लगे कहने, हे भरत ! कहा तुमने जो है ।
दृढ़तापूर्वक कहते हम हैं, स्वीकार नहीं यह हमको है ।।

है एक बात यह भी भैया, जब ब्याह किया था नृपवरने ।
कैकेईके हैं पिता, उन्हे यह वचन दिया था नृपवरने ।।

जो पुत्र कैकईसे होगा, युवराज वही कहलाएगा ।
कैकय नरेश निश्चिन्त रहो, अवधेश वही बन पाएगा ।।
जो दिए पिताने वचन, सत्य पूरे सुन लो कब होएँगे ।
हम वन जाएँ तुम राज्य करें, वे वचन सत्य तब होएँगे ।।
मरनेसे पहले दो वर भी, जो अभी अभी दे डाले हैं ।
उन ही वचनोने नृपवरके, देखो न ? प्राण ले डाले हैं ।।
उनको भी पूरा करनेका, कर्तव्य हमारा है भैया !
प्रत्येक भाँतिसे सोच समझ, यह निश्चय धारा है भैया !!
हे भरत! अधिक तुम व्यथित न हों, कुछ अधिक न और विचार करो।
जो हुआ, उचित है समझ उसे, निश्चित सब कारोबार करो।।

होना अब यह चाहिए, बनकर भरत नरेश ।
लें सँभाल शासन तुरत, करें न मनमे क्लेश ।।

भरत अड़े हठ पर रहे, कहा कि "हे श्रीराम !
जाऊँगा मै लौटकर नहीं अयोध्या धाम ।।

हे आर्य ! आपके चरणोंमे, मै बैठ यहाँ धरना दूँगा ।
चाहे जो कुछ भी कहें आप, घर ले जाकर ही लौटूँगा ।।
विपरीत धर्मके ऐसा तो, करना न चाहिए काम मुझे ।"
सत्पथसे गिरनेसे पहले, कर कृपा लीजिए थाम मुझे ।।
हो गई समस्या जटिल यहाँ, दोनो भी डटे धर्म पर हैं ।
हटने अब किसको कहा जाय, दोनो कर्तव्य कर्मपर हैं ।।
ऋषियोंने देखा इस प्रकार, हैं दृढ़तर अपने वचनो पर ।
तब बोले भरतलालसे यों, अत्यन्त प्यारसे समझाकर ।।

" हे भरत ! पिताकी आज्ञाका, इनको पालन करने ही दो ।
हठपूर्वक इनको इस प्रकार, चलनेको अब मत विवश करो ॥
है उचित बात इनकी भी यह, ज्यों उचित तुम्हारा कहना है ।
तुमको न राज्य लेना है तो, इनको भी वनमे रहना है ॥"
श्रीभरतलालको तो कुछ भी, है सूझा और उपाय नहीं ।
मनमे यों सोचा किसी भाँति, हो पाया पूरा न्याय नहीं ॥
तब तुरत खड़ाऊँ स्वर्णजड़ित, दोनों ही उनके आगे धर ।
बोले हे तात ! हमे दे दो, इनको इन चरणोसे—छूकर ॥
प्रतिनिधि इनको ही समझ आपका ही स्वरूप मै जानूंगा ।
चौदह वर्षोंतक इनकाही, सेवक अपनेको मानूंगा ॥
सेवककी यह भी विनय कहें, हे नाथ ! नहीं मानेगे क्या ?
क्या अभी परीक्षा बाकी है, क्या अभी और तानेगे क्या ??
श्रीराम खडाऊँ पहन तुरत, श्रीभरतलालको देते हैं ।
अत्यन्त भक्तिके साथ भरत, अपने शिर पर धर लेते हैं ॥
बोले " चौदह बर्षोंतक मै अब कन्दमूल ही खाऊँगा ।
शिर जटा बढ़ा वल्कल पहने, जीवनको सफल बनाऊँगा ॥
नगरीके बाहर रहकर ही, देखूँगा बाट आगमनकी ।
हे राम ! ध्यानसे सुने आप, कहता हूँ वात आज मनकी ॥
निश्चय दिनपर आए न आप, तो मुझे न जीवित पाएँगे ।
हे आर्य! वचन देकर मुझको, कहिए यह वचन निभाएँगे??"
प्रभु "बोले ऐसा ही होगा, हेभरत! तनिक भी भय न करो ।
इस रामचन्द्रके वचनोंपर, मनमे अपने संशय न करो ॥"

॥ अपना अधिकार छोडो मत, अन्योंके अधिकारको छूओ मत ॥

फिर बोले हे शत्रुघ्न ! सुनो, हम तुम्हें बताए देते हैं ।
करना न रोष कैकेई पर, यह तुम्हें जताए देते हैं ।।
ली बिदा रामसे और तुरत, आगे अब तो बढ़ गए भरत ।
धर शिर पर युगल पादुकाएँ, रथके ऊपर चढ़ गए भरत ।।
जैसे तैसे चलते चलते, आ गए अयोध्यामे सारे ।
फिर नन्दीग्राम भरत पहुँचे, पादुका युगल शिर पर धारे ।।
विधिवत् अभिषेक पादुकाका, करके रक्खा सिंहासन पर ।
राजाका प्रतिनिधि बना इन्हें, निश्चित व्रत मनमे धारण कर।।

एक दिन रामने यों लखनसे कहा ।
बन्धु जागो न, देखो सवेरा हुआ ?
जीव वनके सभी चह चहाये रहे ।
देख लो दूर सारा अँधेरा हुआ ।।
हाँ ! जगे रातमे थे अधिक देर तुम ।
आँखमे नीन्दका ह बसेरा हुआ ।।
बात सुनकर लखन ऊठ बैठे तुरत ।
हो गया दूर आलस्य घेरा हुआ ।।

चित्रकूटसे चल दिए, सीता लक्ष्मण राम ।
पहुँचे ये तींनो जने, तभी अत्रिके धाम ।।
रामचन्द्रका अत्रिने, किया विविध सत्कार ।
अनसूयाने सियासे, किया उचित व्यवहार ।।

अनसूया बोली हे सीते ! तुमने जो किया उचित ही है ।
प्रतिकूल परिस्थितिमे पतिके, सङ्ग रहना इसमे हित ही है ॥
जो श्रेष्ठ नारियाँ होती हैं पतिका नित आदर करती हैं ।
देवता तुल्य ही समझ उन्हें, सेवा जीवन भर करती हैं ॥
सीताने कहा कि पति गुरु हैं' यह बात जानती हूँ मै भी ।
पति जो भी हैं हैं पूजनीय, यह बात मानती हूँ मै भी ॥
पर इन्द्रियजित जिसका पति हो.फिर क्यों उससे हो स्नेह नहीं?
उसका सत्कार करे पत्नी, तो आश्चर्य सन्देह नहीं ॥
मेरे पति तो हैं महाबली, पर परनारीसे डरते हैं ।
श्रीकौशल्या माके समान, आदर सबका ही करते हैं ॥
अति उत्तमतासे रखते हैं, व्यवहार सदा मेरे सङ्गमे ।
आदर सत्कार सहित रखते हैं, प्यार सदा मेरे सङ्गमे ॥
अपने वचनोका निशिदिन ही, दृढ़तासे पालन करते हैं ।
असहाय पीडितोंके दुखको, निर्भयतापूर्वक हरते हैं ॥
चारो ही भ्राता प्रेम सहित, रहते आपसमे मिल जुलकर ।
विद्वेष, ईर्षा, भेद न रख, बातें भी करते हैं खुलकर ॥
कर पूर्ण पिताजीके प्रणको, उस महाधनुषको भङ्ग किया ।
विजयी बनकर रघुनन्दनने, फिर विवाह मेरे सङ्ग किया ॥
किस भाँति दिया वनवास कैकयीनें, सब बातें कहती हैं ।
अनसूया ध्यान लगा सुनती, सीता जब बातें कहती हैं ॥
फिर बोली निज माताका मै, उपदेश ध्यानमे रखती हूँ ।
माता कौशल्याका भी मै, आदेश ध्यानमे रखती हूँ ॥

समुचित आदर सबका ही कर, लेती हूँ आशीर्वाद सदा ।
छोटोंपर स्नेह सदा रखकर, देती हूँ आशीर्वाद सदा ।।
अनसूया बोली " सीता ! मै, तुमको कुछ दिया चाहती हूँ ।
सन्तुष्ट हुई हूँ इससे मै, सेवा कुछ किया चाहती हूँ ।।"
यों कहकर वस्त्राभूषण औ, उबटन चन्दन ला धरती हैं ।
अनसूयाकी वस्तुएँ सभी, स्वीकार जानकी करती हैं ।।

रात हुई तब सो गए, जागे प्रातःकाल ।
सन्ध्या हवनादिक किए, फिर दशरथके लाल ।।
बिदा माँग चलने लगे, सबसे श्रीरघुराय ।
कुछ ऋषिगण कहने लगे, इस प्रकार समझाय ।।

हे राम ! सुनो इस ही वनमे, हिंसक राक्षसगण रहते हैं ।
उनके द्वारा नाना प्रकारके, दुःख क्लेश हम सहते हैं ।।
इतना ही नहीं मनुष्योंको भी, पकड़ पकड़ खा जाते हैं ।
करते हैं अत्याचार सदा, भय नहीं किसीका लाते हैं ।।
आगे चलकर फिर एक असुर, इनके सम्मुख आ जाता है ।
सीताको छीन गर्जना कर, वह अतिशय भय दिखलाता है ।।
"कहता है अरे कौन हो तुम ? जो ऐसा वेश बानाए हो ?
ऐसी सुन्दर नारी, अपने ले साथ यहाँपर आए हो ।।
शङ्का मनमे न तनिक भी है, निर्भीक बने फिरते हो तुम ।
जैसे कि महायोद्धा ही हो, इस भाँति तने फिरते हो तुम ।।
यह नारी साथ तुम्हारे है, सङ्गमे रहनेके योग्य नहीं ।
इस सुकुमारीके अपनेको तुम, पति कहनेके योग्य नहीं ।।

यह नारी हुई हमारी है, अब हम इसको अपनाएँगे ।
इसको अब तुम्हें न दे करके, पति इसके हम कहलाएँगे ।।
तुम लोग अधर्माचारी हो, तुमको हम निश्चय मारेंगे ।
पीएँगे रक्त तुम्हारा हम, निर्दयतासे संहारेंगे ।।
जब इस प्रकारकी बात सुनी, सीता थर थर थर्राती हैं ।
इस महाभयानक राक्षसका, गर्जन सुनकर घबराती हैं ।।
इतनेमे आगे आ विराध, कन्धोंपर इन्हें चढ़ाता है ।
तीनोंको पकड़ जकड़ कर वह, हर्षाकर दौड़ा जाता है ।।
लक्ष्मणने पूछा रघुवरसे, किस भाँति कहो क्या काम करें ?
रघुवर बोले चटपट इसका, बिन सोचे काम तमाम करें ।।
दोनो भ्राताओंने उसके, दोनो ही हाथ काट डाले ।
हो गया अन्त फिर तो उसका, पृथ्वीमे उसे पाट डाले ।।
इस दुष्ट महाबलशालीका, जब इस प्रकार संहार हुआ ।
कुछ शान्ति मिली सब लोगोंको, धरतीका हलका भार हुआ।।

कुछ लोगोंने फिर कहा, हे रघुवर ! नरनाथ !
दृश्य भयानक देखने, चलें हमारे साथ ।।
दिखलाया रघुनाथको, ऊँचा अस्थि समूह ।
इतने अत्याचारकी, थी कल्पना दुरूह ।।

हे राम ! यहाँपर निशिदिन ही, असुरोंका मण्डल आता है ।
स्थानीय तपस्वी ऋषियोंका, कर ग्रास दुःख पहुँचाता है ।।
विद्वान् तपोधन ज़ो भी हैं, वे नाश हुए जाते हैं सब ।
पी रुधिर मांस खाकर राक्षस, हड्डियाँ छोड़ जाते हैं सब ।।

।। किसीके प्राण लेकर अपना पेट भरे यह बात मानवताके विरुद्ध है ।।

अतिरिक्त आपके धरती पर, आता न दृष्टिमे कोई है ।
अर्थात् बचानेवाला भी, अब तो न सृष्टिमे कोई है ।।
हे राम ! करें रक्षा सबकी, आशा हम यही लगाए हैं ।
आश्रममे रह रक्षा करिए, हम सभी शरणमे आए हैं ।।
रघुवरके मनमे हुआ खेद, देखा जब दृश्य भयानक यह ।
आए नाना विधिके विचार, सुनकर इस भाँति कथानक यह।।
सोचा उन दुष्टोंके भयसे, ये किस प्रकार रहते होंगे ।
असुरोंके अत्याचारोंको, ये किस प्रकार सहते होंगे ।।
यों कहा प्रकटमे राघवनें, मुनिजनो ! हमे अब यों न कहें ।
इस भाँति दीनता भरे शब्द, सेवक कहता है त्यों न कहें ।।
हम तो सबकी ही आज्ञाका, नित पालन करनेवाले हैं ।
सज्जनो, पीडितों, दुखियोंका, हम तो दुख हरनेवाले हैं ।।
ऋषियोंके शत्रु राक्षसोंका, वध करनेका व्रत धारा है ।
धरतीको सुखमय कर देंगे, यह शुभ सङ्कल्प हमारा है ।।
दोनो ही भ्राता मिलकर हम, परिचय देंगे अपने बलका ।
बस तभी समझना बात सत्य, जब नाश करें निशिचर दलका ।।

हम मिटाकर ही रहेंगे, पाप अत्याचारको ।
हो रहो निश्चिन्त,कर देंगे सुखी संसारको ।।
हो गया क्षत्रित्व जागृत,शान्ति अब हमको नहीं।
हो गए तैयार असुरोंके लिये प्रतिकारको ।।
शिर कुचल कर ही रहेंगे, दुष्टजन समुदायका ।
अब किनारेसे उन्हें पहुँचायँगे मझधारको ।।

।। साधारण जनताका कष्ट हरनेवालोंको ही क्षत्रिय कहना चाहिये ।।

हो चुका बस हो चूका, अब तो न होगा पाप यह।
हम मिटाकर चैन लेंगे, भूमिके इस भारको ॥
आज मनसे दे रहे हैं, आप सबको सान्त्वना ।
हाथमे अब थाम ली है, आपकी पतवारको ॥
नाश अब होकर रहेगा, दानवोंका एक दिन ।
अब बदलकर ही, रहेंगे इस कुटिल व्यवहारको ॥

मुनि अगस्त्यजीसे मिले, जाकर फिर रघुनाथ ।
आवश्यक बातें हुईं, बड़े हर्षके साथ ॥
चाप, वज्र, तरकस दिए, खड्ग धनुष औ बाण ।
ग्रहण रघुवीरने, करने जगका त्राण ॥
फिर पूछा रघुवीरने, हे मुनि ! नीतिनिधान!
रहनेको बतलाइए, हमको कोई स्थान ॥

मुनि बोले समझ गए हम सब, क्यों यहाँ न रहना चाह रहे ।
साथ ही बात अपने मनकी, तुम हमे न कहना चाह रहे ॥
आ सकते असुर यहाँ न कभी, इस लिए न रहना है तुमको ?
हे राम! ठीक समझा हमने? बस! यही न कहना है तुमको??
ऐसा ही स्थान चाहते हैं, हो असुरोंका आगमन जहाँ ।
यदि ऐसे स्थल पर रहना हो, कर दें दनुजोंका दमन जहाँ ॥
अच्छा लो स्थान बहुत सुन्दर, ऐसा ही तुम्हें बताते हैं ।
इच्छा हो पूर्ण तुम्हारी भी, भूभाग वही दिखलाते हैं ॥
है पञ्चवटी अति ही समीप, सुन्दर है सुखद महान् सुनो ।
ऊँचे गिरि शिखर लताएँ, तरू, अति ही सुरम्य है स्थान सुनो ॥

बहती है गोदावरी जहाँ, प्राकृतिक दृश्य अति सुन्दर हैं।
नाना प्रकारके फूल फलादिक, लगे हुए धरतीपर हैं ॥

हे राम ! रहो तीनो जाकर, सीताका मन लग जाएगा ।
लक्ष्मणके साथ साथ, अति ही आनन्द तुम्हें भी आएगा ॥

ऋषिसे ले बिदा चले तीनो, आगे जटायु मिल जाते हैं ।
"दशरथ हैं मित्र हमारे" कह, अपना परिचय बतलाते हैं ॥

फिर कहते हैं हे राम ! सुनो, रह करके साथ सदा ही मै ।
सीताकी रक्षा किया करूँगा, हे रघुनाथ ! सदा ही मै ॥

ले लिया साथमे उनको भी, फिर पञ्चवटीकी ओर चले ।
ऋषिने जो स्थान बताया था, बस उसी ओर आकर निकले ॥

फल फूलोंसे था भरा, चलता त्रिविध समीर ।
थी समीप गोदावरी, बहता सुन्दर नीर ॥

मनमोहक सुन्दर सुखद, अति सुरम्य सुस्थान ।
रामानुजने कर दिया, कुटियाका निर्माण ॥

करते थे नित्य भ्रमण तीनो, स्नानादिक करने जाते थे ।
फल, कन्द, मूलको खा, अपना जीवन सानन्द बिताते थे ॥

है एक दिवसकी बात, राक्षसी एक वहाँपर आ निकली । ।
वह कामरूपिणी थी ऐसी, ज्यों सुन्दरताकी प्रथम कली ॥

श्रीरामचन्द्रकी छबि निहार, कामातुर होकर बोली यों ।
परिचय पानेको इस प्रकार, निज वाणी उसने खोली यों ॥

"धारणकर वेश तपस्वीका, फिर धनुषबाण भी धारे हैं ।
पत्नीको लेकर साथ आप, किस कारण यहाँ पधारे हैं ?॥

यह तो है स्थान राक्षसोंका, राक्षस सब यहाँ विचरते हैं।
मुझको यह बात बताओ तो, फिर आप यहाँ क्या करते है??"

यह सुनकर बोले राघवेन्द्र, "हम दशरथ सुत कहलाते हैं।
ये लक्ष्मण अनुज हमारे हैं, जो सदा साथ हो जाते हैं॥

इस जनकदुलारी सीताको, साथ ही साथ ले आए हैं।
माताकी आज्ञा शिर पर रख; वनमे आकर हम छाए हैं॥

हम तुमसे पूछ रहे बोलो, किसकी तुम कौन कहाँकी हो?
फिरती हो सदा अकेली ही, बतलाओ हमे जहाँकी हो??"

वह बोली "रावण, कुम्भकर्ण, खर, दूषण जो बलशाली हैं।
ये भाई हैं मेरे, हम तो, लङ्काकी रहने वाली हैं॥

है भाई एक विभीषण भी, वह तो बस व्यक्ति निराला है।
वह परम धार्मिक है फिर भी, लङ्काका रहनेवाला है॥

हे श्रेष्ठ पुरुष! सच समझो मै, पति तुम्हें बनाने आई हूँ।
स्वीकार करेंगे आप मुझे, ऐसी अभिलाषा लाई हूँ॥"

सुनकर ये शब्द राक्षसीके, बोले श्रीराम वचन ऐसे।
"हम तो हो चुके विवाहित हैं, फिर तुम्हें कहो ब्याहें कैसे??

हाँ! यह देखो लक्ष्मण जो हैं, ये तो अब तलक कुमारे हैं।
कितने सुन्दर हैं वीर्यवान्, फिर ब्रह्मचर्य व्रत धारे हैं॥

तुम इनसे अपना ब्याह करो, सौतिनका भी न तुम्हें भय है।
निश्चय करके सुख पाओगी, यह राय हमारी निश्चय है॥"

यह सुनकर शूर्पणखा फिर तो, श्री लक्ष्मणजीके पास गई।
ये बात मान लेंगे मेरी, ऐसा करके विश्वास गई॥

बोली हे लक्ष्मण! मुझसे तुम, सुख पूर्वक प्रेम विवाह करो।
प्रिय पत्नी मुझे बना करके, उत्साह सहित निर्वाह करो।।

लक्ष्मण बोले हे देवि! रामका सेवक आज्ञाकारी हूँ।
इसलिए क्षमा कर दो मुझको, मै बहुत बहुत आभारी हूँ।।

सेवकसे तुम विवाह करके, सुख नहीं कभी भी पाओगी।
इस एक भूलके लिए देवि! तुम जीवन भर पछताओगी।।

श्रीरामचन्द्रजी राजा हैं, सुन्दर हैं सुदृढ़ अङ्गके हैं।
यह जोड़ी कितनी प्रिय होगी, जब दोनों एक रङ्गके हैं।।

लक्ष्मणके ये वाक्य सुन, बड़े हर्षके साथ।
मोहित हो आई जहाँ, बैठे सीतानाथ।।

सोचा इसने हृदयमे, पत्नी है जो साथ।
अपनाते हैं इस लिए, नहीं मुझे रघुनाथ।।

ऐसा कुविचार लिए मनमे, चाहा सीता पर वार करूँ।
कर दूँ समाप्त सारा झगड़ा, इस समय यहीं संहार करूँ।।

दौड़ी सीताकी ओर जभी, क्रोधित हो बोले राम तभी।
हे लक्ष्मण! क्रूर राक्षसीके, तुम नाक कान लो काट अभी।।

आज्ञा पाते ही लक्ष्मण भी आए, कर बीच कटार लिए।
उस महापापिनी शुर्पणखाके, नाक कान चट काट दिए।।

फल पाया क्रूरकर्मका यों, चटसे चल पड़ी वहाँसे यह।
जाने उस ओर लगी अब तो, आई थी निकल जहाँसे यह।।

रोती चिल्लाती अकुलाती, उस अड्डे पर पहुँची जाकर।
कुछ बात चीत कर रहे जहाँ, बैठे त्रिशिरा, दूषण औ खर।।

लोहूसे लथपथ इसे देख, खर दूषणने ललकार कहा।
की किसने दशा बता ऐसी, पगको धरतीपर मार कहा॥
बतला तू उसका नाम, ग्राम, मानव वह कौन कहाँका है ?
है साधारण मनुष्य, अथवा वह कोई क्षत्रिय बाँका है॥
कोई भी हो मैं जाकर अब, बदला लेकर ही छोड़ूँगा।
देखूँगा कौन कहाँका है, उसके घमण्डको तोड़ूँगा॥
वह बोली राम और लक्ष्मण, अवधेशकुमार कहाते हैं।
सीता नामी सुन्दर नारीको, साथ लिए इतराते हैं॥
उस नारीके कहने पर ही, छोटेने शस्त्र निकाला है।
कुलटाओंके जो योग्य दण्ड, वह दण्ड मुझे दे डाला है॥
भैया! तुम उनको संहारो, मैं लोहू उनका पीऊँगी।
अपने भैयाके द्वारा मैं, बदला लेकर ही जीऊँगी॥
इतना सुनते ही आज्ञा दी, वीरोंको, बढ़ आगे आओ!
उन दोनों राजकुमारोंको, चटपट यमपुरमें पहुँचाओ!!
इस प्रथम बार, चौदह योद्धा, उस शूर्पणखाके साथ गए।
इनको जब आते देखा तो, हो सावधान रघुनाथ गए॥
सीताको सौंप लक्ष्मण पर, उठ गए राम आगे बढ़कर।
दी लगा शक्ति असुरोंने भी, पर सफल न हो पाए लड़कर॥
वे चौदहके चौदहों वहाँ, मर गए रामके हाथोंसे।
धरतीपर त्राण न मिल पाया शरके अचूक आघातोंसे॥
मरने वालोंके समाचार, जब शूर्पणखाने पहुँचाए।
तब खर दूषणके साथ साथ, चौदह सहस्र योद्धा आए॥

शस्त्रोंसे सज्जित धुआँ धार, इस धूल उड़ाती सेनाको ।
श्रीरामचन्द्रने देखा जब, असुरोंकी आतीं सेनाको ।।
लक्ष्मणसे बोले भैया ! तुम, सीताके सहित चले जाओ ।
जब तक इनको संहार न दूँ, तब तक मत लौट यहाँ आओ ।।
लक्ष्मण सीताको सङ्ग लिए, झट गए गुफामे जा बैठे ।
शस्त्रास्त्र सँभाले, सीताकी समुचित करनें रक्षा बैठे ।।
सेनाने आते ही आते, ऐसा अचूक आक्रमण किया ।
देखा कौशल्या नन्दनने, संख्यापर पहले ध्यान दिया ।।
फिर भली भाँति हो सावधान, सज्जित हो गए कमर कसकर ।
चौदह सहस्त्र असुरोंसे वे, लड़ रहे अकेले हँस हँस कर ।।
कट कट गिरते थे रुण्ड मुण्ड, भीषण संहार हो रहा था ।
इस भाँति राम द्वारा हलका, धरतीका भार हो रहा था ।।
थे महाँबली योद्धा सब ही, पर कोई सम्हल न पाते हैं ।
जो भी सम्मुख आ जाते हैं, यमपुरको सीधे जाते हैं ।।
क्या जाने? क्या था चमत्कार, उसको तो वही जानते थे ।
उस युगके जो भी योद्धा थे, लोहा वे सभी मानते थे ।।
अत्यन्त भयानक युद्ध हुआ, अन्ततः राम जय पाते हैं ।
चौदह सहस्त्र योद्धा जो थे, वे सारे मारे जाते हैं ।।

लक्ष्मण भैया रामसे, मिले हुआ आनन्द ।
सीता भी हर्षित हुईं, मिटा हृदयका द्वन्द ।।
असुर अकम्पनने कहा, रावणसे तत्काल ।
किस प्रकार यह असुर दल, गया कालके गाल ।।

रावणने झट क्रोधसे, नेत्र कर लिए लाल ।
इस प्रकार ललकार कर, बोला नेत्र निकाल ।।

हो गई आयु किसकी समाप्त, आया है मुझसे लड़नेको ।
किसने यह हाथ बढ़ाया है, मृगपतिकी मूछ पकड़नेको ।।

है नाम बताओ उसका क्या, रहनेका स्थान कहाँपर है?
उससे भी परिचित करो हमे, रहता इस समय जहाँपर है ।।

भयभीत अकम्पन हो बोला, वे हैं दशरथ कुमार दोनो ।
हैं शूर, वीर, नीतिज्ञ और निश्चय हैं समझदार दोनो ।।

है नाम राम, लक्ष्मण उनका, माताने भेजा है वनमे ।
निर्भीक साहसी ऐसे हैं, भय कभी न लाते हैं मनमे ।।

हैं सुदृढ़, वीर, सुन्दर शरीर, उत्तम आजानु भुजाएँ हैं ।
दण्डक वनमे है पञ्चवटी, इस समय वहाँपर आए हैं ।।

है जनकराज कन्या सङ्गमे, जिसका कि नाम श्रीसीता है ।
उसके ही पति हैं रामचन्द्र, सङग्राम उन्होंने जीता है ।।

सम्मति मेरी है यही आप, उनकी पत्नीको हर लाएँ ।
जीवन भर पछताएँगे वे, सीताको अपने घर लाएँ ।।

रावण बोला अच्छा तो हम, इस समय अकेले जाएँगे ।
सीता नाम्नी उस नारीको, लङ्कामे लेकर आएँगे ।।

रावण उठकर चल दिया तुरत,रहता था खल मारीच जहाँ ।
बीती बातें विस्तार सहित, समझाकर बोला उसे वहाँ ।।

रावण बोला "इसलिए आज, यह काम हमे करना होगा ।
उस रामचन्द्रकी नारीको, छलके द्वारा हरना होगा ।।

मारीच बीचमे बोल उठा, किसने ऐसी सम्मति दी है?
सीताको हर कर लानेकी, तुमने यह क्यों इच्छा की है??
ऐसी यह सम्मति दी जिसने, निश्चय वह शत्रु हमारा है।
लङ्केश! आपका सर्वनाश, करना ही हाय? विचारा है॥
सीताको हरकर सिंहरूप, रघुवरको मत जगाइयेगा।
यह बात मान लीजे मेरी, लङ्काको लौट जाइयेगा॥

लौट गया रावण जभी, सुनकर इनकी बात।
शूर्पणखा रोती हुई, आई तत्पश्चात्॥
आँखों देखा दृश्य सब, कह डाला तत्काल।
कैसे थे बतला दिया, वे दशरथके लाल॥
पुनः लौट मारीचके, निकट गया लङ्केश।
बोला हरना पड़ेगा, मेरे मनका क्लेश॥

जब आप कनकमृग बनकर, उन तीनोके आगे जाएँगे।
हम साधु वेशधारी बनकर, सीताको हर ले आएँगे॥
ले काट बहिनके नाक कान, कैसे फिर आए क्रोध नहीं?
ऐसे दुष्टाचारीसे क्या, मै लूँ कुछ भी प्रतिशोध नहीं??
वे पुरुष कहा करके जगमे, अबला पर हाथ उठाते हैं।
नारीसे करते छेड़ छाड़, मनमे न तनिक भय खाते हैं॥
अपनी अयोग्यताके कारण, जब घरको नहीं सम्भाला है।
निर्लज्ज, बापने समझ इन्हें, नारीके सहित निकाला है॥
लङ्काधीश्वर होकर मै, क्या इनसे लड़ने भय खाऊँगा?
बिन लिए बहिनका बदला मै, चुप्पी साधे रह जाऊँगा??

॥ विनाशकालमे, बुद्धि विपरीत हो जाती है॥

बोला मारीच "विरोधीजन, सबको ही खारा लगता है।
हाँमे हाँ सदा मिलाए वह, सबको ही प्यारा लगता है ।।
निर्बल द्वारा करवा लेना, यह व्यर्थ बड़ाई सस्ती है।
ले लो तुम मोल लड़ाईको, यह क्योंकि लड़ाई सस्ती है ।।
परनारी हरनेका राजन्! परिणाम भयङ्कर होता है।
उसका फिर पश्चात्ताप सुनो, जगमे जीवन भर होता है ।।
नारीका रुदन मचा देता, इस जगमे महाप्रलय समझो।
नारीको हरकर लानेपर, है सर्वनाश निश्चय समझो ।।
शत्रुको समझ लेना निर्बल, यह कहो बुद्धिमानी है क्या?
है शक्ति राममे कितनी कुछ, यह बात कभी जानी है क्या??
अनुमान किए बिन वैरीका, यों आगे बढ़ना ठीक नहीं।
छोटीसी घटनाको लेकर, इस भाँति अकड़ना ठीक नहीं ।।
जो राजा सर्वेसर्वा बन, मनमानी ही कर जाता है।
निश्चय वह एक दिवश अपनी, नैया मझधार डुबाता है ।।
इसलिए मन्त्रियोंसे विचार, अच्छे प्रकारसे कर लो तुम।
कर झगड़ा आप अकेले ही, यों मत अपने ऊपर लो तुम" ।।
फिर विश्वामित्र यज्ञ वाला, वृत्तान्त सुनाया रावणको।
जितना भी समझा सकता था, उतना समझाया रावणको ।।
रावणने एक नहीं मानी, उल्टे ही डाँट बताई है।
बोला "हे दुष्ट! बताओ तो, क्या मृत्यु तुम्हारी आई है"??
मारीच डरा डरके मारे, हाँ भर ली अब तो चलनेकी।
बनकर सुवर्णका मृग सुन्दर, तैयारी कर ली छलनेकी ।।

मारीच साथमे रावणके, फिर पञ्चवटीमे आता है।
लङ्कापतिकी इच्छानुसार, तीनोको छलने जाता है ॥
श्रीसीता, राम, लक्ष्मणकी, कुटियाके आगे चरता है।
चलता है कभी उछलता है, अभिनय भी पूरा करता है ॥
फिर कभी बैठ जाता है तो, फिर कभी छलाङ्गे भरता है।
मानव कोई दिख जाय उसे तो, उससे मानो डरता है ॥
सीताने जब इसको देखा, तब तुरत पुकारा रघुवरको।
लक्ष्मण भी आए साथ साथ, तीनोने देखा मृगवरको ॥
लक्ष्मण बोले" हेआर्य! सुने! है असुर नीच मारीच यही।
धोखा देकर छल करनेको, आया है वनके बीच यही ॥
यह मृग है यों समझे न आप, मृग कभी न ऐसा होता है।
हेआर्य! जानते ही हैं मृग, इस जगमे जैसा होता है" ॥
यह सुनकर सीता मुसकाई, लक्ष्मणको चटपट टोक दिया।
राक्षसके छलसे मोहित हो, आगे कहनेसे रोक दिया ॥
बोलीं "हेआर्यपुत्र! इसको, यदि आप यहाँ ले आएँगे।
अपना मन भी बहलाएँगे, फिर अवधपुरी ले जाएँगे ॥
यदि जीवित पकड़ न सकें आप, ले आएँ इसे मारकर ही।
मै कहती हूँ यह बात आज, मनमे अपने विचारकर ही" ॥
लक्ष्मणसे बोले रामचन्द्र, "यद्यपि यह मृग मायाका है।
तो भी हमको तो नाश आज, करना इसकी कायाका है ॥
क्या जाने कितने ऋषियोंको, छलसे इसने खाया होगा ?
कितने ही परिवारोंको यह, क्या दुःख न पहुँचाया होगा ??

इसलिए आज हम तो इसको, निश्चय समझो मारेंगे ही ।
अतिशीघ्र अभी औ इसी समय, इसको तो संहारेंगे ही ॥
हे लक्ष्मण! सीता सहित यहाँ, तुम सावधान होकर रहना ।
जाना न अकेली छोड़ इन्हें, बस यही हमारा है कहना" ॥
धर दिया धनुषपर तीर और मृगके पीछे हो जाते हैं ।
कुछ दूर गये पीछा करते, फिर उसको मार गिराते हैं ॥
मारीच नीच मरते मरते, रावणकी बात निभाता है ।
"हा सीते! लक्ष्मणको! भेजो" यों कहकर वह चिल्लाता है ॥

सीताजीने जब सुने, शब्द ध्यानके साथ ।
लक्ष्मणसे कहने लगीं, इस प्रकारकी बात ॥

"हेलक्ष्मण! सङ्कटमे पड़कर, तुमको रघुवीर बुलाते हैं ।
तुमने भी शब्द सुने ही हैं, हो गई कहीं कुछ घातें हैं ॥
अपने भाईकी रक्षामे, अब सुनो! विलम्ब लगाओ मत ।
उनकी सहायता करो शीघ्र, तुम ऐसे मुह लटकाओ मत ॥
क्यों नहीं मानते बात आज, यों चुप होकर क्यों बैठे हो?
उत्तर कुछ नहीं दे रहे हो? किस कारण मुझसे ऐंटे हो??
ऐसी विपत्ति आने पर भी, तुमको उनसे है स्नेह नहीं ?
तुम मित्र रूपमे वैरी हो, इसमे कोई सन्देह नहीं ॥
तुम मुझे प्राप्त करनेको ही, विपरीत कामना करते हो ।
बस इसीलिए निर्भय होकर, यों आज सामना करते हो" ॥
भय व्याकुल सीतासे लक्ष्मण, यों शान्त भावसे कहते हैं ।
"भैया पर जय पाने वाले, कल्पना लोकमे रहते हैं ॥

इसलिए कभी ऐसे विचार, मनमे भी लाना ठीक नहीं ।
हेदेवि! आपको इस प्रकार, ये वचन सुनाना ठीक नहीं ।।
छिड़ गई लड़ाई असुरोंसे, इसलिए हमे अति संशय है ।
तुमको यों छोड़ अकेलेमे, जाऊँ, इससे मुझको भय है" ।।
सीताने करके नेत्र लाल, यों कहा कि मै पहचान गई ।
तुम भरतलालके भेदी हो, यह बात आज मै जान गई ।।
होगा न भरतका कार्य सिद्ध, यह लक्ष्मण! तुमको ध्यान रहे ।
निष्कण्टक हो न सकेगा वह, तुमको इसकी पहचान रहे ।।
यह सुनकर हाथ जोड़ लक्ष्मण, बोले "तुम मेरी माता है ।
हो जाते हैं विचार उलटे, विपरीत समय जब आता है ।।
ऐसी असह्य बातें करके, मेरा मन आज दुखाया है ।
नारियाँ किया करती ही हैं, जो तुमने कर दिखलाया है ।।
कटु वचन तुम्हारे सुनकर ये, बिन इच्छा ही जाता हूँ मै ।
तुम सावधान होकर रहना, फिर भी यह समझाता हूँ मै" ।।
यह कहकर चले गए लक्ष्मण, रावण फिर स्वाङ्ग बनाता है ।
अर्थात् साधुका वेश लिए, सीताके सम्मुख आता है ।।
अतिरूपवती सीताजीको, जब देखा ध्यान लगा कर वह ।
हो कामबाणसे पीड़ित फिर, होगया खड़ा चट जाकर वह ।।
सीतासे लगा पूछने यों, "तुम कौन कहाँकी नारी हो ।
सुन्दर, सुडौल, हँसमुख ऐसी, कितनी सुयोग्य सुकुमारी हो ।।
देवी, किन्नरी, अप्सरा, या गन्धर्वी, यक्षसुता हो तुम ।
हो साक्षात् रतिके समान, सच बतलाओ तो क्या हो तुम??

अतिरिक्त राक्षसोंके कोई, मानव न यहाँ आ सकता है।
मानव असुरोंका भोजन है, फिर लौट नहीं जा सकता है ॥
तुम जैसी रूपवती युवतीका, वनमे आना ठीक नहीं।
सुख भोगो राज भवनमे तुम, ऐसे दुख पाना ठीक नहीं" ॥
कुश आशन पर बैठा उसका, श्रीसीताने सत्कार किया।
ब्राह्मण हैं समझ ब्राह्मणका, आदर एवं व्यवहार किया ॥
कर नमस्कार साग्रह उसको, जल दिया चरण धो लेनेको।
कुछ कन्द मूल फल ले आईं, कुटियासे उसको देनेको ॥
अपना पूरा पूरा परिचय, दे दिया आदिसे अन्त तलक।
उल्लेख घटी घटनाओंका, फिर किया आदिसे अन्त तलक ॥
"द्विजश्रेष्ट! सुनो दोनो भाई, अतिशीघ्र आ रहे ही होंगे।
भोजनके लिए पदार्थ कई, वे सङ्ग ला रहे ही होंगे" ॥
इतना सुनते ही बोला वह, हम लङ्काके पति रावण हैं।
देखोगी तो होगो प्रसन्न, लङ्का अति ही मन भावन हैं ॥
हैं कई रानियाँ उनकी मैं, पटरानी तुम्हें बनाऊँगा।
फिर पाँच सहस्र दासियाँ भी, सेवामे तुरत लगाऊँगा ॥
इतना सुनते ही सीताने, क्रोधित हो कहा "अरे कायर!
ले जाना तू है चाह रहा, चोरी द्वारा मुझको हरकर??
चोरीसे मुझको ले जाकर, फिर शान्ति नहीं पाएगा तू।
रखलेना बात ध्यानमे यह, निश्चय मारा जाएगा तू ॥
अर्थात् आज तेरे हाथों, मेरा जो कहीं हरण होगा।
तो राघवेन्द्रके हाथोंसे, तेरा ले समझ मरण होगा ॥

घृत दूषित कभी नहीं होता, उसमे मक्खी मर जानेपर ।
जाती न सतीकी सात्विकता, बल पूर्वक हर ले जाने पर ॥

हो दुष्ट दुराचारी शासक, तो नाश प्रजाका होता है ।
राजाके साथ साथ समझो, बस ह्रास प्रजाका होता है ॥

इसलिए मरेगा तू भी औ, राक्षस भी साथ मरेंगे ही ।
यदि तेरे साथ राक्षसगण, तुझसा अन्याय करेंगे ही ॥

रावणने अपना वहीं, मङ्गवा लिया विमान ।
सीताको उसमे बिठा, किया तुरत प्रस्थान ॥

हा नाथ! नाथ! कहती सीता, रोती चिल्लाती जाती थीं ।
रावणके पञ्जेमे फँसकर, वे विवश न कुछ कर पाती थीं ॥

जिस समय जटायु दिखा इनको, तब तुरत पुकारा सीताने ।
हेवीर! हमारी, सुधि लेना" यह वचन उचारा सीताने ॥

रावणके सम्मुख आ जटायु, ऐसे उसको समझाता है ।
"तू देख अकेली नारीको, लेकर क्यों भागा जाता है??

यों ले जाना अच्छा है क्या, चोरोंकी भाँति चुराकरके?
जीया क्या सुख पूर्वक कोई, औरोंका कभी बुरा करके??

कुछ दिनसे इनकी रक्षाका, है भार लिया अपने ऊपर ।
इस लिए छोड़ दे इन्हें आज,यह दया मित्र मुझ पर ही कर ॥

अपने वचनोका हेरावण! मुझको पालन करना होगा ।
इनकी रक्षा करने मुझको, अथवा तुमको मरना होगा" ॥

अनसुना कर दिया रावणने, फिर तो जटायु अतिक्रुद्ध हुआ ।
तब आपसमे इन दोनोका, अत्यन्त भयङ्कर युद्ध हुआ ॥

जी जान लगाकर लड़कर भी, रावणसे हार खा गये हैं।
नीचा दिखला कर कई बार, फिर भी वे मार खा गये हैं॥

मूर्च्छित हो वीर जटायु वहीं, गिर गये सभी सुध बुध खोकर।
लङ्कापति रावण सीताको, ले उड़ा पुनः निर्भय होकर॥

जाते जाते श्रीसीताने, जब बैठे कुछ वानर देखे।
रावणकी आँख बचाकर, कुछ वस्त्र और भूषण फेंके॥

सीताको लङ्कामे ले जा, अन्तः पुरमे ठहराता है।
फिर बुलवा आठ राक्षसोंको, इस भाँति उन्हें समझाता है॥

तुम गुप्त रूपसे रह उनके, सब समाचार लेते रहना।
करते क्या राम लक्ष्मण हैं? वे समाचार देते रहना॥

पहुँचा फिर भव्य भवनमे जा, श्रीसीता जहाँ रो रही थीं।
बैठीं बैठीं निशिचरियोंमे, व्याकुल अत्यन्त हो रही थीं॥

रावण बोला "हेसीते! अब, मुझको यदि तुम अपनाओगी।
ऐश्वर्य सभी भोगोगी ये, मन वाञ्छित सुखको पाओगी"॥

सीता बोली "रघुवीर तुझे, हेदुष्ट! अवश्य संहारेंगे।
दे दुष्कर्मोंका दण्ड तुझे, निश्चय वे मुझे उबारेंगे॥

तेरे तो सर्वनाशका ही, ले देख समय अब आया है।
बस इसी लिए तो लङ्कामे, कर हरण मुझे तू लाया है"॥

यह सुनकर फिर रावण बोला "अब तो यह वचन सहूँगा मै।
हेसीते! बारह मासों तक, तुझको कुछ भी न कहूँगा मै॥

इतने लम्बे अवसरमे भी, यदि तू न समझ कुछ पाएगी।
तो बोटी बोटी कर तेरी, सब निशिचरियाँ खा जाएँगी॥

इसको अशोक वनमे रक्खो, कहकर रावण चल दिया तुरत।
रावणकी आज्ञाका पालन, उन निशिचरियोंने किया तुरत ।।

—:○::○:—

अब सुनिए इस ओरकी, जो कुछ भी है बात।
चिन्तित मन ही मन हुए, इस प्रकार रघुनाथ ।।

"मारीच बीचमे अन्त समय, लक्ष्मणका नाम पुकारा था।
इसमे रहस्य कुछ है अवश्य, यह मनमे मैने धारा था ।।
लक्ष्मण जो चले आ रहे हैं, इसका बस यह ही कारण है।
मनमे जो शङ्का थी मेरी, उसका हो गया निवारण है ।।
लक्ष्मणसे बोले उन्हें अकेली "छोड़ यहाँ जो आए हो।
भैया! यह बुरा किया तुमने, कुछ ध्यान न इसका लाए हो ।।
अतिकाय भयङ्कर दनुजोंने, अब उन्हें मार डाला होगा।
भक्षण करनेको उनका शिर धड़से उतार डाला होगा" ।।
लक्ष्मण बोले "इच्छा विरुद्ध, सीताने मुझे पठाया है।
करके कटु वचनोका प्रहार, मन मेरा बहुत दुखाया है" ।।
सीताने जो जो बातें कीं, लक्ष्मणने सारी दुहराई।
चिन्तातुर पैर बढ़ाकर फिर, आश्रममे पहुँचे रघुराई ।।
आतुरतासे जाकर ज्यों ही, देखा वह कुटिया सुनी है।
वज्राहत अन्तरमे उनके, व्याकुलता छाई दूनी है ।।
ऊँचे स्वरसे श्रीरामचन्द्रने, वहाँ पुकारा सीताको।
आगे पीछे दाएँ बाएँ, चहु ओर निहारा सीताको ।।

होकर अशान्त जानकी कान्त, शिर धुन धुन कर पछताते हैं।
हो जाते हैं मनमे निराश, जब पता न कुछ भी पाते हैं।।
उन्मत्त सदृश करते विलाप, वे यहाँ वहाँ सब ठाओंसे।
सीताका पता पूछते हैं, खग, मृग औ वृक्ष लताओंसे।।
कोई तो मुझे बता देता, वे वैदेही हैं कहाँ गई?
हम भी जाएँगे अभी वहीं, वे जनक नन्दिनी जहाँ गई।।
हे प्रिये! तुम्हारे बिन कैसे, हम लौट अयोध्या जाएँगे?
मा पूछेगी जानकी कहाँ, तब क्या कहकर समझाएँगे??
हे लक्ष्मण! धर्मरुपिणीकी, रक्षा कर पाया धर्म नहीं।
उस पति-व्रताकी रक्षामे, आए कुछ काम सुकर्म नहीं।।
फिर कौन बताओ मानेगा, उस न्यायनियन्ता ईश्वरको?
इस कारण ही न मानते हैं, कुछ लोग परम जगदीश्वरको??
हे लक्ष्मण! अपने बाणोंसे, हम, उथल पुथल कर डालेंगे।
देखो इन सभी प्राणियोंके प्राणोको हम हर डालेंगे।।
लक्ष्मण बोले हे राघवेन्द्र! ऐसा तो करना ठीक नहीं।
निर्दोष प्राणियोंके भैया! प्राणोको हरना ठीक नहीं।।
पहले सीताका पता लगा, आगेको सोचा जाएगा।
कर देंगे उसका सर्वनाश, जब वैरी सम्मुख आएगा।।
सङ्कटमे धैर्य करें धारण, विपदाका करें निवारण भी।
आरम्भ कार्यके करनेसे, हम प्रथम ढूँढलें कारण भी।।
फिरते फिरते फिर दीख पड़े, अधमरे जटायु सामने हैं।
आश्चर्य चकित होकर उनसे, पूछा इस भाँति रामने हैं।।

।। धार्मिक व्यक्ति पर संकट आनेके समय प्रायः नास्तिकता आ जाती है ।।

हेवीर! दशा ऐसी किसने, की है यह हमे बताओ तो ।
लेंगे अवश्य प्रतिशोध, प्रथम, विस्तार सहित समझाओ तो ।।

किसने सीताका हरण किया, बतलाएँ उसका नाम हमे ।
बिन प्राप्त किए सीताको अब, लेना कब है विश्राम हमे ।।

यों जटायु कहने लगे, धीमे स्वरमे बात ।
रावणने जिस भाँतिसे, किया यहाँ उत्पात ।।

विश्रवा पुत्र विख्यात असुर, रावण कुबेरका भाई है ।
लङ्काका पति, जिसकी फिरती, चारो ही ओर दुहाई है ।।

मानव, दानव सब देव असुर, जिससे रहते भयभीत सदा ।
स्वच्छन्द विचरता फिरता है,कर काम सभी विपरीत सदा ।।

उसके ही द्वारा हेरघुवर! बलपूर्वक सीता हरण हुआ ।
उसके ही हाथोंसे मेरा, देखिये! आज यों मरण हुआ ।।

अब प्राण निकलने वाले हैं, इससे कुछ बोल नहीं सकता ।
सारा शरीर क्षत विक्षत है,मुँह अब तो खोल नहीं सकता ।।

यों कहते हुए जटायु तभी, अन्ततः वीरगति पाते हैं ।
सीताकी रक्षा करनेमे, बलि होकर सुयश कमाते हैं ।।

दोनो भ्राताओंने मिलकर, उनका अन्तिम संस्कार किया ।
फिर दुखद-स्थान त्याग कर वे,जानेका तुरत विचार किया ।।

चलते चलते हो गई, घटना जो भी एक ।
कर देना है अब यहाँ, उसका ही उल्लेख ।।

थी एक राक्षसी जो बढ़कर, इनकी ही ओर आरही थी ।
इनके आगे आनेमे वह, कुछ भय भी नहीं खा रही थी ।।

वह लक्ष्मण से आकर बोली, तुम हम मिल आज विहार करें ।
तुम भय न किसीका करें नाथ! आपसमे हमतुम प्यारकरें ॥
इस भाँति ढीठता की उसने, तब लक्ष्मणने सोचा मनमे ।
स्वच्छन्द बनी फिरती हैं क्या? नारियाँ सदा ही इस वनमे ॥
क्रोधित होकर उसके चटसे, नासिका कान काटे सत्वर ।
इन दोनोंकी यह दशा देख, रह गए शान्त हँसकर रघुवर ॥
आगे चलते चलते इनको, मिल गया कबन्ध नाम धारी ।
था महाभयानक राक्षस वह, डरती जिससे जनता सारी ॥
इससे भी करके युद्ध विजय, दोनो ही भाई पाते हैं ।
इस हारे हुए शत्रुको फिर, अपना वृत्तान्त सुनाते हैं ॥
रावणके द्वारा सीताका, हो गया हरण है सुना जभी ।
होकर प्रसन्न वह बतलाया, अति उत्तम एक उपाय तभी ॥
यों कहा कि हे रघुकुलभूषण! सुनिए, देता हूँ सम्मति मैं ।
जिससे सारा बन जाय काम, कहता हूँ दोनोके प्रति मैं ॥
है ऋष्यमूक पर्वत आगे, उसके ऊपर जिसका घर है ।
वह वीर, सुयोग्य, अनुभवी भी, सुग्रीव नामका वानर है ॥
हैं चार अन्य साथी उसके, जो साथ सदा ही रहते हैं ।
भाई उसका बन गया शत्रु, सब बात सुनो हम कहते हैं ॥
दुन्दुभी नामके राक्षसने, जब किया आक्रमण बाली पर ।
बालीने भी उसका पीछा, ज्यों किया कि वह भागा डरकर ॥
घुस गया गुफामे जब जाकर, तब बालीने निज भाईसे ।
यों कहा कि मै भी जाता हूँ, अब लड़ने उस अन्याईसे ॥

तुम बाहर यहीं जमे रहना, निश्चित तिथि उसको बतला दी।
भीतर जा युद्ध किया उसने, इसने पाला जो आज्ञा दी ॥
निश्चिततिथिसे भी अधिक और जब समय समझ लो बीत गया।
बालीको मार दुन्दुभी ही, इसने यों समझा जीत गया ॥
तब द्वार बन्द कर घर आया, ले लिया राज्य सिंहासनको।
निज राज्यवंश नियमानुसार, फिर लगा चलाने शासनको ॥
कुछ ही दिनमे बाली आया, कर क्रोध भगाया मार इसे।
हो गया कठिन समझो अब तो, जीना ही जगमे भार इसे ॥
साथ ही धर्मपत्नी इसकी, रूमाको निज घरमे डाला।
लघु भ्राताकी नारीके सङ्ग, करता है अपना मुँह काला ॥
भाईके भयसे पर्वतपर, वह छुपा हुआ ही रहता है।
दुःखित हो अत्याचारोंको, चुप चाप बिचारा सहता है ॥
उससे मिलनेपर कार्य आपका, पूर्ण शीघ्र हो जाएगा।
मित्रोंके साथ सहायक बन, सुग्रीव शरणमे आएगा ॥
प्रतिशोध बालिसे लेनेको, आवश्यक उसे सहायक हैं।
देखते आपको समझेगा, ये काम बनाने लायक हैं ॥
यदि उसका काम बना देंगे, कर देगा काम आपका वह।
हे राम! नहीं भूलेगा फिर, जीवन भर नाम आपका वह ॥
इतना कह वह चल दिया असुर, पहुँचे ये फिर शबरीके घर।
कर रही प्रतीक्षा वह इनकी, आते देखा जब इन्हे इधर ॥
आगे बढ़ दोनोका हार्दिक स्वागत करके बैठाती है।
इनकी भी सुनती है बातें, अपनी भी इन्हें सुनाती है ॥

आतिथ्य किया फिर भलीभाँति, फल कन्द मूल आगे धरकर।
इन दोनों ही भ्राताओंका, सत्कार किया यों जी भरकर ।।

शबरीसे लेकर विदा, दोनो अवध किशोर ।
कर विचार फिर चल पड़े, पम्पापुरकी ओर ।।

प्राकृतिक दृश्य थे जो सुन्दर, उनको निहारते जाते हैं ।
सीता सुधि कैसे ली जाए ? मनमे विचारते जाते हैं ।।
कोपायमान होकर मनमे, लङ्काकी ओर निहार रहे ।
हो सर्वनाश उसका कैसे, करते बस यही विचार रहे ।।
चलते चलते फिर ऋष्यमूक, पर्वतके निकट चले आए ।
सोचा परिचित सुग्रीव नहीं, उससे किस भाँति मिला जाए ।।
देखा सुकण्ठने जब इनको, पर्वतसे दृष्टि जमा करके ।
बोला यों तुरत साथियोंसे, मनमे अपने घबरा करके ।।
"हेवीरो! हैं ये युवक कौन? इस ओर चले क्यों आते हैं ?।
इनके आनेके कारणको, बिन जाने हम घबराते हैं ।।
ये भेजे हुए बालिके हैं अनुमान हमे यह होता है ।
वध करने हमको आए हैं, संशय यह हृदय न खोता है ।।
तुम जाकर पता लगाओ तो, हो दूर हमारा यह संशय ।
हेवीरो! इनको देख यहाँ, हो रहा आज हमको अतिभय ।।
तुम प्रथम प्रशंसा कर उनकी, बातोंसे भाव ताड़ लेना ।
यदि हानि न होती दीखे तो, अपना थोड़ा परिचय देना" ।।

यह सुनकर श्रीहनुमान् शीघ्र, भिक्षुक बन सम्मुख आते हैं।
करके प्रणाम इन दोनोको, फिर साथ साथ हो जाते हैं॥
धीमे स्वरमे बोले ऐसे, "भगवन्! यह विनय हमारी है।
हैं देव तुल्य दोनो भाई, अतिपराक्रमी बलधारी हैं॥
हैं ब्रह्मचारियोंमे अगुआ, शस्त्रास्त्र सभी कुछ धारे हैं।
सुन्दर शरीर हैं महाबाहु, किस कारण यहाँ पधारे हैं ??
फिर जटाजूट धारण करके, किसलिए हुआ आना भगवन्!
कुछ मनोभावनाएँ अपनी, हमको भी समझाना भगवन्!!
उत्तर कुछ नहीं दे रहे हैं, इसका कहिए क्या कारण है ?
अच्छा, हम अपना परिचय दे, करते सन्देह निवारण हैं॥
सुग्रीव नामके धर्मनिष्ठ, वानर जो एक यहाँपर हैं।
सचिवादि सङ्ग रहते हैं वे, पर्वत दिख रहा जहाँपर हैं॥
भाईके अत्याचारोंसे, फिरते वे भागे भागे हैं।
हनुमान् उन्हींका साथी है, जो खड़ा आपके आगे है॥
भिक्षुकका वेश बना कर हम, कुछ भेद जानने आये थे।
सुग्रीव आपके आनेपर, अपने मनमे घबराये थे॥
सुग्रीव आपके साथ मित्र, बन कर हैं रहना चाह रहे।
अपनी दुखभरी कहानीको, श्रीमन्! वे कहना चाह रहे" ॥

शब्द कुशल हनुमानके, सुननेके पश्चात्।
रघुवर बोले अनुजसे, इस प्रकारकी बात॥

"ये वाक्य विशारद पूरे हैं, कुछ शब्द कहे हैं व्यर्थ नहीं।
वेदोंका ज्ञाता हुए बिना, होता इस भाँति समर्थ नहीं॥

ये ऋग्यजु साम त्रिवेद सहित, व्याकरण शास्त्र हैं पढ़े हुए ।
भाषामे भूल न की कुछ भी, भाषणमे भी हैं बढ़े हुए ॥
मुख, नेत्र, ललाट तथा भौंहें, सब निश्छल इन्हें बताते हैं ।
ऐसे न दूत होते जिनके, वे नृपति न कुछ कर पाते हैं ॥
इनकी सुन्दर वाणी सुनकर, मोहित वैरी हो जाता है ।
ऐसा सेवक ही स्वामीके, अति उत्तम काम बनाता है"॥
लक्ष्मण बोले "हे महावीर! हमने कबन्ध द्वारा सारी ।
सुन ली सुग्रीव बालि विषयक, घटना अपूर्व विस्मयकारी ॥
अब हम अपनी बीती बातें, तुमको लो सुनो सुनाते हैं" ।
यों कहकर श्रीसौमित्र, सभी अपनी बीती समझाते हैं ॥
हनुमान् प्रसन्न चित्त होकर, दोनोको साथ लिवाकरके ।
सुग्रीव बन्धुसे दोनोको, फिर मिला दिया लेजाकरके ॥
साक्षी कर अग्नि देवताको, मैत्री की विधिवत् दोनोने ।
मित्रता निभाने आजीवन, ले लिया सुदृढ़ व्रत दोनोने ॥
दोनो समान हैं वीर पुरुष, दोनो समान दुखिया भी हैं ।
वे वानरेश, अवधेश इधर, दोनो समान मुखिया भी हैं ॥
इनकी भी नारी हरी हुई, उनकी भी नारी हरी हुई ।
ये मित्र बने जब दोनोके, मनकी फुलवारी हरी हुई ॥
सुग्रीव रामजीसे बोले, भगवन्! अब आप सहाय करें ।
हो जायँ बालिसे निर्भय हम, ऐसा कुछ सुदृढ़ उपाय करें ॥
सीता देवीका निश्चय ही जाने, हम पता लगा देंगे ।
हेमित्र! आपका सच समझें, सारा ही शोक भगा देंगे ॥

यह मन मेरा कहता है जो, बल सहित ले गया सीताको ।
वह लङ्कापति रावण ही है, छल सहित ले गया सीताको ।
पाँचोंने इसी स्थान पर ही, उड़ते विमानको देखा था ।
सम्भवतः सीताने गहनोंके, साथ वस्त्र भी फेंका था ।।

हे सखे ! उन्हें देखें यदि वे, सब कुछ सीताजीके ही हैं ।
फिर तो लङ्कापति ही था वह, औ रहीं साथ वैदेही हैं ।।
श्री राघवेन्द्रने कहा कि, वे हैं कहाँ वस्तुएँ ले आओ ।
अविलम्ब यहाँ ले आकर वे, वस्त्राभूषण सब दिखलाओ ।।

आज्ञा पा तुरत पोटलीको, जाकर सुकण्ठ ले आते हैं ।
पहचान रामने उन सबको, छातीसे तुरत लगाते हैं ।।
रघुवर बोले यों लक्ष्मणसे, "हे लक्ष्मण देखो तो इनको ।
अत्यन्त चाहसे अङ्गोंमे, वे पहना करती थीं जिनको ।।"

लक्ष्मणने कहा देव सुनलें, मैं अपनी बात बताता हूँ ।
केयूर और ये कर्णफूल, इनको पहचान न पाता हूँ ।।
हाँ ! चरणोंके जो नूपुर हैं, उनको पहचान लिया मैंने ।
नित चरणवन्दना करता था, इससे ही जान लिया मैंने ।।

बेकली देख बोला सुकण्ठ, "मैं शान्त नहीं रह पाऊँगा ।
हे मित्र ! अधीर न हों ऐसे, सीताका पता लगाऊँगा ।।
निशिचरपतिको निशिचर दलको, ऐसा हम स्वाद चखाएँगे ।
नारीकी चोरी करनेका, फल सब मिलकर वे पाएँगे ।।"

रघुवरने कहा "तुम्हारी भी, चिन्ताका भार उतारेंगे ।
हे मित्र ! जान लो सन्ध्यातक, निश्चय बालीको मारेंगे ।।

सन्तप्त हुआ अपने मनमे, सुग्रीव लगा कहने ऐसे ।
वह दुष्ट बड़ा बलशाली है, उसका होएगा वध कैसे ॥
लक्ष्मण बोले "सङ्कोच त्याग, सन्देह निकलवा लो अपना ।
जो भी विचार है छुपा हुआ, कहना हो कह डालो अपना ॥
जिससे रघुनन्दनके बलका, विश्वास तुम्हें भी हो जाए ।
भय भी न रहे मनमे बाकी, सन्देह तुम्हारा खो जाए" ॥

उसी समय सुग्रीवने, कहे वचन सस्नेह ।
दूर कृपा कर कीजिये, मेरा यह सन्देह ॥
दीख रहे हैं सात ये, निकट निकट जो ताड़ ।
इन्हें एक ही साथ जो, देगा वीर उखाड़ ॥

संहार वहीकर सकता है, उस वीर शिरोलमणि बालीका ।
दूसरा न कोई कर सकता, सामना श्रेष्ठ बलशालीका ॥
यह सुनते ही रघुवीर तभी, ऐसा कुछ बाण चलाते हैं ।
सातोंके सातों वृक्षोंको, एक ही बारमे ढाते हैं ॥
श्रीरामचन्द्रके विक्रमपर, उन सबको ही सन्तोष हुआ ॥
आशाएँ फिर बँध गईं हर्षका, एक तुमुल जयघोष हुआ ॥
तब कहा रामने "अब अपने, भाईको जा ललकारो तुम ।
शङ्का अपने मनमे रखकर, कुछ भी मत बात विचारो तुम" ॥
आज्ञा पाकर सुकण्ठने चट, जाकर बालीको ललकारा ।
वह भी आगया तुरत लड़ने, बल लगा दिया अपना सारा ॥
लड़ते लड़ते सुग्रीव थका, साथ ही श्वास भी फूल गया ।
चल नहीं सकी कुछ भी उसकी, सुधबुध अपनी सब भूल गया ॥

भागा फिर जान बचाकर वह, पहुँचा उस शरणद पर्वतपर।
इतनेमे लक्ष्मण सहित तभी, पर्वतपर जा पहुँचे रघुवर॥
कातर होकर सुग्रीव तभी, बोला "यह क्यों बर्ताव किया?
उसको यदि नहीं मारना था, तो क्यों रणका प्रस्ताव किया??
अपना विक्रम दिखलाकर भी, यों मार खिलाया वैरीसे?
हे मित्र! मुझे बतलायें, क्यों नीचा दिखलाया वैरीसे"??
तब कहा रामने "मित्र! सुनो, क्यों उसपर नहीं प्रहार किया।
दोनोकी आकृति है समान, इसलिये न उसपर वार किया॥
हो सकता था भ्रममे पड़कर, मैं तुम पर बाण चला देता।
हो जाता यदि ऐसा अनर्थ, तब कहो कि उत्तर क्या देता??
शङ्का न करो फिर एक बार, जा उसको ललकारो भैया!
पहचान रहे इसलिए गलेमे, पुष्पलता धारो भैया"!!
नल, नील, तार नामक वानर, हनुमान् साथमे जाते हैं।
रघुवीर लक्ष्मण भी सङ्गमे, किष्किन्धामे फिर आते हैं॥
लड़नेको जानेसे पहले, सुग्रीव रामसे कहते हैं।
"हेमित्र! न अब वैसा करना, इस बार भरोसे रहते हैं"॥
प्रभु बोले "हेसुग्रीव! नहीं, ऐसा अब होने पाएगा।
एक ही बाणके द्वारा अब, बाली संहारा जाएगा"॥
विश्वास रामजीका करके, ललकारा जभी दुबारा है।
वचनोको कभी न पलटेंगे, इसका बस लिए सहारा है॥

बालीने ललकार सुन, हुआ शीघ्र तैयार॥
ताराने आकर प्रकट, अपने किए विचार॥

"कहती हूँ कर जोड़ मैं, बात सुनो हेआर्य!
अब जो लड़ने जा रहे,ठीक नहीं यह कार्य ॥

जो पहली बार हार खाकर, जो व्यक्ति दुबारा आता है?
इसके पीछे कुछ है रहस्य, क्या नहीं दीख यह पाता है??

अङ्गदके द्वारा ज्ञात हुई, वह बात तुम्हें बतलाती हूँ।
उसने दूतोंसे बात सुनी, जो उसे तुम्हें समझाती हूँ ॥

दशरथ सुत राम और लक्ष्मण, इस किष्किन्धामे आए हैं।
हैं पराक्रमी बलशाली वे, विजयी योद्धा कहलाए हैं ॥

निन्दा न आपकी करके मे, कहती हूँ आप न क्रोध करें।
युवराज बनालें भ्राताको, रघुवरसे नहीं' विरोध करें ॥

सुग्रीव आपका भाई है, वह भी है कोई अन्य नहीं।
उसको यदि हृदय लगाएँ तो, क्या कहलाएँगे धन्य नहीं"??

वह बोला "हाँ! वह भाई है, पर बात न यह मन भाई है।
है आज शत्रु मेरा निश्चय वह, यही समझमे आई है ॥

वह मुझे चुनौती देता है? उसको स्वीकार करूँगा मै ?
उस कायरसे नाहर हो क्या, बतला इस भाँति डरूँगा मै??

अच्छा तुम कहती हो तो मै, प्राणोंसे उसे न मारूँगा।
पीटूँगा उसको भली भाँति,कुछ अहित न और विचारूँगा"॥

यों कहकर निकल पड़ा घरसे, भिड़ गया शीघ्र आ भाईसे।
डरता तो है सुग्रीव किन्तु, लड़ता है उस अन्याईसे ॥

दोनो ही गर्जन तर्जनकर, गिर गिर उठ उठकर लड़ते हैं।
फिर एक दूसरेके ऊपर, मुक्कोंपर मुक्के पड़ते हैं ॥

देखा कौशल्यानन्दनने, सुग्रीव थका जाता है अब।
हो गया शिथिल उसका शरीर, कर हाय छका जाता है अब।।
तब निशित बाण धनुपर रक्खा, चुटकीमे लिया दबाया फिर।
चट तान कानतक छोड़ दिया, क्षणभर न विलम्ब लगाया फिर।।
वह बाण गया सन सन करता, घुस गया ठीक वक्षस्थलमे।
मूर्च्छित होकर गिर गया बालि, धरतीपर पड़ा उसी पलमे।।
मूर्च्छा टूटी तब आँख खोल, देखा सन्मुख रघुराई हैं।
हनुमान्, नील, नल तार और फिर साथ लक्ष्मण भाई हैं।।
बोला "हे राम! मुझे छुपकर, क्यों इस प्रकारसे मारा है?
सम्मुख न आपने युद्ध किया, यों क्यों अन्याय विचारा है??
मैंने तो यह सुन रक्खा था, श्रीराम, धर्मके ज्ञाता हैं।
शुभ लक्षण सभी आपमे हैं, कहकर सब जग गुण गाता है।।
ऐसें मेरा वध करनेपर, सब जगके लोग कहेंगे क्या?
स्वेच्छाचारी हैं राम! बिना, बोले यों लोग रहेंगे क्या??
सम्मुख आकर लड़ते तो मै, तुमको यमलोक पठा देता।
लड़ना किसको कहते हैं सो, हेराम! तुम्हें दिखला देता।।
जब लोग आपसे पूछेंगे, तो क्या यथार्थ उत्तर दोगे?
क्षत्रियका धर्म यही है कह, क्या समाधान तुम कर दोगे??
यदि आप मुझे पहले कहते, रावणको यहाँ बाँध लाता।
सीताजी जहाँ कहीं होती, जा उन्हें यहाँ पर ले आता"।।
यह सुन कर बोले राघवेन्द्र, "क्षत्रियका धर्म हमारा है।
अपराधीको दें दण्ड सदा, यह ही शुभ कर्म हमारा है।।

निज बहन तथा लघु भ्राताकी, पत्नीको भोगा करते हैं ।
निर्भय हो ऐसे दुराचार, करने न व्यक्ति जो डरते हैं ॥
उनको यमलोक पठानेमे, अन्याय न कुछ भी होता है ।
अपराधी अपने कर्मोंसे, निज पथमे काँटें बोता है ॥
सुग्रीव न्याय पर थे, इससे, इनका हमने है साथ दिया ।
पत्नी इनकी दिलवानेको, था इन्हें हाथ पर हाथ दिया ॥
की हुई प्रतिज्ञा पूर्ण करें, यह भी तो धर्म हमारा है ।
इसको अधर्म समझा तुमने, जो क्षत्रिय कर्म हमारा है ॥
यह सुन कर शान्त हुआ मनमे, अपराध किया स्वीकार वहीं ।
फिर रामचन्द्रजीके आगे, रक्खा इस भाँति विचार वहीं ॥
हेराम ! कभी सुग्रीव कहीं, अङ्गदसे रक्खें द्वेष नहीं ।
मेरी प्रिय पत्नी ताराको, दें किसी भाँतिका क्लेश नहीं ॥
मेरे अनुरागी जो भी हैं, उनको भी नहीं सताए यह ।
अपमान न करने पाए कुछ, इसको इस भाँति जताए यह ॥
यह कहते कहते बालीने, अपने प्राणोको छोड़ दिया ।
गौरवसे जीवन बिता अन्तमे, जगसे नाता तोड़ लिया ॥

तारके मनमे हुआ, महा घोर सन्ताप ।
अङ्गदादि रोने लगे, करके विविध विलाप ॥
सबने मिलकर बालिका, किया दाहसँस्कार ।
पछताया सुग्रीव भी, मनमे बारम्बार ॥
हनुमतको रघुवीरने, समझाकर दी राय ।
विधि पूर्वक सुग्रीवको, राज्य देदियाजाय ॥

॥ विजयी मनुष्यके दोष, दोष नहीं माने जाते ॥

अङ्गदको युवराज पद, दो विधिके अनुसार।
सभी व्यक्ति आनन्दसे, करें मङ्गलाचार॥

वर्षा ऋतुका आरम्भ हुआ, यह श्रावण मास चलरहा है।
कर सकते कोई कार्य नहीं, दिनपर दिन समय ढल रहा है॥
कार्तिकके आजाने पर, फिर सब यत्न करेंगे खुल खिलकर।
वर्षा भर अब विश्राम करें, हम सब आपसमे हिलमिल कर॥
आज्ञा पाते ही रघुवरकी, फिर यथायोग्य सब काम हुए।
साथीको सुखी बना कर यों, अति आनन्दित श्रीराम हुए॥
युवराज नृपति इन दोनोको, वृद्धोंनें आशीर्वाद दिया।
राज्याभिषेक एवं विधिवत्, सानन्द मङ्गलाचार किया॥
सुग्रीव रामजीके द्वारा, पा लिया राज्य हो गए अभय।
तब जनता सभी पुकार उठी, लक्ष्मण सुग्रीव रामकी जय॥

हर्ष हर्षमे तो सभी, बीता चातुर्मास।
सीताकी सुधिका समय, जब कि आगया पास॥

हनुमत्ने देखा सत्ता पा, सुग्रीव हूआ मतवाला है॥
शासनका भार मन्त्रियोंको, निश्चिन्त हुआ दे डाला है॥
अर्थोपार्जनकी सुधि न रही, कामोन्मादमे चूर हुआ।
सानन्द भोगने भोगोंको, सब राजकाजसे दूर हुआ॥
हनुमान प्रेम पूर्वक उनको, जा निकट सुमार्ग सुझाते हैं।
"ऐसे इन्द्रिय लोलुप न रहें" सम्मति समुचित दर्शाते हैं॥

D

सत्ता पाकर कर्तव्यको न त्यागें वही महापुरुष कहलाते हैं॥

"हे भूप! तुम्हें जिन मित्रोंका, जो कार्य साधना निश्चित है।
उनको करना आरम्भ करो, बस उसमे ही समझो हित है॥
शुभ समय बीत जानेपर फिर, है यत्न कियेसे लाभ नहीं।
उपकार न भूलें प्रियजनका, जग कहे न हमे कृतघ्न कहीं॥
अतिशीघ्र दुःख हर कर जिसने, कर दिया मार्ग निष्कण्टक हो।
उसके प्रति होकर उदासीन, तुम बैठे हुए अभीतक हो??
उनके कहने पर कार्य करें, यह ठीक नहीं कहलाता है।
वह ठीक नहीं होता भयसे, जो काम बनाया जाता है॥
उपकार करे अपना कोई, उसका यदि हम उपकार करें।
उत्तम व्यवहार करे हमसे, उससे उत्तम व्यहार करें॥
यह तो साधारण बात हुई, अति उत्तम नहीं कहाती है।
निष्काम करें उपकार, बात वह उत्तम मानी जाती है॥
इसलिए जहाँ भी हो सीता, चहुँदिशिमे ढुँढवाया जाए"।
दूतोंको भेज प्रथम हीं सब, वीरोंको बुलवाया जाए॥
हनुमत्की बातें सुन सुकण्ठने, तुरत नीलको बुलवाया॥
फिर कहा "शीघ्र ही वीर सैन्य, संग्रह कर लो अब मन भाया।
ले सङ्ग वयोवृद्धोंको तुम, अङ्गदके साथ चले जाओ।
सबके सब ही योद्धाओंको, तुम साथ साथ लेकर आओ"॥
इतना सुन तुरत नील, अङ्गद, अन्यान्य वीरगण जाते हैं।
निश्चित तिथियोंपर आनेका, आमन्त्रण देकर आते हैं॥
फिर एक एकका सैनिक दल, धीरे धीरे आगए सभी।
देखते देखते सबके ही, किष्किन्धामे छा गए सभी॥

इस ओर राम दुःखित मनसे, ऐसे वचनोको कहते हैं ।
हेलक्ष्मण ! कितने दिनसे हम, सीताके बिन दुख सहते हैं??
हमको बिन देखे किस प्रकार, सानन्द सदा रहती होगी?
वे पति वियोगकी व्यथा बन्धु, कैसे कहिए सहती होगी??
सुग्रीव हमारा मित्र बना, पर उसने सुधि न लिया अबतक ।
सत्ता पा हुआ मदोन्मत्त,कुछ सुलभ न कार्य किया अबतक ।।
"हेलक्ष्मण ! उससे सब बातें, जाकर मेरी कह आओ तुम ।
जिस भाँति तुम्हें समझाता हूँ,उस भाँति उसे समझासओ तुम ।।
कहना कि प्रतिज्ञा करके भी, उसको क्यों नहीं निभाता है?
क्या बता हमारे भुज बलका,तू भय भी तनिक न खाता है"??
लक्ष्मण बोले "हेआर्य ! उसे, बातें मै सभी सुना दूंगा ।
चाहेगा ठीक समझना तो, निश्चय उसको समझा दूँगा ।।
पर समझ नहीं पाया तो फिर, सुग्रीव सदाको सोएगा ।
हेराम ! न समझें झूठ आप, अङ्गद ही राजा होएगा" ।।

यों कह लक्ष्मण चलदिए, हो अत्यन्त अधीर ।
आ पहुँचे सुग्रीवके, भव्य भवनके तीर ।।

अङ्गद द्वारा कहला भेजा, इस भाँति कि लक्ष्मण आए हैं ।
मेरे द्वारा यह समाचार, लक्ष्मण ने ही कहलाए हैं ।।
रुचि हो सुग्रीव तुम्हारी तो, उनके वचनोका पालन हो ।
उत्तरमे क्या कहते हैं वे, हे अङ्गद ! आकर हमे कहो ।।
अङ्गदने कहा मन्त्रियोंसे, "वे बोले जा राजासे यों ।
हेराजन् ! लक्ष्मण आए हैं, कर नेत्र लाल अङ्गारे ज्यों ।।

जाकर उनके चरणोंमें गिर, फिर क्रोध शान्त करवाओ तुम।
स्वीकार भूल करके अपनी, अपना कर्तव्य चुकाओ तुम!
सुग्रीव लगे कहने ऐसे, क्यों लक्ष्मण हुए कुपित मुझपर?
दुर्वचन कहे क्या मैंने हैं, अपराध हुआ मेरा क्योंकर??
बन जाना मित्र सरल है पर, मित्रता निभाना दुस्तर है।
है सरल क्रोधमें आजाना, पर धीरज लाना दुस्तर है॥
हनुमान लगे कहने ऐसे, "राजन्! यह भूल आपकी है।
इस समय आप जो करते हैं, बातें प्रतिकूल आपकी हैं।
उनके ये वचन कठोर तुम्हें, अपना कर्तव्य सुझाते हैं॥
अपराध आपका निश्चय है, हम तुमको स्पष्ट बताते हैं॥
उपकार करे उसके बदले, होना कृतघ्न यों ठीक नहीं।
हे राजन्! यह कहलाती है, उत्तम पुरुषोंकी लीक नहीं"॥
उस भूले हुए पथिकको यों, ताराने मार्ग सुझाया फिर।
"सुग्रीव! मरोगे बिना मौत" ऐसा भय भी दिखलाया फिर॥

आँखें तब उनकी खुलीं, हुआ कार्यका ज्ञान।
लक्ष्मणसे मिलने सभय, किया तुरत प्रस्थान॥

जाकर नतमस्तक हो अपना, अपराध क्षमा करवाते हैं।
फिर बड़े बड़े योद्धाओंको, अपने सम्मुख बुलवाते हैं॥
जितने हों सैनिक जहाँ कहीं, उन सबको बुला लिया जाए।
सेनाके संरक्षक जो हों, उनको आदेश दिया जाए॥
सेनापतियोंको आज्ञा दे, सुग्रीव साथमें जाते हैं।
श्रीरामचन्द्रजीके आगे, लज्जित हो शीश झुकाते हैं॥

बाहें भरकर निज हृदय मिला, दोनो सानन्द मिले सत्वर।
निष्कपट भावसे सत्य वचन, फिर इस प्रकार बोले रघुवर॥
"हम अपना कार्य साधनेमे, हो सकते कभी समर्थ नहीं।
तुम ही होंगे इसमे समर्थ, हैं वचन हमारे व्यर्थ नहीं॥
कर परामर्श तुमसे अब तो, हमको यह काम बनाना है।
जीवित वैदेही हैं कि नहीं? इसका अब पता लगाना है॥
जो भी हो निश्चित कार्य उसे, आरम्भ शीघ्र करना होगा।
हेवानरेश! कर कृपा, आपको मेरा दुख हरना होगा"॥

इतना सुन सुग्रीवने, किया तुरत यह काम।
आज्ञा दे बुलवा लिए, योद्धा वहीं प्रकाम॥

दीं बना टुकड़ियाँ पृथक पृथक, निश्चित कर डाले नेता है।
सब नेताओंको सेनापति, आदेश आशु यों देता है॥
"रावणके सारे अड्डोंपर, जा जा कर पता लगाना तुम।
जीनेकी अभिलाषा तजकर, यह काम शीघ्र कर आना तुम॥
सब नगर, द्वीप, वन, गिरि, उपगिरि, उपवनमे पता लगाओ तुम।
निज शीश हथेलीपर रखकर, सीताकी सुधि ले आओ तुम॥
जलमार्ग जहाँ हो नौकाओंपर, बैठ पार हो जाना तुम।
पग पग धरतीको नाप नाप, ढूँढना, नहीं घबराना तुम॥
पर ध्यान रहे, जो एक मासके, भीतर लौट न आएगा।
उसको यह दण्ड मिलेगा, वह निश्चय ही मारा जाएगा"॥
चल दिए सभी जिस ओर जिन्हें, आदेश मिला था जानेका।
था एक प्रमुख दल खड़ा हुआ, उत्सुक था आज्ञा पानेका॥

इस दलको दक्षिण दिशि जाने, सादर बुलवाया जाता है ।
फिर भलीभाँति सब बातोंको, यों कह समझाया जाता है ॥
इस दलमे हैं नल नील द्विविद, श्रीजाम्बवान् हनुमान् सभी ।
शर, गुल्म, सुषेण, सुहोत्र तथा, हैं अङ्गदादि बलवान् सभी ॥
बोले सुग्रीव "श्वसुर मेरे, नेता सुषेण इस दलके हैं ।
कर्तव्य परायण धर्मनिष्ठ, भण्डार बुद्धि औ बलके हैं" ॥
सीताजी लङ्कामे होंगी, ऐसी पहलेसे आशा थी ।
हनुमान् कार्यको साधेंगे, ऐसी सबको अभिलाषा थी ॥
छलमे, बलमे औ कौशलमे, ये सब वीरोंमे हैं गुरुतर ।
हैं नीति बुद्धिमे अग्रगण्य, यह बात जानते थे रघुवर ॥
इसलिए बुलाकर पास इन्हें, अपनी वह दिव्य मुद्रिका दी ।
बोले हेवीर! हमे तो है, केवल विश्वास आपका ही ॥
ले स्वयं मुद्रिका रामदूतने, रामचन्द्रको नमन किया ।
फिर लङ्काके सम्मुख होकर, सारे वीरोंसह गमन किया ॥

एक मास पूरा हुआ, करते करते छान ।
इनसे हो पाया नहीं, जब यह कार्य महान् ॥

अङ्गद बोले "मै तो अपना, जाकर यह मुख न दिखाऊँगा ।
मै किसी कन्दरामे रहकर, अपना यह जन्म बिताऊँगा ॥
दी एक मासकी अवधि हमे, हो गया मास वह पूरा है ।
कुछ भी तो काम न कर पाये, सब कुछ रह गया अधूरा है ॥
कमसे कम मुझको तो अवश्य, सुग्रीव जानसे मारेगा ।
रखता है मुझपर वक्र दृष्टि, इसलिए न बात विचारेगा" ॥

हनुमान् लगे कहने यह सुन, "हेअङ्गद! यह क्या कहते हो ?
कल्पना निरर्थक करके यों, तुम त्रास व्यर्थ क्यों सहते हो??
हम सबके रहते हुए तुम्हें, बतलाओ कैसे मारेंगे ?
हम सब ही जब अपराधी हैं, तुमको ही क्यों संहारेंगे??
मै तुम्हें पूछता हूँ कैसे, तुम छुपे यहाँ रह जाओगे ?
श्रीलक्ष्मणजीके रहते तुम, कैसे निज प्राण बचाओगे??
तुम सङ्ग हमारे लौट चलें, तो कुछ भी हानि नहीं होगी।
आज्ञा लेकर फिर ढूँढ़ेंगे, सीताजी जहाँ कहीं होंगी ॥
अङ्गद बोले " हेमहावीर! जो पुरुष मातृसम नारीको।
अर्थात् बड़ी भाभी जो है, तारा मेरी महतारीको ॥
मेरे रहते मेरी माँको, निज पत्नी आज बनाया है ?
क्या यह उसकी धार्मिकता है? क्या यह शुभ कर्म कमाया है??
उस रामचन्द्रको भूल गया, उपकार किया जिसने इस पर।
तुम ध्यान रखो हेमहावीर! इसको है लक्ष्मणका ही डर ॥
माना, मारेगा नहीं मुझे, पर बन्दी मुझे बनाएगा ।
अङ्गद बन्दी हो जानेसे, पहले समझो मर जाएगा ॥"
अङ्गदकी देख दशा ऐसी, सब ही मरने तैयार हुए ।
सागरके तटपर बैठ, आत्महत्या करने तैयार हुए ॥
इतनेमे देखा एक गृद्ध, सम्पाति नामधारी जो था ।
इनको खानेको चाहरहा, भीषण अतिभयकारी जो था ॥
सबको यह पता लग चुका था, वे गृद्धराजके भाई हैं।
इसलिये युक्ति सोची ऐसी, जो यहाँ काममे आई हैं ॥

॥ जहाँ स्वार्थ होता है वहाँ पक्षपात करना ही पडता है ॥

सत्वर जटायुके मरने पर, कुछ सहृदयताका दम्भ किया ।
तब ध्यान लगा सम्पातीने रुककर सुनना आरम्भ किया ।
सुन आकर निकट कहा उसने, "क्या उस जटायुका मरण हुआ ?
क्या राघवेन्द्रकी पत्नी श्रीसीतादेवीका हरण हुआ" ??

वह अपनी, अपने भाईकी, सारी ही कथा सुनाता है ।
लङ्कामे सीता रहती हैं, इन सबको पता बताता है ।

पता मिला तब बैठकर, करने लगे विचार ।
सौ योजनको लाँघकर, कौन जायगा पार ??

वह कौन वीर योद्धा होगा, जो सीताकी सुधि लायेगा ?
वह कौन वीर योद्धा होगा, जो विकट कार्य कर आयेगा ??

वह कौन वीर योद्धा होगा, जो अपनी आन निभायेगा ?
वह कौन वीर योद्धा होगा, जो सबका मान रखायेगा ??

वह कौन वीर योद्धा होगा, जो जीवन सफल बनायेगा ?
वह कौन वीर योद्धा होगा, जो सुयश जगतमे पायेगा ??

जो जा सकते हों पार वीर, इस समय यहाँ आगे आयें"।
अङ्गद बोले, "अपने-अपने, बलका परिचय देते जायें" ॥

पहला सैनिक यों बोल उठा, "दसयोजन लाँघ सकूँगा मै"।
फिर कहा दूसरेने "पन्द्रह-बस योजन लाँघ सकूंगा मै" ॥

कह उठा तीसरा इस प्रकार, "मै बीस लाँघ जा सकता हूँ"।
चौथा बोला "मै ठीक-ठीक, पच्चीस लाँघ जा सकता हूँ" ॥

कह उठा पाँचवाँ "मै पूरे, बस तीस लाँघ जा सकता हूँ"।
छट्टा बोला "मै तो योजन, चालीस लाँघ जा सकता हूँ" ॥

अङ्गद बोले "निश्चय करके, मैं सौ योजन जा सकता हूँ।
पर जाकर काम बनाकरके, फिर लौट नहीं आ सकता हूँ"॥
यह सुनकर बोले जामवन्त, "तुम जा सकते आ सकते हो।
पर हम न तुम्हें जाने देंगे, तुम पथ ही दिखला सकते हो॥
किष्किन्धाके युवराज जाँय, फिर हम आये किस लिए कहो?
हेअङ्गद! जो कुछ कहना हो, हम सेवक हैं इसलिए कहो"॥
हनुमतसे बोले जामवन्त, "हे महावीर! वज्राङ्ग बली।
चुप बैठे हो क्यों आप, नहीं, वाणी अब तक मुखसे निकली॥
केसरीसुवन! अञ्जनीतनय! हेपवनपुत्र! आगे आओ।
हमसे है बननें योग्य नहीं, वह काम आज कर दिखलाओ॥
हम सब हताश हो बैठ गए, वश चलता नहीं हमारा है।
हे वीर! आसरा हम सबको, केवल रह गया तुम्हारा है॥
वह काम कौनसा है जगमे, तुम पूर्ण नहीं कर सकते हो?
सङ्कट है विकट कौनसा वह, जिसको न आप हर सकते हो??
इसलिये उठो मत देर करो, यह काम तुम्हींको करना है।
बल्ली यह हाथ तुम्हारे दे, हम सबको पार उतरना है॥
हेवीर! तुम्हारे आनेतक, हम यहाँ प्रतीक्षा करते हैं।
जबतक न यहाँ आ जाओगे, तब तक हम धीरज धरते हैं"॥
वज्राङ्ग बली बोले "अब हम, वीरो! लंकाको जाते हैं।
सानन्द यहाँ बैठो सब, हम सीताका पता लगाते हैं"॥
कर स्मरण अपना बल पौरुष, फिर रामचन्द्रका ध्यान किया।
साहस पूर्वक मनको दृढ़ कर, लंकापुरको प्रस्थान किया॥

पहुँचे लंका तट जभी, वीरश्रेष्ठ हनुमान ।
चिन्तित हो करने लगे, कार्य सिद्धिका ध्यान ।।

"बलशाली असुरोंके आगे, कैसे यह कार्य किया जाये ?
सीताकी सुधि लेने इनको, धोखा किस भाँति दिया जाये ??

फिर सोचा लंकाके भीतर, दिनमे तो जाना दुष्कर है ।
असुरोंकी आँखोंके आगे, दिनमे बच पाना दुष्कर है" ।

इसलिए रात्रि हो जाने पर, लंकामे जाने लगे बली ।
खुल जाय भेद सारा न कहीं, इससे भय खाने लगे बली ।।

इतनेमे एक राक्षसीने, यों कहा कि "हे नादान ! बता ?
जा रहा दबककर कहाँ अरे ! मुझसे होकर अन्जान बता ??

जब तक शरीरमे प्राण रहे, तब तक बतला दे कारण तू ।
क्यों लंकामे घुस रहा अरे ! कर संशय शीघ्र निवारण तू ।।

छुपकर लंकामे जानेका दुस्साहस यत्न करेगा तू ।
तो मेरे हाथों अभी देख ? बिन आई मृत्यु मरेगा तू ।।

रक्षण करती हूँ मैं इसका, छुपकर यों जा न सकेगा तू ।
सुनले मुझ जैसी प्रहरीको, धोखेमे ला न सकेगा तू" ।।

श्रीमहावीरने यहसुन कर, हल्कासा मुक्का जमा दिया ।
गिर गई भूमि पर, मुक्केने क्षण भरमे उसे अचेत किया ।।

निष्प्राण-तुल्य हो गई और, बह चला रक्त उसके मुखसे ।
निर्भय होकर फिर महावीर, बढ़ गये तुरत आगे सुखसे ।।

गुप-चुप छुप-छुप कर एक-एक, घरको छाना वज्राङ्गीने ।
फिर भी न जानकी देवीको, था पहचाना वज्राङ्गीने ।।

रावणके भव्य मन्दिरोंको, हनुमान देखते जाते हैं ।
करते हैं यत्न सभी कुछ, पर सीताका पता न पाते हैं ॥
फिर गुप्त-रूपसे रावणका, निज मन्दिर जाकरके देखा ।
थीं दिव्य कला-कृतियाँ जिनको, निज दृष्टि जमा करके देखा ॥
कुछ नग्न और कुछ अर्ध नग्न, सुन्दरियाँ सुखसे सोती थीं ।
कुछ देख सुनहरे सपनोंको, हँसतीं आनन्दित होती थीं ॥
रावण जब राजाओंसे लड़, कर विजय लौट कर आता था ।
उनकी सुकुमारी पुत्रियोंको, उनकी इच्छासे लाता था ॥
जो भी विवाहिता होती थीं, उनको न कभी ले आया था ।
इस सीताके अतिरिक्त किसीको, कभी न चोरी लाया था ॥
आई थीं जितनी सुन्दरियाँ प्राणोंसे उसे चाहती थीं ।
सब थीं अनन्य प्रणयिनी और, उसके गुण सब सराहतीं थीं ॥
रनवास छान डाला कपिने, सीताका चिह्न न मिला कहीं ।
पर पवनतनय इससे किञ्चित्, अन्तरसे हुए निराश नहीं ॥
हनुमतने सोचा मनमें यों, "मैने यह दृश्य निहारा है ।
क्या लग जाएगा पाप हमें ? क्या यह अपराध हमारा है ??
दूषित मनसे या जानबूझ, हमने तो नहीं निहारा है ।
ढूंढ़ा ऐसे ही जाता है फिर, और कहो क्या चारा है" ??
केवल रावणके नहीं नगरके और भवन भी छान लिये ।
सीता न कहीं भी मिली, देख यद्यपि सारे ही स्थान लिये ॥
सुधि नहीं मिली तब सोचा यों, "सीता देवी मर गईं न हों ?
सन्ताप शोकको सहन न कर, वे आत्मघात कर गईं न हों ??

यदि सीताजी न मिली तो फिर, मैं मुख कैसे दिखलाऊँगा ?
मैं नहीं लौट कर जाऊँगा, यदि सफल नहीं हो पाऊँगा" ॥

यों कहते राजभवनपरसे, नीचेको उतरे कपिराई ।
अब तो अशोक बनके भीतर, जानेकी इच्छा हो आई ॥

चल दिए उधर ही धीरेसे, कोई न इन्हें जाते देखा ।
दे दिया समयने साथ, न आहटको भी सुन पाते देखा ॥

फल, पुष्प भारसे झुके हुए, तरुओंसे शोभित मनमोहन ।
भौरोंके गुञ्जनमे मुखरित, देखा कपिने अशोककानन ॥

हैं सुन्दर वृक्षावलियोंमे, आवास विहङ्गोंके शोभन ।
निर्मल जल वाले कितने ही, हैं वहाँ सरोवर मनमोहन ॥

सोचा "प्रातः सीता देवी, सन्ध्या करने तो आयेंगी ।
सम्भव है यहीं सरोवरपर, ईश्वरका ध्यान लगायेंगी" ॥

उस वनके कोने-कोनेमे, छुप करके फिर, फिर-फिर देखा ।
इतनेमे एक बहुत सुन्दर सब विधिसज्जित मन्दिर देखा ॥

उस मन्दिरमे साधारणसे, वस्त्रोंको धारे बैठी हैं ।
दुर्बल शरीर देदीप्यमान, देवी मनमारे बैठी हैं ॥

श्रीमहावीरने निज मनमे, सोचा "क्या यही जानकी हैं ?
विश्वास हृदयमे हुआ कि ये, पत्नी करुणानिधानकी हैं ??

जो चिह्न बताए रघुवरने, वे स्पष्ट दृष्टिमे आते हैं ।
हैं गहने वही रामजीने, जैसे हमको बतलाये हैं ॥

इतने संकटमे पड़कर भी, ये सीताजी जीती क्यों हैं ?
हनुमतने सोचा इस प्रकार, "विषकी घूंटें पीती क्यों हैं ??

इसलिए कि है विश्वास इन्हें, श्रीरामचन्द्रजी आयेंगे ।
रावणका करके सर्वनाश, फिर साथ-साथ ले जायेंगे" ।।

हनुमान वृक्षपर जा बैठे, ऐसे विचार करते-करते ।
आगेकी बात सोचते हैं चौकन्ने हो डरते-डरते ।।

अकथित श्रम करते हुए, बीती सारी रात ।
हुआ देखते-देखते, अब तो अरुण प्रभात ।।

सुन्दरियोंका दल सङ्ग लिए, रावण अशोक वनमे आया ।
यह देख जानकीके मनमे, व्याकुलताका बादल छाया ।।
घबराई दुखपाई सोचा, "इस बार न जाने क्या होगा ?
आ रहा दुष्ट यह, हे मेरे करतार ! न जाने क्या होगा ??
कर ठीक-ठाक फिर वस्त्रोंको, अत्यन्त सिकुड़कर बैठ गई ।
नीचा ही दृष्टि किये अपनी, कोनेमे मुड़कर बैठ गई ।।
रावणने कहा कि "हेसीते ! इस भाँति न अब तो मौन रहो ।
ऊपरको दृष्टि उठा करके, देखो आया है कौन कहो ।।
सर्वाङ्ग सुन्दरी ! हेसुमुखी ! मुझसे यों सकुचाती क्यों हो ?
अत्यन्त घृणा करके मुझसे, इस भाँति दबी जाती क्यों हो ??
राक्षस परनारी गमन सदा, करते उनका है कर्म यही ।
पर हम न करेंगे स्पर्श, अवधि दी है, अब तो है धर्म यही ।।
कुछ बिना बिछाये पृथ्वीपर, ऐसे ही सोना ठीक नहीं ।
श्रृङ्गार बिना रहना मैले कपड़े रख रोना ठीक नहीं ।।
राज्योचित सुखके बीच तुम्हें, यों दुखिया होना ठीक नहीं ।
पतिके वियोगमे व्यर्थ सभी, यों जीवन खोना ठीक नहीं ।।

मै सच्ची बात कहे देता हूँ, जानो इसे अलीक नहीं ।
सच समझो यह भी हेसीते, ! दे रहा तुम्हें मै भीख नहीं ।।

तुम कहो, विश्वको जीत अभी, श्रीमान् जनकजीको दे दूँ ।
जो वस्तु औरको दुर्लभ हो, वह वस्तु तुम्हें कह दो दे दूँ ।।

आज्ञा दे दो तो अभी तुम्हें, सज्जित करदूँ श्रृङ्गारोंसे ।
हीरे, पन्ने, माणिक, मोती, नानाविधिके उपहारोंसे" ।।

जनक नन्दिनीनें कहा, सुनकर ऐसे बैन ।
तिनके कीले ओट, ओ करके नीचे नैन ।।

"पतिव्रता धर्मका पालन कर, सब जीवन मुझे बिताना है ।
अपने पतिके अतिरिक्त पुरुष, मैंने न किसीको जाना है ।।

सर्वस्व और सर्वोपरि हैं, कौशल्यानन्दन ही मेरे ।
मेरे शरीरके स्वामी हैं, वे दुष्ट निकन्दन ही मेरे ।।

मुझ पति-व्रता क्षत्राणीके, पति भी पत्नी व्रतधारी हैं ।
रक्षा चरित्रकी करनेकी, यह सच्ची लग्न हमारी है ।।

हेरावण ! तुम भी इसी भाँति, परनारीका सेवन न करो ।
यदि मेरी बात मानते हो तो, दूषित अपना मन न करो ।।

परनारीपर मोहित होकर, विपरीत कर्म जो करते हैं ।
होता है सर्वनाश उनका, वे बिना मृत्युके मरते हैं ।।

मरनेपर दुराचारियोंके, होते प्रसन्न नर-नारी हैं ।
कुछ दिनके बाद ठीक वैसे, होनेको दशा तुम्हारी है ।।

सूरजकी रश्मि सूर्यको तज, औरोंके सङ्ग न जा सकती ।
बस इसी भाँति रघुवीर बिना, सुख शान्ति नहीं मै पा सकती ।।

जीनेकी इच्छा हो रावण ! तो तुम्हें बताये देती हूँ ।
रघुवरके निकट भेज दो तुम, इतना समझाये देती हूँ ॥
दोनो भ्राताओंके आगे तुम, टिक न कभी भी पाओगे ।
शंका न रखो कुछ भी इसमे, निश्चय तुम मारे जाओगे ॥
चौदह सहस्र उन असुरोंको, गिन-गिन चुन-चुनकर मारे हैं ।
त्रिशिरा, सुबाहु, खर-दूषणको, पलमे जो सहज संहारे हैं ॥
तुम हो अशक्त, इसलिये मुझे, चोरीसे लेकर आये हो ?
ऐसे कामोको करके, क्या जगमे तुम वीर कहाये हो" ??
रावण बोला "हेसीते ! तुम हमको कटुवाक्य सुनाती हो ?
इस भाँति हमारी नर्मीका, तुम अनुचित लाभ उठाती हो ??
इस कामवासनाने हमको, समझो निर्बल कर डाला है ।
अन्यथा कहो क्या रावण भी, कोईसे डरने वाला है ??
बारहमे दस तो बीत गये, दो मास और समझाऊँगा ।
इतनेमे राम न आये तो, रानी मै तुम्हें बनाऊँगा ॥
यदि तब भी बात न मानोगी, तब तुम्हे मार डालेंगे हम ।
भोजनमे पका-पकू कर फिर, वह माँस सभी खालेंगे हम" ॥
इतनेमे धान्यमालिनी जो, रावणकी पत्नी थी आकर ।
कर रुदन लगी कहने ऐसे, उस रावणको यों समझाकर ॥
"हेनाथ ! साथ मेरे चलिये अब, इन्हें सताना अनुचित है ।
लीजिए हमारी विनय मान, इसमे ही हम सबका हित है ॥
नारीकी इच्छाबिना पुरुष, रति करता है जो मन-मानी ।
तो महापापसे भ्रष्ट स्वयं, हो जाता है वह अभिमानी ॥

इसलिए आप इनको तजकर, चलिए अब अपने राजभवन।
जैसा मैं कहती हूँ वैसा ही, करिए कार्य आप राजन्!!"
क्रोधित हो रावण चला गया, बन पाया कुछ भी काम नहीं।
पर बिना कार्य यह सिद्ध किये, था उसको कहीं विराम नहीं॥
विकटा, त्रिजटा, हरिजटा आदिने, विविध प्रलोभन दिखलाकर।
चिन्ता करनेको दूर वहाँ, सीताको समझाया आकर॥
"हे सीते!! हठ झूठी करके, बातें क्यों नहीं मानती हो?
उत्तम कुलका है रावण यह, तुम भी यह बात जानती हो॥
रावणकी बात मान करके, इनकी जो तुम बन जाओगी।
संशय न रखो अपने मनमे, तुम वाञ्छित सुख सब पाओगी॥
जो राजभ्रष्ट है रामचन्द्र, तुम उस पर ही क्यों मरती हो?
अपने जीवनके सुख दुखका, तुम ध्यान क्यों नहीं करती हो"??
सीता बोली "तुम सब मिलकर, यदि मुझे मार डालो तो भी।
मेरे शरीरके टुकड़े कर, फिर उन्हें भून खा लो तो भी॥
मै कभी नहीं मानूँगी, तुम, जो भी करना हो सो कर लो।
रावणकी जैसी आज्ञा हो, जो भी तुम चाहो सो कर लो॥
क्यों राज्यहीन गुणहीन और, अति दीन भले रघुवीर सही।
पर मेरे तो गुरु हैं, पति हैं, जीवनके हैं सर्वस्व वही॥
कोई भी शक्ति मुझे मेरे, निश्चयसे बदल नहीं सकती।
मेरी ये अटल भावनाएँ, इस मनसे निकल नहीं सकतीं"॥

बैठे-बैठे वृक्ष पर, दृश्य सभी हनुमान।
देख चुके ओ हृदयमे, किया सत्य सन्धान॥

॥ घबराने पर दुगनी यत्न करनेपर आपत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं॥

सीता यों रोने लगी, करके घोर विलाप।
"घेर रहा जाने मुझे, किन जन्मोंका पाप ??

हेआर्यपुत्र ! क्या करूँ कहो ? लक्ष्मण ! क्या ऐसे जीऊँ मै ?
हेकौशल्ये ! क्या मरूँ यहीं ? कहिये अब कैसे जीऊँ मैं ??
कह दो तुम भी ओ मेरी माँ ! विपदा यह कैसे सहन करूँ ?
दुःखोंसे दबी जा रही, कैसे भार कहो यह बहन करूँ" ॥
जब शान्ति हुई तब सीताने, इन सबकी आँख बचा करके।
फिर एक वृक्षके नीचे हीं, वे खड़ी हो गईं जा करके ॥
वेणीके गुँथे हुए डोरे, बटकर रस्सी ज्यों बना लिया।
वह रस्सी डाल गलेमे फिर, मर जानेका संकल्प किया ॥
हनुमान् देखकर दृश्य लगे, सोचने कि "अब क्या काम करूँ ?
क्या इनको मरते देख हाथ-पर हाथ धरे विश्राम करूँ ??
यों ही यदि मै हो गया प्रकट, तो असुर समझ डर जायेंगी।
समझाने पर भी बात नहीं, इस समय समझने पायेंगी ॥
कोलाहल यदि हो गया यहाँ, तो निशिचरियाँ सब आयेंगी।
जब निशिचरियाँ आ जायेंगी, तो बातें सब खुल जायेंगी ॥
इसलिए ठीक तो यह होगा, अब रामचरितका गान करूँ।
सीता सुनकर क्या कहती हैं ? बस इसी बातपर ध्यान करूँ ॥
फिर सोचूँगा मनमे अपने, आगे मुझको क्या करना है ?
हो गया सफल इसमे तो फिर, साहससे आगे बढ़ना है" ॥
श्रीरामजन्मसे ले करके, अब तककी सारी कथा कही।
जो मुख्य-मुख्य घटनायें थीं, उनमेकी पूरी व्यथा कही ॥

आश्चर्य चकित हो सीताने, दाएँ-बाएँ मुड़कर देखा ।
आँखें ऊपर कीं तो कपिको, बैठे अशोक तरुपर देखा ।।
भय-भीत हुईं अपने मनमे, सोचीं "यह कौन कहाँका है ?
रावणका गुप्तदूत कोई, राक्षस तो नहीं यहाँका है ??"
हनुमत्ने पूछा हाथ जोड़, "देवी ! तुम कौन कहाँकी हो ?
पहले तुम अपना परिचय दो, जो भी हो और जहाँकी हो"??
सीता बोलीं "मै सीता हूँ, श्रीराघवेन्द्रकी प्यारी हूँ ।
श्रीदशरथजी हैं श्वसुर और, सच जानो जनकदुलारी हूँ"।।
सीताने सोचा यों मनमे, "सम्भव है यह ही रावण हो ?
रावण ही वनमे आया था, सच-मुच ही जैसे ब्राह्मण हो"।।
बोलीं "विश्वास नहीं मुझको, हो कौन कहाँसे आते हो ?
कहनेंको तो तुम अपनेको, रघुवरके दूत बताते हो ।।
अच्छा, कुछ बातें बतलाओ, जिससे विश्वास मुझे भी हो ।
तुम दूत उन्हींके हो इसका, कुछ तो आभास मुझे भी हो।।
दोनोके गुण स्वभावको भी, वर्णन करके दिखला दो तुम ।
सच मानूगी मै जब कि मेरे, मनपर विश्वास बिठादो तुम"।।
श्रीरघुनन्दनके अङ्गोंका, दे डाला परिचय हनुमतने ।
थी कही खोलकर कथा सभी, होकर जब निर्भय हनुमतने ।।
अपना परिचय भी रहा सहा, दे दिया जानकी देवीने ।
विश्वास पूर्ण अपने मनमे, कर लिया जानकी देवीने ।।
इसके पश्चात अंगूठी दी, ली सीताने हर्षित होकर ।।
फिर लगा हृदयसे उसे लिया, झट-पट बोलीं पुलकित होकर ।

"अब निश्चय जान लिया मैंने, तुम महावीर बलशाली हो।
हो महामनीषी, कार्यकुशल, विद्यावनके वनमाली हो ॥
अब बतलाओ दोनो भाई, निर्भय भी और सुखी तो हैं ?
मेरा वियोग हो जाने पर, मनमे हो रहे दुखी तो हैं ??
मेरे प्रति दोनोके मनमे, कम तो हो पाया स्नेह नहीं ?
अपने मित्रोंपर कभी उन्हें, होता तो है सन्देह नहीं ??
कौशल्या और सुमित्राके, सब समाचार आते तो हैं ?
अपने स्वजनोंमे राघवेन्द्र, सत्कार सदा पाते तो हैं ??
इस अधम-नीचसे रण करके, मेरा उद्धार करेंगे ना ?
सागरके पार सभी वानरदलके सैनिक उतरेंगे ना ??
वन मुझे साथ ले आनेका, होता तो उनको खेद नहीं।
जिसके कारण नानाप्रकारकी, विपदाऐं वन बीच सहीं ॥
श्रीभरतलालने सहायतामे, कुछ सेना भेजी है क्या ?
श्रीराघवेन्द्रने युद्ध हेतु, सब तैयारी कर ली है क्या ??
यह दसवाँ मास चल रहा है, दो मास रह गये बाकी हैं।
हेमहावीर! क्या बतलाऊँ, यह घड़ी बड़ी विपदाकी है" ॥

उत्तरमे इस भाँति फिर, बोले श्री हनुमान ।
"चिन्तातुर हो आप यों, करें न मनको म्लान ॥

हो गया प्रबन्ध सभी कुछ है, तुम मनमे धैर्य धरो माता !
श्रीराम सदल-बल आयेंगे, ऐसा विश्वास करो माता !!
श्रीराम तुम्हारे बिना सदा, शोकातुर होकर रहते हैं ।
दिन भरमे कई बार मुखसे, सीते! हा सीते! कहते हैं ॥

दुर्बल तो वे हो गये किन्तु, जीवनकी ज्योति जग रही है ।
राक्षस कुलका हो सर्वनाश, मनमे यह लगन लग रही है ॥
अब सुलग चुका है अग्नि, देवि ! रुक सकती उसकी क्रान्ति नहीं ।
विजयी न बने जब तक राघव, तब तक हम सबको शान्ति नहीं
आज्ञा हो तो इस कारासे, तुमको निकाल सकता हूँ माँ !
राक्षसगणको समराङ्गणमे, मै कर निढाल सकता हूँ माँ" ! !
सीताने कहा कि "निश्चय ही, मुझको निकाल सकते हो पर ।
श्री राघवेन्द्रके लिए वीर ! यह बात नहीं होगी हितकर ॥
श्रीराघवेन्द्रके द्वारा यह, रावण संहारा जायेगा ।
उनके द्वारा जब राक्षस दल, सबका सब मारा जायेगा ॥
उस दिन ही जाना चाहूँगी, श्रीराघवेन्द्रके साथ सुनो ।
कर विजय साथ ले जायेंगे, सीताको सीतानाथ सुनो" ॥
यह सुन कर बोले महावीर, "अनुपम सुन्दर विचार है यह ।
सच कहता हूँ देदीप्यमान, रविके वंशानुसार है यह ॥
आज्ञा दो मुझको देवि ! तुरत, तत्पर हूँ अब मै जानेको ।
दो अपना कोई चिह्न मुझे, श्रीरघुवरको दिखलानेको" ॥
चूड़ामणि नामक आभूषण, दे दिया सियाने हनुमतको ।
फिर बोलीं "हे रणवीर ! धीर ! सुन लो तुम भी मेरे व्रतको ॥
यदि अवधि बिताकर लंकाकी, धरती पर रघुवर आयेंगे ।
कह देना उनसे यही बात, जीवित न मुझे वे पायेंगे ॥
इसलिए शीघ्र जीते जी मुझको लेजायें तो अच्छा है ।
सान्त्वना आज यदि तुम मुझको, यह दे जायें तो अच्छा है ।

सीताको दे सान्त्वना, बिदा हुए हनुमान ।
आया फिर इस बातका, मन ही मनमे ध्यान ।।

"सीताकी सुधि मिल गई किन्तु, रावणसे परिचय हुआ नहीं ।
आपसमे एक दूसरेके, बलका कुछ निर्णय हुआ नहीं ।।
इसलिए करें उद्यान ध्वस्त, यह समाचार जब पायेगा ।
तब बदला लेने राक्षस-दल, मुझसे लड़नेको आयेगा ।।
मारेंगे वे सब मिल मुझको, मैं भी फिर उनको मारूँगा ।
पश्चात् मुझे क्या करना है ? वह आगे बात विचारूँगा" ।।
ऐसा दृढ़ निश्चय कर अपना, वृक्षोंको लगे तोड़ने फिर ।
कर छिन्न-भिन्न उद्यान लगे, चारो ही ओर दौड़ने फिर ।।
यह दृश्य देखने जमा हुए, लंकाके सब ही नर-नारी ।
जीवनमे कभी न देखा था, ऐसा विचित्र विप्लव भारी ।।
राक्षसियाँ सब भयके मारे, जब हा-हाकार लगीं करने ।
रावण राजाके सम्मुख जा, यों प्रकट विचार लगीं करने ।।
हेराजन् ! इस अशोक वनमे, कपि एक भयंकर आया है ।
उद्यान किया सब नष्ट-भ्रष्ट, हम सबको बहुत सताया है ।।
जिसने सीतासे बातें की क्या ? की कुछ पता न पाया है ।
सीतासे पूछा था हमने, उसने कुछ नहीं बताया है ।।
सम्भव है रामदूत हो वह ? अनुमान हमे यह होता है ।
उसका लखकर यह क्रूर-कर्म, बस भान हमे यह होता है ।।
केवल सीताका ही मन्दिर, हेराजन् ! सुनो सुरक्षित है ।
निर्भय होकर सानन्द एक, सीता ही बस जिसमे स्थित है ।।

रावण अति क्रोधित हुआ, रूप किया विक्राल ।
बोला ऐसा कौन है, जिसका आया काल ॥
सेनापतियोंको आज्ञा दी, जाकर पकड़ो उस वानरको ।
रस्सियों, साँकलोंसे जाकर, बाँधो जकड़ो उस वानरको ॥
आज्ञा पानेके साथ तभी, चटसे जाकर योद्धाओंने ।
कर ली तैय्यारी भली भाँति, सब ही प्रकार नेताओंने ॥
वज्राङ्गीने आते देखा तब, बोले रामचन्द्रकी जय ।
रणवीर लगे रण करने अब, होकर अपने मनमे निर्भय ॥
देखते-देखते असुरोंका, कर दिया नाश वज्राङ्गीने ।
दिखलाया है अपने बलका, ऐसा विकास वज्रांगीने ॥
कुछ भागे हुए अधमरों ने, रावणको सूचित किया तभीं ।
ये मारे गये सभीं कैसे ? वह समाचार कह दिया तभीं ॥
जम्बूमाली, दुर्धर राक्षस, दोनो सेना लेकर आए ।
श्रीमहावीरके आगे वे, नाना विधि कौशल दिखलाये ॥
घनघोर विकट संग्राम हुआ, आ गये काम वे सारे ही ।
लड़-झगड़ अन्तमे सुनो हुए, विजयी रघुवरके प्यारे ही ॥
फिर अक्ष कुँवरको लड़ने अब भेजा रावणने क्रोधित हो ।
वह पुत्र पिताकी आज्ञा ले, आ गया युद्धमे हर्षित हो ॥
श्रीमहावीरके सम्मुख जा, गर्वित वाणीसे ललकारा ।
ले धनुष हाथमे बाण चढ़ा, वज्रांगीके शिर पर मारा ॥
वज्रांगीने बच कर उसको, फिर पकड़ घुमाया बल पूर्वक ।
यों घुमा-घुमा कर धरती पर, चट पटक गिराया बल पूर्वक ॥

बाहें, जाँघे, कटि और चरण, गिर गये टूट कर पृथक-पृथक ।
हो गया देह सब छिन्न भिन्न, शिर गिरा फूट कर पृथक-पृथक ।।

रावणने पाया समाचार, मारा जब अक्षकुमार गया ।
शोकातुर हो अपने मनमे, रावण कुछ साहस हार गया ।।

तब इन्द्रजीतको आज्ञा दी, ओ मेरे बलशाली बेटे !
ओ विश्वविजेता ! आना मत तुम भी यों ही खाली बेटे ! !

सेनाको सेनापतियोंको, ले जाओ साथ-साथ अपने ।
जिस भाँति बने उस योद्धाको, ले आओ साथ-साथ अपने" ।।

श्रीपूज्य पिताकी आज्ञा ले, जब मेघनाद निकला घरसे ।
नाना प्रकारके बाजोंको, बजवाया है ऊँचे स्वरसे ।।

वज्राङ्गीने देखा कि एक, रणवीर उधरसे आता है ।
रावणका है जो ज्येष्ठ पुत्र, ओ इन्द्रजीत कहलाता है ।।

दोनो ही युद्ध विशारद हैं, दोनो ही हैं रणवीर, धीर ।
दोनो ही हैं अतिवीर्यवान, दोनो ही हैं प्रणवीर, धीर ।।

दोनो ही एक दूसरेपर, करते थे विकट प्रहार क्रुद्ध ।
दोनोका ही आपसमे यों, आरम्भ हुआ घन-घोर युद्ध ।।

जब किसी भाँति भी महावीर, देखा खाते हैं मार नहीं ।
सब मार सहन कर लेते हैं, वे किन्तु मानते हार नहीं ।।

सारे अस्त्रोंका कर प्रहार, जबहार गया वह असुर बली ।
ब्रह्मास्त्र चलाया तब इन पर, होकर हताश सब भाँति छली ।।

उस महाअस्त्रसे आहत हो, हो गया अचेत वीर बंका ।
था बन्धनमे बँध गया और, देखने जुटी सारी लंका ।।

मेघनादके साथमे, थे जा रहे कपीश।
पहुँचगये बैठा जहाँ, था लङ्काका ईश॥
विस्मित हो हनुमानने, देखा उसका रूप।
मन ही मनमे यों कहा, "धन्य नृपाल अनूप॥

क्या उच्च भाव कैसा स्वभाव? कितना सुगठित सुन्दर शरीर?
कितना महान् ओ शक्तिमान्? अतिवीर और गम्भीर धीर??
इन ही बातोंके कारण तो, इन्द्रादि गणोंको जीता है।
पर अब न बच सकेगा निश्चय, हर ली तूने जो सीता है"॥

इतनेमे मन्त्री पूछ उठा, "इस लंकामे क्यों आये हो?
क्या कारण है जो इस प्रकार, आकर उत्पात मचाये हो??
भय खानेकी कुछ बात नहीं, कह दो तुम कौन कहाँके हो।
हम तुम्हें छोड़ देंगे अब ही, बतला दो ठीक जहाँके हो"॥

हनुमतने होकर सावधान, यों कहा कि "सब श्रीमान् सुनें।
किस कारणसे आया हूँ मैं, बातें मेरी दे ध्यान सुनें॥
राजा रावणके दर्शनकी, मनमे उत्कट अभिलाषा थी।
होंगे न सहजमे ही दर्शन, इससे कुछ हुई निराशा थी॥

बस इसीलिए सोचा मैंने, वह काम किया क्यों जाय नहीं?
ले जाँय मुझे ही स्वयं लोग, क्या है यह उचित उपाय नहीं??
मुझपर जब सब ही लोगोंने, एक ही साथ मिल वार किया।
तब मैंने भी प्रत्युत्तरमे उन सबका ही प्रतिकार किया॥

हूँ रामचन्द्रका राजदूत, सुग्रीव राजने भेजा है।
सब शंकाओंका समाधान, करनेको मुझे सहेजा है॥

सुनिये यथार्थ है बात यही, जिसमे सबका सच्चा हित है ।
श्री सीतादेवीको कर दो, श्री रामचन्द्रके अर्पित है ॥

जैसे विष मिश्रित भोजनको, प्राणी कोई न पचा सकता ।
सीताको हर कर कोई भी, अपनेको नहीं बचा सकता ॥

सीता रूपी इस फाँसीको, बाँधो न गलेमे अय राजन् !
परनारीके इस महापापसे, कुछ तो खाओ भय राजन्" ! !

शिक्षाप्रद बातें हनुमतकी, जब सुनी बहुत ही बुरा लगा ।
था तो उत्तम उपदेश किन्तु, रावणको तो खुरा-खुरा लगा ॥

उसने फिर तुरत मन्त्रियोंको, आज्ञा दे दी वध करनेकी ।
बोला "हे दूत ! शीघ्र करलो, तय्यारी अब तुम मरनेकी" ॥

रावणकी ऐसी आज्ञा सुन, कह उठे विभीषण अवसरपर ।
"ऐसा करना तो ठीक नहीं है, किसी भाँति भी हे नृपवर ! !

जब राजनीति नियमानुसार, वध राजदूतका वर्जित है ।
तब इस प्रकारकी आज्ञामे, दीखता नहीं कुछ भी हित है ॥

मनमे कर सोच विचार आप, समुचित ही दण्ड दीजियेगा ।
राजन् ! लो बात मान मेरी, कुछ और उपाय कीजियेगा" ॥

रावण बोला "ऐसे जनके, वधमे कुछ पाप नहीं होगा ।
मुझको क्या अन्य किसीको भी, कुछ भी सन्ताप नहीं होगा" ॥

यों पुनः विभीषण बोल उठे, "मत यह अन्याय कीजियेगा ।
मै बार-बार कहता हूँ यह, कुछ और उपाय कीजियेगा ॥

कोड़े लगवाओ कान, नाक, चाहे कटवा डालो इसके ।
कोई भी कर दो अङ्ग-भङ्ग, शिरको मुड़वा डालो इसके ॥

जिसनें इसको भेजा, उससे, बदला लो, जो भी लेना है।
जो जी चाहे हे महाराज! दो दण्ड उन्हें जो देना है॥
इसको यदि मार यहाँ देंगे, तो वहाँ कौन जा बोलेगा?
फिर कौन बताओ हेराजन्! सब भेद यहाँके खोलेगा??
रावण बोला" हाँ निसन्देह, सम्मति यह उचित तुम्हारी है।
इसकी यह पूँछ जला डालें, अब मैंने बात विचारी है॥
लङ्कामे चारोओर फिरा, फिर सुनो! सताया जाय इसे।
अपनें स्वामीको उसकायें, ऐसा समझाया जाय इसे"॥

वस्त्र लपेटें पूंछ पर, तेल दिया फिर डाल।
आग लगा दी तब तुरत, लगी सुलगने ज्वाल॥

अब तो नारी-नर बालकगण, हँसते हैं इन्हें चिढ़ाते हैं।
हनुमान मौन धारण करके, मनमे आनन्द मनाते हैं॥
जिस ओर इन्हें ले जाते हैं, ये उसी ओर झुक जाते हैं।
जब इन्हें रोकना चाहें तो, हनुमान तुरत रुक जाते हैं॥
लोगोंको चकमा देनेको, यों काम लिया भोलेपनसे।
अब चटपट भाग चलो भैय्या? ऐसा बोले अपने मनसे॥
झटका देकर झट निकल गये, करनेको अपना काम पूर्ण।
यह दृश्य देख निशिचर दलका, हो गया सभी अभिमान चूर्ण॥
हनुमान लगे फिर घूम-घूम, घर-घरमे ज्वाला लहराने।
फिर लगे उच्च ओ भव्य भवन, गिर-गिर कर धरतीपर आने॥
हो उठा अग्नि अतिशय प्रचण्ड, ज्वालायें नभमे धधक उठीं।
हो गया बुझाना कठिन वहाँ, चहुँओर आग थी भभक उठी॥

राक्षसियाँ छोटे बच्चोंको, सँग लेकर भागे फिरती थीं।
चिल्लाती थीं घबराती थीं, जिस समय अग्निसे घिरती थीं।।

इस अग्निकाण्डके होनेसे, सब राक्षस-गण भयभीत हुए।
रावणाके सोचे हुए आज, ये कार्य सभी विपरीत हुए।।

जब पापकर्म होते पुञ्जित, तब प्राणी फलको पाता है।
हो जाता उलटा काम सभी, जब उसका दुर्दिन आता है।।

बस वही हुआ इस रावणके, समझो अब दुर्दिन आये हैं।
जो एक अकेले हनूमान्, इस भाँति सफल हो पाये हैं।।

वैदेहीके पास जा, क्रमसे भली प्रकार।
समाचार उत्साहसे, कहे सहित विस्तार।।

—:०:—

श्रीसीताजीकी आज्ञा ले, अति हर्षित हो हनुमान् चले।
श्रीराजा रामचन्द्रजीका, अपने मनमे धर ध्यान चले ।।

उल्लास भरे आह्लाद भरे, अत्यन्त हर्षसे मोद भरे।
ले साथ-साथ आशाओंको, निश्चित कर लक्ष्य महान् चले।।

अपनी इस कार्य-सफलतापर, क्यों न हो भला आनन्द कहो ?
सुधि लेकर जनकनन्दनीकी, देकर जब जीवन-दान चले।।

रावणका सर्वनाश करने, कैसे क्या यत्न किया जाये ?
रावणकी सैन्यशक्तिका भी, अनुभव करके पहचान चले।

उस ओर प्रतीक्षामे बैठे, उनका जब आया ध्यान इन्हें।।
तब प्रबल वेगके साथ, और भी भरकर तभी उड़ान चले।

—ऽ—०—ऽ—

जलनिधिको यों लाँघ कर, आते थे हनुमान।
मनमे नाना भाँतिके, लगा रहे अनुमान।।

इस ओर पड़े जो साथी थे, कर रहे प्रतीक्षा थे इनकी।
गिनती भी नित्य उँगलियोंपर, वे करते जाते थे दिनकी॥
आते जब देखा हनुमतको, तब हृदय सभीके फूल उठे।
होकर प्रसन्न सबके आत्मा, सुखके झूलेपर झूल उठे॥

जब इन सबके आगे जाकर, श्रीमहावीर होगये खड़े।
वृद्धोंने आशीर्वाद दिया, छोटोंने जाकर चरण पड़े॥
सबने फिर घेर लिया उनको, सबके-सब बोल पड़े उस क्षण।
अब अक्षरशः बतला दीजे, अपनी उस यात्राका विवरण॥

आदिसे अन्त तक महावीर, सारी ही कथा सुनाते हैं।
सीताकी व्यथा कथा सुनकर, उस क्षण सब शोक मनाते हैं॥
पर सीताकी सुधि मिल जानेके, कारण सब हर्षाते हैं।
इतना कुछ हर्ष मनाते हैं, जिसका कुछ थाह न पाते हैं॥

चल पड़े तुरत सानन्द सभी, फिर रोक नहीं पाये मनको।
सब नष्ट-भ्रष्ट कर दिया, जाय सुन्दर सुकण्ठके मधुवनको॥
मधुवनके रक्षक समझाने, आये जब इनको कष्ट दिया।
"हम नहीं तुम्हारी मानेंगे, जाओ" उत्तर यह स्पष्ट दिया॥

दधि-मुख था जो कि प्रमुख रक्षक, आया इनको जब समझाने।
अङ्गदने इसको ही मारा, लग गये और भय दिखलाने॥

दधिमुखने सुग्रीवको, कहा नवाकर शीश।
नम्र विनय मेरी तनिक, सुने वानराधीश!!

कपियोंने सारे मधुवनको, बस छिन्न-भिन्न कर डाला है।
जब मना किया तो बोले यों, "तू कौन पूछने वाला है??

सब तोड़-ताड़ तरुदल उखाड़, फेंके उद्यान उजाड़ा है।
जब दिया उलहना अङ्गदको, तो उसने मुझे पछाड़ा है।।
मधुवनका मुझसे संरक्षण, होना ही अब तो दुष्कर है।
यह कार्य सँभालें आप स्वयं, उत्तरदायित्व न मुझपर है" ।।
श्रीरघुनन्दनने पूछा यों, "ये इतना क्यों घबराये हैं ?
सुग्रीव ! कहो कुछ हमको भी, क्या बात सुनाने आये हैं" ??
बोले सुग्रीव रामजीसे, "शुभ समाचार ले आये हैं।
साथ ही-साथ मधुवन उजाड़नेका वृतान्त सुनाये हैं।।
अर्थात् अङ्गदादिक कपियोंने, इन्हें खिन्न कर डाला है।
आ यहाँ सभीने मधुवनको, सब छिन्न-भिन्न कर डाला है।।
इससे यह विदित हो रहा है, निश्चय सब सफल हो गये हैं।
इस ही कारण सब उच्छृङ्खल, ओ अतिशय सबल हो गये हैं" ।।
दधिमुखसे बोले इस प्रकार, "जाओ तुम अपना काम करो।
जो कुछ करते हैं करने दो, तुम घर जाकर विश्राम करो" ।।
कुछ समझ न सका विचारा यह, चल दिया तुरत अपने घरको।
सुभ समाचार आनन्द हुआ, सुग्रीव और श्री रघुवरको ।।

अङ्गदादि दल-बल सहित, निकल पड़े इस ओर।
प्रबल प्रतीक्षा कर रहे, इनकी अवध किशोर।।

हो अत्यन्त उतावले, देख रहे श्रीराम।
किया तभी हनुमानने, आकर प्रथम प्रणाम ।।

बोले "आया दास है, सीता सुधि ले आज।
प्रभुकी कृपा कटाक्षसे, पूर्ण हुआ है काज ।।

अपने चरित्रकी रक्षामे, अति सफल सकुशल जानकी हैं।
प्राणोंकी चिन्ता नहीं उन्हें, चिन्ता करुणानिधानकी हैं॥

रावणके सभी प्रलोभन, औ भयका दिखलाना व्यर्थ हुआ।
वह साम, दाम या दण्ड, भेद चारोंमे नहीं समर्थ हुआ॥

वे नित्य शुद्ध, निश्चल मनसे, बस ध्यान आपका करती हैं।
पति ही क्या पुरुष समझ कर भी, सम्मान आपका करती हैं॥

जब सुनी आपकी व्यथा-कथा, दुखमे था सुख भी नाच उठा।
सब समाचार सुनकर उनका, मन मृग था सहज कुलाँच उठा॥

जब सुना मित्र सुग्रीव बने, हो गया सङ्गठित वानर दल।
तब वे प्रसन्न होकर बोलीं, "अब बच न सकेगा निशिचर दल"॥

हेराम ! अवधिके रहते ही, श्रीसीताको लाना होगा।
कर यत्न नहीं ला पाये तो, निश्चय ही पछताना होगा॥

चलते-चलते जो चूडामणि, दी है अब इसे लीजियेगा।
रावणके वधकी तैय्यारी, अब तो अविलम्ब कीजियेगा॥

हेराघवेन्द्र ! है सत्य बात, अनुपम अजेय निशिचर दल है।
है अद्वितीय सङ्गठन तथा, अद्‌भुत ही शारीरिक बल है॥

रावण एवं घननाद आदि, वे व्यक्ति नहीं साधारण हैं।
खायेगा उनका पाप उन्हें, अपनी जयका यह कारण है॥

अपना दल जीतेगा निश्चय, इसमे न तनिक भी शङ्का है।
बज कर ही नाथ रहेगा अब, लंकापर अपना डंका है"॥

सुन पवन तनयकी बातोंको, उत्तरमे यों बोले रघुवर।
करके सुकण्ठको ! सम्बोधन कर दृष्टिपात योद्धाओंपर॥

"हेमित्र ! तुरत निशिचर दलको, दलनेकी तैय्यारी करिये ।
अपनें सारे दल-बलको ले चलनेकी तैय्यारी करिये" ॥

दे दी सुकण्ठ ने आज्ञा तब, हो गये सुभट तैय्यार सभी ।
ज्यों एक साथ लहराये हों, जगतीके पारावार सभी ॥

भर-भर उमङ्ग, कर हर्षनाद, जयकार लगाते जाते हैं ।
मनमे अपनें उल्लास लिये, आनन्द मनाते जाते हैं ॥

चलते-चलते कुछ ही दिनमे, जा पहुँचे सागरके तटपर ।
डाला पड़ाव चहुँओर और, टिक गये वहाँ निर्भय डटकर ॥

—:०—०:—

लङ्कापति इस ओर यों, करने लगा विचार ।
मन्त्री सचिवादिक तथा, सहित लिये परिवार ॥

रावण बोला "सज्जनो! आज, हमको विचार यह करना है ।
हो जाय शत्रुका सर्वनाश, बस ध्यान इसीपर धरना है ॥

जो होनी होती है वह तो, निर्बाध स्वयं ही होती है ।
पर यह लंकाका जल जाना, हम सबके लिये चुनौती है ॥

लज्जाके मारे शिर नीचा, अपना तो आज हो गया है ।
उस एक अकेले वानरके द्वारा जो काज हो गया है ॥

सबसे विचार कर कार्य करे, वह उत्तम पुरुष कहाता है ।
निर्णय जो अपने आप करे, वह तो मध्यम कहलाता है ॥

जो बिना विचारे करता है, बस अधम वही है नर समझो ।
वह हानि उठाया करता है, तुम सावधान होकर समझो ॥

॥ प्रत्येक व्यक्ति अपनी सोची हुई बातको ही सच्ची समझता है ॥

इसलिये कार्य सोचो ऐसा, जिसमे कि हमारा मङ्गल हो ।
आवेश, रोष दिखला केवल, सोचो न कभी उच्छृङ्खल हो ॥
जिस किसी भाँति भी समझो, लङ्कापर चढ़ आयेंगे वे ।
निश्चय हैं शान्ति सहित, क्षण भर भी बैठ नहीं पायेंगे वे" ॥
मन्त्री निकुम्भ बोला "राजन् ! देखें इस असुरोंके दलको ।
हेअसुरराज! दे ध्यान तनिक, संस्मरण करें अपने बलको ॥
कैसे-कैसे योद्धाओंको, एवम् युद्धोंको जीता है ।
रणवीर ! आपका जीवन तो, रण करनेंमे ही बीता है ॥
फिर राम, लक्ष्मणसे लड़ते, यों सोच आप क्यों करते हैं ?
हो विश्व विजेता इस प्रकार, संकोच आप क्यों करते हैं ??
हमको ही आज्ञा दे दीजे, हम जड़से उन्हें गिरा देंगे ।
अरिदलके सभी सैनिकोंको, करके निष्पाण सुला देंगे ॥
हों उदासीन, साहस विहीन, वे सदा हारते हैं जगमे ।
करते उपाय उद्योग, काम अपने सुधारते हैं जगमे" ॥
तब बोला कुम्भकर्णका सुत, "अविलम्ब वहाँ मै जाता हूँ ।
मैं राम सहित रामादलको, क्षण भरमे मार भगाता हूँ" ॥
दुर्मुख धूम्राक्ष, निकुम्भ, रभस फिर, वज्र-दंष्ट्र भी बोल उठे ।
"अनुमोदन करते हैं हम सब" यों भाव हृदयके खोल उठे ॥

तभी विभीषणनें तुरत, किया सभीको शान्त ।
हाथ जोड़ कहनें लगे, इसके तब उपरान्त ॥

"करनेपर कटु,पर सत्य बात, हमसे कोई तैय्यार नहीं ।
भयके मारे आगे आकर, करता कोई प्रतिकार नहीं ॥

॥ हाँ मे हाँ मिलाने वाले सदा प्रिय लगा करते हैं ॥

सह सकता कभी विरोध नहीं, यह मानवकी दुर्बलता है ।
ऐसा मानव निशिदिन जगमे, निश्चय ही उलटा चलता है ।।
उलटा चलनेका मिलता है, निश्चय उलटा परिणाम उसे ।
जो धरतीपर बबूल बोता है, कहाँ मिलेगा आम उसे ??
बस वही भूल हेबन्धुप्रवर ! तुम जान बूझ कर करते हो ।
जो रामचन्द्रसे लड़नेके, दुस्साहसका दम भरते हो ।।
हनुमान अकेला इस प्रकार, इस लङ्कामे आ सकता है ।
वह एक अकेला ही इतना, क़ौतुक कर दिखला सकता है ।।
उनसे लड़नेकी ठान रहे, बतलाओ तो किस आशापर ?
हाँ मे-हाँ करने वालोंकी, अतिसारहीन अभिलाषापर ??
पहले तो यह करिये विचार, सीताको हरकर लाये क्यों ?
साधारणसी घटनापर ही, इतना विस्तार बढ़ाये क्यों ??
हो गई भूल है तो उसका, तुम अपने-आप विचार करो ।
सीताको सोंप रामजीको, तुम शासन भली प्रकार करो" ।।
हो गई समाप्त सभा उस दिन, सब ही अपने घर जाते हैं ।
साथ ही दूसरे दिन सबकी, साधारण सभा बुलाते हैं ।।
बढ़-बढ़ बातें करने वाले, हो गये इकट्ठे आ करके ।
लंकाधिराज फिर सबसे ही, बोले ऐसा समझा करके ।।
"जिस रूपवती नारीको मै, कर हरण यहाँ ले आया हूँ ।
करनेपर भी नाना उपाय, वशमे न उसे कर पाया हूँ ।।
प्रत्येक अङ्ग ओ रङ्ग, ढङ्ग, उसके अत्यन्त सुहाये हैं ।
उसका स्वभाव ओ हाव-भाव, सब मेरे मनको भाये हैं ।।

वह नहीं चाहती है मुझको, आहोंपर आहें भरती है।
अपने पतिकी ही केवल वह, दिन-रात प्रतीक्षा करती है।।
चाहे जो भी हो जाय उसे, मैं कभी नहीं लौटाऊँगा।
जो पड़े चुकाना मूल्य मुझे, हर्षित हो उसे चुकाऊँगा।।
हो जाय शत्रुका सर्वनाश, सीता भी हमको मिल जायें।
हो जाय काम यदि दोनो तो, मुर्झाई कलियाँ खिल जायें"।।
यह सुनकर बोला कुम्भकर्ण, "सीता थी जब हर ली तुमने।
उसके पहले क्या एक सभा, थी सोच समझ कर ली तुमने??
मन्त्रणाहीन निज इच्छासे, अन्याय युक्त हो कार्य जहाँ।
हेरावण! ध्यान लगा सुन लो, सङ्कट आते अनिवार्य वहाँ।।
कर लिया काम जो तुमने है, उसको हम सभी निभायेंगे।
अवसर आनेपर हेभैया! हम भी लड़नेको जायेंगे।।"
कर दिया समर्थन अनुमोदन, सबने जिस समय लड़ाईका।
सब थे प्रसन्न पर केवल मन, था दुखा विभीषण भाईका।।
भाईसे-भाई बोला यों, "क्यों करते आप बुराई है?
समझानेपर भी हेभाई! भाईकी बात न भाई है।।
लंका निवासियों! हाथोंसे, यों सर्वनाश क्यों करते हो?
लंकाका ओ लंकेश्वरका, यों करने नाश न डरते हो??
लंकापतिके भयसे सभीत, हाँमे-हाँ सभी मिलाते हो।
केवल प्रसन्न रखने इनको, सच्ची कहते भय खाते हो"??
यह सुनकर बोला मेघनाद, "तुम कायर हो, हो वीर नहीं।
रण करनेसे डरने वाले, कहला सकते रणधीर नहीं"।

उत्तरमे कहा विभीषणने, "तुम जैसे सम्मतिदाता हो।
आश्चर्य नहीं यदि लङ्कापर, संकटका बादल छाता हो" ॥
रावण बोला "चुप हूँ मै क्यों? इसलिये कि छोटे भ्राता हो।
दे देता प्राणदण्ड उसको, बातें जो अन्य सुनाता हो ॥
भाईके बल, वैभवसे नित, प्रायः भाई जलता ही है।
भाईके कहनेपर भाई, प्रायः उलटा चलता ही है" ॥

समझाये समझा नहीं, उलटा किया विरोध।
प्राणदण्डका भय दिखा, लाया मनमे क्रोध ॥
तभी विभीषणने कहा, "हे भाई लंकेश!
क्षमा करें मै जा रहा, अब तो छोड़ स्वदेश" ॥

यह कहकर साथ विभीषणने, चट छोड़ दिया निज भाईका।
था सोच लिया "है उचित नहीं, सहवास दुष्ट अन्याईका" ॥
बोला "हेभाई! अब तो मै, उस ओर शरणमे जाता हूँ।
इन चरणोंका आसरा छोड़, अब रामचरणमे जाता हूँ ॥
हेभाई! सत्य बात क्या है? वह प्रथम जानना दुष्कर है।
यदि किसी भाँति जाने भी तो, फिर उसे मानना दुष्कर है ॥
जैसे तैसे यदि मान लिया, तो उसे निभाना दुष्कर है।
यदि निभा लिया तो औरोंको, उसपर ले आना दुष्कर है ॥
तुम काम वासनामे फँसकर, सब न्याय नीति बिसरा बैठे।
अपने-अपने स्वारथके वश, हाँ मे-हाँ सभी मिला बैठे ॥
लघु भ्राता होनेके नाते, आगे बढ़ बोल नहीं सकता।
अनुशासनके भयके कारण, मुख अपना खोल नहीं सकता ॥

इसलिये क्षमा हो राजन् ! जो मैंने कटु वचन सुनाये हैं।
पर फिर कहता हूँ लंकाके, निश्चय ही दुर्दिन आये हैं" ॥

यों कहकर फिर चल पड़े, तुरत विभीषण वीर।
चार मन्त्रोंके सहित, आये राघव तीर ॥

इन पाँचोंको आते देखा, तब वानर सब घबराते हैं।
वध करनेकी आज्ञा लेनें, ढिग वानरेशके आते हैं ॥
ये इधर दूर ही खड़े हुये, ऊँचे स्वरसे समझाते हैं।
लंकासे चलकर आनेका, अपना उद्देश्य बताते हैं ॥
सुग्रीव रामजीसे बोले, "बन आया यहाँ गुप्तचर है।
आया है भेदी बनकर यह, इसका हमको निश्चय डर है ॥
वैरीके भाईका भगवन् ! कैसे विश्वास किया जाये ?
बिन जाने पहचाने कैसे, इसको सम्मान दिया जाये" ??
अङ्गदनें, जामवन्तने भी, लग-भग मिलती ही बात कही।
वज्राङ्ग बलीने निम्न बात, इन सबके ही पश्चात् कही ॥
"हेआर्य ! कपट रखकर आता, तो इस प्रकारसे आता क्या ?
भेदी होता तो क्या कहिये, मनमे न तनिक घबराता क्या ??
हावों भावोंसे भली भाँति, मैंनें जैसे पहचाना है।
आपसमे खटक गई होगी, ? इसलिए हुआ यों आना है ॥
लंकाका राजा बननेंकी, मनमे कुछ अभिलाषा होगी।
यह समझ यहाँ आया होगा, पूरी मेरी आशा होगी ॥
इसलिये विनय यह मेरी है, इस पर विचार कुछ आप करें।
बन जायें मित्र आप दोनो, इससे इस भाँति मिलाप करें ॥

लंकाका भेदी मिला समझ, सब काम लिया जाये इनसे ।
फिर साम, दामसे यथा-योग्य, व्यवहार किया जाये इनसे ॥
सुग्रीव लगे कहने ऐसे, "है बात ठीक हेमित्रप्रवर !
पर अधर बीचमे छोड़ हमे, कर दे न कपट शुभ अवसरपर" ॥
बोले श्रीराम "कही तुमने, ये बातें सभी पतेकी हैं ।
अनुभव है पूरा हमको भी, बातें विचार करनेकी है ॥
पर इन दोनो भ्राताओंके, रहता है भेद विचारोंमे ।
यह भेद सदासे आया है, इनके उनके संस्कारोंमे ॥
इसलिये समझमे आता है, ये अपना काम बनानेको ।
हमसे मिल जाना चाह रहे, रावणका नाश करानेको ॥
प्रायः भाई-भाईमे भी, देखा है होती अनबन है ।
यह भी आये इस कारण ही, सम्भवतः यह कहता मन है ॥
राजा बननेकी अभिलाषा, होती न किसे है हेलक्ष्मण !
क्या सब भ्राताओंमे होते, मतिमान भरत जैसे लक्षण ??
फिर शरणागत हो आये हैं, मन इनका तोड़ नहीं सकता ।
यह मित्र चाहते हैं बनना, तो मै मुख मोड़ नहीं सकता ॥
रावण भी यदि शरणागत हो, तो अभय दान दूँगा उसको ।
सच्चे मनसे आजाये तो, मै हृदय लगा लूंगा उसको" ॥

लानेका आदेश पा, कह जय सीतानाथ ।
कपिदल ले आया उन्हें, फिर स्वागतके साथ ॥

कहा विभीषणने तभी, शीश नवा कर जोड़ ।
कुछ आशा लेकर यहाँ, आया हूँ घर छोड़ ॥

परिवार, सहोदर भाईको, त्यागा है अपना देश प्रभो।
इन तीनोंको ही त्यागेसे, होता है किसे न क्लेश प्रभो!!
पुरजन, परिजन, परिवार और प्रिय बन्धु त्यागना सरल नहीं।
इनको तजनेसे अधिक सरल, लगता पी लेना गरल नहीं॥
क्या करें? विवश होकर ऐसा, प्रायः करना पड़ता ही है।
कारणवश भाईसे-भाई, आपसमें यों लड़ता ही है॥
जब दिया आसरा चरणोंमें तो भगवन्! निभा लीजियेगा।
अपना ही अनुचर समझ मुझे, इतना उपकार कीजियेगा॥
रघुवर बोले "हेमित्र! हमें, लंकाके समाचार कह दो।
पहले बतलाओ सैन्य-शक्ति, क्या है उसके विचार? कह दो॥
तब कहा विभीषणने ऐसे, "उस रावणमें अतुलित बल है।
इससे क्या कहें? अधिक भगवन्! उसका अजेय राक्षस दल है"॥
रघुनन्दन बोले "निश्चय हम, उनको परलोक पठायेंगे।
हेमित्र! प्रतीज्ञा पूर्वक हम, तुमको लंकेश बनायेंगे॥
है शपथ मुझे भ्राताओंका, उसको सकुटुम्ब खपाऊँगा।
यदि मैं ऐसा कर सका नहीं, तो नहीं अयोध्या जाऊँगा"॥
यह सुन कर कहा विभीषणने, "रावण दल-बलसे आयेगा।
उसका करवाने सर्वनाश, यह सेवक हाथ बटायेगा"॥
लक्ष्मणसे बोले रामचन्द्र, "जल इस समुद्रका लाओ तुम।
झटसे लंकेश विभीषणका अभीषेक अभी करवाओ तुम"॥
आज्ञा पाते ही जलनिधिका, जल तभी वहाँ आजाता है।
अभिषेक विभीषणजीका कर, लंकेश बनाया जाता है॥

रामने बना दिया लंकेश ।
शरणागतको अभय दान दे, मिटा दिया सब क्लेश ।।

अपनें मनका दूर हो गया, रहा सहा सन्देह ।
रघुनन्दनके प्रति मनमे, हो गया अमित ही स्नेह ।।
प्रश्न अब आगे रहा न शेष ।

साम, दाम औ दण्ड भेदका, मिला सरल यह शस्त्र ।
हुए प्रसन्न राम भी मनमे पा अमोध यह अस्त्र ।।
नहीं है अब चिन्ताका लेश ।।

दोनोमे हो गई मित्रता भी दृढ़ताके साथ ।
दोनोको है स्वार्थ साधना एक-एकके साथ ।।
दया भी कर दी, यों अखिलेश ।

—: ०—० :—

एक गुप्तचर रामके, दलसे आया लौट ।
लंकापतिसे कह दिया, यों डंकेकी चोट ।।

"हेमहाराज ! सुनिये ! अरिदल, ठहरा समुद्रके तटपर है ।
लंकाका होगा सर्वनाश, श्रीराम डटे इस हठपर हैं ।।
क्या कहूँ आपसे हेराजन् ! उनकी सेनाका पार नहीं ।
मेरे अनुभवके बाहर है, बतला सकता विस्तार नहीं" ।।
शुक नामी राक्षसको रावण, फिर उसी समय बुलवाता है ।
बातें सुकण्ठसे कहनेको, वह इस प्रकार समझाता है ।।
कहता है "कहना उससे यों, क्यों व्यर्थ बीचमे आता है ?
तू निरा मूर्ख बनकर अपने दलका क्यों नाश कराता है ??

मैने न बिगाड़ा है तेरा, उसकी नारीका हरण किया।
क्या मिलने वाला है तुझको, जो तूने उनका साथ दिया ?
दोनोके झगडोंमे पड़कर, तू क्यों यह हानि उठाता है ?
ऐसी नादानी कर अपनी, सेना क्यों व्यर्थ खपाता है ?
उसका बनकर उसके आगे, यों भलीभाँति समझाओ तुम।
साथ ही साथ वैरीदलके, बलका परिचय ले आओ तुम" ॥
सारी बातें सुन रावणकी, शुक तुरत इधरको आता है।
कह सका न कुछ कपिपतिसे, वह पहले ही पकड़ा जाता है ॥
थोड़ासा देकर दण्ड तुरत, सुग्रीव छुड़ाने आते हैं।
यों रावणसें कह देनेको, अपना सन्देश सुनाते हैं ॥
अङ्गद बोले "भेदी है यह, इसको न अभी छोड़ा जाये।
हम चले जायँ उस पार सभी, बस इसे तभी छोड़ा जाये" ॥
जच गई बात सबके मनमे, तब बन्दी इसे बनाते हैं।
इसकें बन्दी बन जाते ही, सारे सैनिक हर्षाते हैं ॥
अब लगे सोचने सब मिलकर, हम किस प्रकार उस पार चलें ?
सौ योजन लाँघ पयोनिधिको, सेना उस पार उतार चलें ??

नल वानर कहने लगे "सुनिये श्रीअवधेश !
आती है मुझको प्रभो ! विद्या एक विशेष ॥

मै इस समुद्रके ऊपर पुल, विधिवत् प्रस्तुत कर सकता हूँ।
सामग्री मिल जाए तो मै, रचना अद्भुत कर सकता हूँ",
श्रीरामचन्द्रने उसी समय, सुग्रीव आदिको आज्ञा दी।
आवश्यक सारी सामग्री, अविलम्ब वहाँ पर मँगवा दी ॥

दस योजन चौड़ा और एक सौ योजन पुल बाँधा नलने ।
उस पुलके ऊपरसे चलना, आरम्भ किया सैनिकदलने ।।
आगे-आगे श्रीरामचन्द्र, हैं साथ प्रमुख योद्धा जिनके ।
बाकी विशाल सेना सारी, आ रही ठीक पीछे इनके ।।
उल्लास भरे जय घोषोंसे, आकाश पूर्ण हो जाता है ।
जिसको सुनकर लंकापतिका भी गर्व चूर्ण हो जाता है ।।
मनमे अदम्य उत्साह लिये, सैनिक दल चला जा रहा है ।
चलते-चलते सैनिक समूह, गायन सम्मिलित गा रहा है ।।

—: ० :—

"लंकापर विजयपताका अब, लहरानेको हे वीर ! चलो ।
सीतादेवीको ले आने, राघव-दलके रणधीर ! चलो ।।

शिर रखो हथेलीपर अब तो, नारीकी आन बचानेको ।
दानवतापर मानवताकी, बस विजय आज तुम पानेको ।।
अपने जीनेका मोह त्याग देने, यह चर्म शरीर चलो ।
आगे बढ़ते जाओ वीरो ! पीछे हटनेका नाम न लो ।।
मर कर यदि अमर कहाना हो, तो थोड़ा भी विश्राम न लो ।
रह जाय देखता वैरी भी, उसकी छातीको चीर चलो ।।

दुष्टाचरणोका दण्ड मिला, करता है क्या ? दिखला दो तुम ।
करना सहायता सज्जनकी, यह जग भरको सिखला दो तुम ।।
जीवन है "मिश्र" तभी समझो, दुखियोंकी हरते पीर चलो ।
लंकापर विजय पताका अब, लहरानेको हे वीर ! चलो" ।।

—: ० — ० :—

हर्षोन्मत्त होकर सेना, सानन्द सिन्धुके पार गई ।
यह समाचार सुन बिना लड़े, रिपु-सेना साहस हार गई ।।

फिर यथा-योग्य सुस्थानोंपर, जा अपने डेरे डाल दिये।
लंकाकी सीमाओंपर वे, विधिवत् फिर घेरे डाल दिये॥
शुक नामक बन्दीको अब तो, छोड़ा रघुवरके कहनेसे।
रावणके पास तुरत वह फिर, दौड़ा रघुवरके कहनेसे॥

पूछा रावणने तुरत, शुकसे सारी बात।
हो सभीत कहने लगा, तभी जोड़कर हाथ॥

"सब दलके सहित राम, लक्ष्मण, अब तो इस पार आगये हैं।
लंकापतिसे रण करनेंको, होकर तैय्यार आगये हैं॥
सीताको लौटा दें राजन्! अब भी न समय कुछ बीता है।
वह प्रलय मचा देगा जिसनें, खर औ दूषणको जीता है"॥
रावण बोला "तू भ्रममें है, जो ऐसी बातें करता है।
दिग्विजयी रावण कभी किसीसे लड़नेसे क्या डरता है??
उनको न पता मेरे बलका, कुछ अभी सही लग पाया है।
इस कारण ही वह राम यहाँ, सेना ले करके आया है"॥
शुक, सारण नामक अन्य दूत, दो भेजा तुरत रामदलमें।
"सब भली भाँतिसे जाँच करें, कैसे हैं वे अपने बलमें"॥
आते ही तुरत विभीषणने, उन दोनोंको पहचान लिया।
श्रीरामचन्द्रके आगे फिर, ले जाकर उनको खड़ा किया॥
राघव बोले! "तुम दोनोंने क्या देख लिया मेरे दलको?
अच्छे प्रकार जाँचा होगा, मेरे दलके पूरे बलको??
बाकी कुछ और रह गया हो, तो फिर अनुमान लगा लो तुम।
हम तुम्हें छूट देते हैं यह, निश्चय हो ध्यान लगा लो तुम॥

तुम कपट वेष धर आये हो, हम तुम्हें मार दे सकते हैं।
दोनोके शिर हम चाहें तो, धड़से उतार दे सकते हैं॥
पर तुम्हें नहीं मारेंगे हम, अब शीघ्र लौटकर जाओ तुम।
आदेश तुम्हें जो देते हैं, जाकर अब उन्हें सुनाओ तुम॥
प्राणोसे अधिक हमे प्रिय है, उसका तुमने जो हरण किया।
हेरावण! अपने लिये सुनो, यह ठीक नहीं आचरण किया॥
सीताके बदले तुम अपना, सर्वस्व नाश कर बैठोगे।
अपने जीवनके साथ साथ, सबका जीवन हर बैठोगे"॥
शुक, सारण छुट्टी पाकर यों, लङ्कापतिके आगे आकर।
कर जोड़ झुकाकर शिर बोले, रावणको ऐसे समझाकर॥
"हेराजन्! वे दोनो भाई, अति तेजस्वी बलधारी हैं।
सेनाके बलको तोलसकें, क्षमता ऐसी न हमारी हैं॥
शिर पर धर मुकट विभीषणके, अभिषेक कर दिया विधिवत् है।
सङ्कोचरहित हो तुरत-नाम, लङ्केश धर दिया विधिवत् है॥
सम्मति यदि आप मानते हैं, तो यही आपसे कहना है।
सीताको देकर सन्धि करें, जगमे यदि जीवित रहना है"॥
रावण बोला "मन्त्री होकर तुमने उनका यश गाया है?
ऐसा करके मेरे मनको, दुख ही तुमने पहुँचाया है॥
अब क्षमा किये देता हूँ मै, पिछली सेवाओंके कारण।
अन्यथा तुम्हारा वध करता, अपराध न है यह साधारण"॥
यह कहकर उनको विदा किया, मन ही मन अपने झुँझलाया।
आज्ञा देकरके तुरत एक, फिर कलाकारको बुलवाया॥

उस कलाकारसे बोला यों, "कहनेपर तनिक विचार करो।
प्रत्यक्ष रामके ही जैसा, तुम कटा शीश तैय्यार करो" ॥

कटा शीश ले रामका, जा सीताके पास।
बोला रावण "देख लो, और करो विश्वास ॥

तुम जिसका चिन्तन करती हो, वह मारा गया रणस्थलमे।
मुझसे विरोध कर सकता है, है कौन वीर धरणी तलमे ??

हो गई बात सारी समाप्त, छोड़ो अब उनकी आशा तुम।
सब चिन्ताओंको त्याग पूर्ण, कर दो मेरी अभिलाषा तुम" ॥

देखा उस कटे शीशको जब, सीताको भी विश्वास हुआ।
आश्चर्य हुआ फिर साथ-साथ, मन ही-मनमे अति त्रास हुआ ॥

वे चीख पड़ीं यह दृश्य देख, अतिशय व्याकुल हो जाती हैं।
इस सर्वनाशसे आहत हो, चिन्तातुर रुदन मचाती हैं ॥

इतनेमे आया दूत एक, आवश्यक कार्य बतानेको।
"अति शीघ्र साथ चलिये" कहकर लंकापतिको ले जानेको ॥

सरमा नामक राक्षसी एक, सीताकी परम सहेली थी।
धीरेसे बोली इस प्रकार, सीता जिस समय अकेली थी ॥

"क्यों रोती ? शोक मनाती हो? क्यों घबराती चिल्लाती हो ?
रावणके छल-बलमे आकर, क्यों ऐसे रुदन मचाती हो ??

जीवित हैं रामचन्द्र निश्चय, लंकाके निकट आगये हैं।
उनके दलके सैनिक सारे, चारो ही ओर छागये हैं ॥

वह दूत अभी जो आया था, सब समाचार ले आया है।
जाते ही रावणने तुरन्त, सैनिक दलको सजवाया है ॥

लो सुनो कानसे अपने तुम, छाई जो भी घबराहट है।
रथ ऊँट हाथियों घोडोंकी, ध्वनियोंकी जो भी आहट है ॥
इस भाँति सान्त्वना सीताको, देकरके धैर्य बँधाती है।,,
सन्देह रहित होकर अपने, मनमे सीता सुख पाती है ॥

—:०:—

अब सुनिये इस ओर जो, लगा राम दरबार।
किया विभीषणने प्रकट, अपना तुरत विचार।

हेराम ! हमारे चारोंही, साथी लंका हो आये हैं।
लंकामे जो हो रहा वहाँ, वे समाचार सब लाये हैं।
लंकापतिने चहुँओर सुदृढ़, सङ्गठित सुरक्षा करली है।
अनिवार्यरूपसे सेनामे, युवकोंकी भरती भरली है ॥
यह सुनकर सुग्रीवादि सभी, लंकाकी ओर सिधाते हैं।
चारों ही ओर मोरचोंको, फिर अच्छी तरह जमाते हैं ॥
तब कहा विभीषणने "भगवन्!, अङ्गद को अब भेजा जाये।
अन्तिम दे चेतावनी उसे, अच्छी प्रकारसे समझायें ॥"
आज्ञा पाकर अङ्गदने झट, लंकाकी ओर प्रयाण किया।
फिर सभी विरोधी बातोंका, रावणको प्रत्याख्यान किया ॥
अङ्गद बोला "बालीसुतको, श्रीमान् जानते होंगे ही ?
वह सेवक है रघुनन्दनका, यह बात मानते होंगे ही ??
श्रीरामचन्द्रने भेजा है, सन्देश उसीके द्वारा यह।
हेमहाराज ! दें ध्यान आप, सुनलें सन्देश हमारा यह ॥

कर नीच कर्म जग बीच नृपति ! अब अधिक नहीं जी पाओगे ।
लंकेश ! हमारे हाथोंसे, निश्चय सब मारे जाओगे ॥

सारा संसार सुखी होगा, लंकेश ! तुम्हारे मरनेपर ।
ऋषियोंका होगा दूर, चिरन्तन क्लेश तुम्हारे मरनेपर ॥

सादर सीताको रामचन्द्रके, पास नहीं भेजोगे तुम ।
फिर तो लंकाके शासनको लंकेश ! नहीं भोगोगे तुम ॥

लंकेश विभीषण ही होकर, भोगेंगे ये ऐश्वर्य सभी ।
लंकेश ! तुम्हारी इच्छायें, होने न पायगी पूर्ण कभी," ॥

अति क्रोधित हो रावण बोला, "दूतो ! झटसे लो पकड़ इसे ।
जाने न पाय यह किसी भाँति, लो लौह छडोंसे जकड़ इसे" ॥

आज्ञा पाकर कुछ असुरोंने, अङ्गदको बढ़कर पकड़ लिया ।
हिल-डुल न सके इस भाँति उन्हें, निज बाहुपाशमे जकड़ लिया ॥

अङ्गद बल पूर्वक घूमे झट, झटका देकर झट निकल गये ।
देखते-देखते ही सबको, धोखा दे झट-पट निकल गये ॥

गिर पड़े असुर सब धरतीपर, फिर उठे शीघ्र लज्जित होकर ।
अङ्गद अपने दलमे पहुँचे, बैठे सबमे हर्षित होकर ॥

जब यह निश्चय हो गया, करना है अब युद्ध ।
तत्पर लड़नेको हुये, सैनिक होकर क्रुद्ध ॥

सेनापतिकी आज्ञा लेकर वानर दल आगे बढ़ता है ।
कर तोड़-फोड़ सर्वत्र, सङ्गठित हो असुरोंसे लड़ता है ॥

लंकापतिके आगे सारे, ये समाचार जब जाते हैं ।
तब लंकापतिकी आज्ञासे. दलके-दल लड़ने आते हैं ॥

नाना प्रकारके बाजोंको, वादक भर रोष बजाते हैं।
रावणके इधर रामजीके, जय घोष लगाये जाते हैं॥
अत्यन्त भयानक महाघोर, दोनोदलमे सङ्ग्राम हुआ।
बह चलीं रक्तकी धारायें, कितनोका काम तमाम हुआ॥
यह कभी कभी तो मेघनाद, प्रत्यक्ष सामने लड़ता था।
पर कभी-कभी लड़ते-लड़ते, वह अन्तर्हित हो पड़ता था॥
कर दिया चकित वानरदलको, वह ऐसा युद्ध महान किया।
साथ ही अनेको वीरोंने, था यमपुरको प्रस्थान किया॥
अन्तमे राम, लक्ष्मणको भी, बाँधा जब नाग पाशमे है।
घावोंसे लथपथ है सब ही, जीवन रह गया श्वासमे है॥
वानरदलके नेता सारे, कुछ यत्न नहीं कर पाते हैं।
क्या करें अरे! अब क्या होगा? यों कहकर सब घबराते हैं॥
होगये क्षुब्ध इस ओर सभी, उस ओर सभी हर्षाते हैं।
मर गये राम, लक्ष्मण दोनो, यह सोच असुर सुख पाते हैं॥
सुग्रीव हुये भय भीत बहुत, तब कहा विभीषणने ऐसे।
"हेवीर! आपके रोनेसे, होगा यह कार्य कहो कैसे??
आप ही शोकमे डूबे तो, फिर अपनेदलका क्या होगा?
यदि दलनें साहस छोड़ा तो, निश्चय ही बहुत बुरा होगा॥"

मेघनाद तो चल दिया, लङ्कापतिके पास।
"राम, लक्ष्मण मर गये" कहा सहित विश्वास॥

यह सुन रावण निज बेटेको, हर्षित हो गले लगाता है।
आशीर्वाद देकर उसको, मनमे आनन्द मनाता है॥

विकटा, हरिजटा और त्रिजटा, तीनोको शीघ्र बुलाता है।
"लेजाकर सीताको घटना, दिखलाओ" यों समझाता है॥

पुष्पक विमानमे बैठाकर, यह दृश्य दिखाया सीताको।
मर गये राम, लक्ष्मण दोनो, ऐसे समझाया सीताको॥

सीतानें देखा दोनो ही, बेसुधसे हुये सो रहे हैं।
जो अगल बगलमे बैठे थे, व्याकुल अत्यन्त हो रहे हैं॥

दोनो भ्राताओं सहित सभीं, सैनिक सुधिरहित हो रहे हैं।
या तो ये सभी मर गये हैं, या तो ये सभी सो रहे हैं॥

सीता यह सारा दृश्य देख, कुछ भी न समझने पाती हैं।
यह भी अनुमान लगाती हैं, वह भी अनुमान लगाती हैं॥

कहती हैं "हे कौशल्ये ! यह, सुनकर क्या धैर्य धरोगी तुम ?
हे मात सुमित्रे ! बतलाओ, बिन आई मृत्यु मरोगी तुम ??

क्या कहूँ कहूँ भी तो किससे, क्या करुँ मरुँ भी तो कैसे ?
क्या होगा आगे मेरा भी, कुछ यत्न करूँ भी तो कैसे" ??

त्रिजटाने कहा कि "हे सीते! करिये यों व्यर्थ विलाप नहीं।
जीवित हैं ये दोनो भाई, इस भाँति करें सन्ताप नहीं॥

मै कहती हूँ तुमसे देखो, मरनेके चिह्न नहीं हैं ये।
जो दीख रहे हैं सो चिन्ता, करनेके चिह्न नहीं हैं ये॥

उस इन्द्रजीतके बाणोसे, सोये हैं ये वेसुध होकर।
कुछ ही क्षणमे जागृत होंगे जगते हैं ज्यों प्रायःसोकर॥

यों बातें करती हुई सभी, पहुँची अशोक वनके भीतर।
कुछ कुछ चिन्ता थी शेष अभी, सीताजीके मनके भीतर॥

हुये इधर जागृत जभी, कौशल्याके लाल।
देखा लक्ष्मणलालको, बेसुध पड़े निढ़ाल॥

अपने दुखपर तो नहीं, दिया तनिक भी ध्यान।
मन ही मन रघुवीर तब, दुःखित हुये महान॥

बोले, "हेलक्ष्मण! तुम को क्यों, इस भाँति मूर्च्छा आई है।
हो रहा तुम्हारे बिन देखो, असहाय तुम्हारा भाई है॥
सीताके लिये खो रहा हूँ, मै अपने प्रियवर भाईको।
अब कहाँ कहो? मै पाऊँगा, तुम सदृश अनुज सुखदाईको॥
अभिषेक विभीषणका करके, लङ्कापति इन्हें बनाया है।
उस वचन पूर्ति पथमे, कैसा? यह विघ्न अचानक आया है॥
सैनिक सारे भय-भीत हुये, देखो यह भागे जाते हैं।
हे लक्ष्मण! बिना तुम्हारे सब, अपने मनमे घबराते हैं"॥
लक्ष्मणके साथ सभी योद्धा, जब यत्न किया चैतन्य हुये।
होकर अपार हर्षित मनमे, अपनेको माना धन्य हुये॥

लंकापतिने जब सुना, समाचार तत्काल।
अब तो उसके हृदयमे, आ पहुँचा भूचाल॥

अब एक-एक सेनापतिको, रावण इस ओर पठाता है।
लड़-लड़कर भी लंकापतिका, सैनिकदल मारा जाता है॥
दुगुने साहससे वीरोंने, बदला लेनेकी ठानी है।
सोचा अब तो मर जाना है, या विजय युद्धमे पानी है॥
रावणके सम्मुख हनूमानने जा जब मुक्का ताना है।
रावणनें भी मुक्का ताना, भय तनिक न मनमे माना है॥

रावणका मुक्का पड़ते ही, हनुमान हो गये विचलित हैं ।
कुछ क्षणमे सम्हले और तभी, हो गये एकदम क्रोधित हैं ।।

बल पूर्वक मुक्का तान तभी, रावणकी छातीपर मारा ।
शिर चकराया मन घबराया, निकली मुखसे शोणित धारा ।।

रावण बोला "हेहनूमान् ! हो निश्चय योग्य बड़ाईके ।
इसमे कोई सन्देह नहीं, सचमुच हो योग्य लड़ाईके" ।।

वज्राङ्गी "बोले हेरावण ! यह व्यर्थ बड़ाई की तुमने ।।
बिन सोचे और विचारे बिन, यह बात यहाँ कहदी तुमने ।।

धिक्कार मुझे है जो मेरा, मुक्का खा अब भी जीवित हो ।
मुक्का खा करके भी, मेरा हो पाये केवल विचलित हो" ?? ।।

रावण क्रोधित हो एक और, मुक्का मारा वज्राङ्गीपर ।
मूर्च्छित हो उसी समय भू पर, गिर गये वीर विचलित होकर ।।

कुछ क्षणमे उठे और उठकर, लग गये लड़ाई करनेमे ।
फिर देखा नल, रावण पर जा, लग गये चढ़ाई करनेमे ।।

बलवीर लक्ष्मण, रावणका, संग्राम हुआ फिर डट कर हैं ।
दोनो दलके योद्धा रणमे, गिर रहे कई कट-कट कर हैं ।।

आगे बढ़ कर फिर लक्ष्मणनें, रावणका धनुष काट डाला ।
रावणनें कहा कि "साधारण, मानवसे नहीं पड़ा पाला" ।।

फिर शक्ति बाण ले क्रोधित हो, रावणनें छोड़ा लक्ष्मणपर ।
जाते ही चोट किया उसने, अविलम्ब लक्ष्मणके तनपर ।।

सुध-बुध खोकर अपनी सारी, लक्ष्मण गिर गये भूमि तलपर ।
फिर उन्हें उठानेंको आया, वह बिना विलम्ब किये पल भर ।।

यह देख पवनसुतनें उसके, मुखपर जड़ दिया तमाचा है।
पाँचो उँगलियाँ जमी ऐसी, जैसे जड़ जाता साँचा है॥
रावण मूर्च्छित हो गया उधर, हनुमान् ले गये लक्ष्मणको।
फिर उनको जागृतिमे लाये, अच्छा करके उनके व्रणको॥
कुछ ही क्षणमे जागा रावण, तब राघवने आगे डटकर।
रावणको विचलित करडाला, अपने बाणोसे आहतकर।
रावणको थका हुआ देखा, बोले "घर जा विश्राम करो।
हे रावण! कल सम्मुख आकर फिर हमसे तुम सङ्ग्राम करो"॥

सुनकर रघुवरके वचन, चला गया लंकेश।
झुंझलाया दुःखित हुआ, पाया मनमे क्लेश॥
विश्वविजेताका हुआ, सब घमण्ड यों चूर्ण।
पापोंका घट हो गया, था उसका परिपूर्ण॥
रावणको सूझा नहीं, अब कुछ और उपाय।
कुम्भकर्णको जगाकर, उसके पकड़े पाय॥

रावणसे बोला कुम्भकर्ण "क्या दशा असुरसेनाकी है?
कितना अरिदल हो गया नष्ट, कितना मरनेको बाकी है??
उस वचे हुए अरिदलको जा, मै स्वयं अकेला मारूँगा।
उन दोनो भ्राताओंको भी, अपने हाथों संहारूँगा॥
मैंने पहले ही कहा तुम्हें, सीता जो हरकर लाये हो।
हे रावण! आमन्त्रण देकर, तुम अपनी मृत्यु बुलाये हो॥
मानी न हमारी बात, पापका फल देखो मिल गया तुम्हें।
इस हाथ किये उस हाथ पापका, फल देखो मिल गया तुम्हें॥

हाँ मे हाँ करनेंवालोंकी, भैय्या! सम्मति मानी तुमने।
इस कालचक्रकी गति भूले भी कभी न पहचानी तुमने" ॥
रावणने भृकुटी टेढ़ी कर, यों कहा "हमे उपदेश न दो।
दे सकते हो तो सुख दो, पर कटु बातोंसे तुम क्लेश न दो ॥
जो बीत गई सो बीत गई, बीती घटनापर ध्यान न दो।
युद्धस्थलमे जाओ, मनमे, तुम कायरताको स्थान न दो" ॥
यों कहकर यह घटकर्ण क्रुद्ध, हो राघवदलकी ओर चला।
विकराल कालकी भाँति असुर, गर्जन करके घनघोर चला ॥
राघवदलके योद्धाओंने, इस ओर इसे आते देखा।
सेनाको सेनापतियोंको, चहुओर भाग जाते देखा ॥
अङ्गद बोले "हेवीरो ! तुम, इस भाँति भाग क्या पाओगे ?
निश्चय सुकण्ठके द्वारा तुम, सबके सब मारे जाओगे ॥
फिर क्यों न वीरता दिखलाकर, मर यहाँ वीरगति पाओ तुम?
आ डटो आत्मबलके द्वारा, अपना पौरुष दिखलाओ तुम" ॥
अङ्गदके भाषणको सुनकर, हो गये सङ्गठित वीर सभी ॥
मारने और मर जानेको, डट गये वहीं रणधीर सभी ॥
अङ्गद आगे जाकर उसकी, छातीपर लात लगाता है।
तब कुम्भकर्ण कर चीत्कार, मूर्च्छित होकर गिर जाता है ॥
जागृत हो उसने अङ्गदकी, छातीमे घूँसा जमा दिया।
मूर्च्छित होकर गिर गया वहीं, ओ महाघोर चीत्कार किया ॥

द्वन्द्व बीच सुग्रीवको, घायल किया विशेष।
दबा बगलमे, कर चला विचलित सैन्य अशेष ॥

सुग्रीव मूर्च्छासे जागे, तब उसको काटा दातोंसे।
काटे फिर नाक कान उसके, मारा हाथोंसे लातोंसे॥
फिर उछल गेंदकी भाँति तुरत, आ पहूँचे झट राघवदलमें।
होगए प्रसन्न एक दमसे, वे सभी सुभट राघवदलमें॥
लक्ष्मणने सम्मुख जाकर फिर, शस्त्रोंका प्रबल प्रहार किया।
तब कुम्भकर्णने हर्षित हो, अपने यों प्रकट विचार किया॥
हे लक्ष्मण! कौशलसे अपनें अतिचकित मुझे कर डाला है।
देखते देखते कइयोंका, तुमनें जीवन हर डाला है।
कहना पड़ता है धन्य तुम्हें, है धन्य तुम्हाँरा साहस बल।
मै किन्तु देखना चाहरहा, उस रामचन्द्रका रण कौशल"॥
श्री रामचन्द्रने उसी समय इसपर बाणोंकी वर्षा की।
सुध बुध सारी खो दी अपनी, गिर पडी हाथसे गदा तभी॥
फिर एक एक करके उसके, हाथों, पावोंको काट दिया।
मानो मालीने महावृक्षकी, शाखाओंको छाँट दिया॥
उसके पश्चात् रामने था, शिर उड़ा दिया रजनीचरका।
सब लोग हर्षसे नाच उठे, अब काम न था कोई डरका॥
लङ्कापति सुन यह समाचार, अतिशय व्याकुल हो जाता है।
हो जाता किंकर्तव्य मूढ़, कुछ नहीं समझमें आता है॥

रावण जब करने लगा, महाघोर सन्ताप।
पुत्रोंने तब यों कहा, "करिये नहीं विलाप"॥

फिर महापार्श्व, अतिकाय और, त्रिशिरा एवम् देवान्तकने।
जानेकी तैय्यारी करली, अतिक्रोधभरे नारान्तकने॥

गजरथ ऊँटों घोडोंपर चढ़, नाना विधिके शस्त्रोंको ले।
राघवदलपर जा टूट पड़े, अपने-अपनें अस्त्रोंको ले॥
राघवदलमे निशिचर दलमे, अत्यन्त भयंकर युद्ध हुआ।
वर्णन करना अति दुष्कर है, ऐसा प्रलयंकर युद्ध हुआ॥
हनुमान, राम, लक्ष्मण, अङ्गद, सुग्रीव आदि बलवीरोंनें॥
रावणके पुत्रोंको मारा, राघवदलके रणधीरोंने॥
रावणने जब यह समाचार सुन पाया घबराया मनमे।
चिन्तातुर होकर बैठ गया, अत्यन्त शोक छाया मनमे॥
तब मेघनाद बोला मेरे, रहते न आप सन्ताप करें।
आज्ञा दें जो भी देना हो, पर ऐसे नहीं विलाप करें॥
हे महाराज! मै जाकरके, सबको रण बीच सुला दूँगा।
सुग्रीव, राम, लक्ष्मण आदिक, सारोंका ज्ञान भुला दूँगा॥
कर श्वेत छत्र शिरपर धारण, चल पड़ा इन्द्रजित महाबली।
राघवदलके साहस बलके, आगे उसकी कुछ नहीं चली॥
आकाश मार्गमे स्थित होकर, वर्षाकी उसने बाणोंकी।
हो गया कठिन राघवदलको, रक्षा करनी भी प्राणोंकी॥
सेनाके सहित राम, लक्ष्मण, रणमे मूर्च्छित हो जाते हैं।
घर चल देता है मेघनाद, जब प्रमुख वीर सो जाते हैं॥
इस ओर लोग जो जागृत थे, कर बीच मशालें लिये हुये।
वे सबकी सुध-बुध लेते थे, सन्ताप गरलको पिये हुये॥
जिस समय विभीषण सुधि लेने, श्रीरामचन्द्रके पास गये।
इनकी मूर्च्छावस्था देखी, मनमे हो बहुत उदास गये॥

फिर जाम्बवन्तसे पुछा तो, बोले "बस बुरी अवस्था है।
पर बतलाओ राघवदलकी, कैसी इस समय व्यवस्था है।।
तुम प्रथम बताओ यह मुझको, वज्राङ्ग बली तो जीवित हैं ?
मूर्च्छित तो नहीं हुए हैं वे, वे तो हर तरह सुरक्षित हैं" ??
यह सुनकर कहा विभीषणनें, "आ रही समझमे बात नहीं।
करता हूँ व्यर्थ विवाद आज, श्रीमान् आपके साथ नहीं।
क्यों नहीं आपको है चिन्ता, श्रीराम और श्रीलक्ष्मणकी ?
देखता हूँ कि केवल चिन्ता है, हनूमानके रक्षणकी ??
हनुमतकी केवल चिन्ता है, इसका कहिये क्या कारण है ?
बतलायें मेरी शङ्काका, हो सकता कैसे वारण है" ??
उत्तरमे बोले जाम्बवन्त "सारोंके मूर्च्छित होने पर।
चिन्ता न मुझे कुछ भी होगी, मूर्च्छित हो सबके सोनें पर।।
हनुमान् हैं यदि जागृत तो, फिर सारे जिवित हो जायेंगे।
हनुमान् सोगये तो समझो, हम सारे ही सो जायेंगे।

—:०:—

बच गये आज वे तो ही बात भली है।
अपने तो रक्षक ही वज्राङ्ग बली है।।
इनके रहते हमको कुछ भी भय क्या है?
श्रीमहावीरको तुमने क्या समझा है ??
इनके रहते क्या कोई काम रहा है ?
अब तक इनसे ही अपना काम बना है
की है रक्षा जब कभी आह निकली है।। अपने।।

सारी सेना चाहे मूच्छित हो जायें।
श्रीराम, लक्ष्मण भी चपेटमे आयें।।

बच जायेंगे यदि महावीर बच जायें।
इसलिये विभीषण! हमको यह बतलायें।।
विपदायें अपनी उनसे सदा टली है ।। अपने.।।

तब कहा विभीषणने वह प्रभुका प्यारा।
बिन मूर्च्छाके रक्षित है राम दुलारा।।
सत्यार्थोमे है यह सौभाग्य हमारा।
मझधार डूबतेको मिलगया सहारा।।
खिल जायेगी वह कली कि जो कुम्हली है।। अपने."।।

सबकी सेवा जो की वज्राङ्गबलीने।
सम्भवतः कोई की हो कभी किसीने।।
जीवन पाया रघुवर ओ सीताजीनें।
उनका महत्व जाना है "मिश्र" सभीने।।
उनके ही द्वारा जीवन बेल फली है ।। अपने." ।।

—:०:—

हनुमान् उपस्थित हुए तभी, कर जोड़ कहा "कहिये क्या है?
कुछ मेरे योग्य बतायें भी, अब काम रहा कहिये क्या है"??
बोले सुषेण "हेमहावीर ! औषध विन काम नहीं होगा।
जीवन बूटीके बिना सुनो, इनको आराम नहीं होगा।।
हेवीर ! हिमालय पर्वतपर, इस समय तुम्हें जाना होगा।
औषधियाँ हम बतलाते हैं, उनको तुमको लाना होगा।।

"मृत सञ्जीवनी" कहाती वह मरतेको तुरत जिलाती है।
है जो "सुवर्णकरिणी" वह तो, घावोंको तुरत मिलाती है।।
जो है "विशल्यकरिणी" वह तो,सब व्यथा दूर कर देती है।
"सन्धान करिणी"औषध वह तो,घावोंको झट भर देती है"।।
हनुमत बोले "चिन्ता न करें, जाने आनेकी देरी है।
औषध समझो घरमे ही है, बस यही प्रार्थना मेरी है"।।
हनुमान् उड़े उड़कर तुरत, उस पर्वतपर चढ़ जाते हैं।
औषधियाँ चारो ही लेकर, अपने दलमे चट आते हैं।।
उपचार किया तो सारेके, सारे वे जागृत होते हैं।
जैसे प्रातः जग जाते हैं, ज्यों निशाकालमे सोते हैं।।
हनुमतके बल पौरुषपर सब जन, गर्व लगे करने अतिशय।
सब मिलकर लोग पुकार उठे, बोलो"बज्राङ्गबलीकी"जय।।

राघवदलमे छा गया, अब तो हर्ष अपार।
की श्रीयुत हनुमानकी, बारबार जयकार।।
रावणनें जब थी सुनी, इस प्रकारकी बात।
विचलित चित होकर तभी,मारा शिरपर हाथ।।
आज्ञा दी सुग्रीवने, करके निश्चित राय।
"लङ्काको जा रात्रिमे, अग्नि लगा दी जाय"।।

आज्ञापाकर योद्धाओंने जा, आग लगा दी लङ्कामे।
घर-घर मे घुस-घुसकर सबने, अन्धेर मचा दी लङ्कामे।।
बालक, बुढ़े,नारी–नर सब, बस हाहाकार लगे करने।
हो गये भस्मके ढेर भवन, बिन मृत्यु लगे निशिचर मरने।।

फिर कुम्भकर्णके पुत्रोंको, रावण तुरन्त बुलवाता है।
"जा इसी रात्रिमे अभी लड़ें," ऐसा आदेश सुनाता है ॥

ये कुम्भ, निकुम्भ लड़े जाकर कुछ कम न पराक्रम दिखलाया।
पर इनके महापापने ही, था अन्त समय इनको खाया ॥

इसके पश्चात् हुआ क्या? फिर, बस वही बात बतलाते हैं।
आश्चर्यजनक अद्भुत अभिनय, सुनिये जो करने जाते हैं ॥

कृत्रिम सीता, सीताके ही, जैसींको पास बिठा रथमे।
चल पड़ा युद्धमे मेघनाद, यह कार्य किया फिर उस पथमे ॥

कृत्रिम सीताके केश पकड़, बलपूर्वक उसे उठाया फिर।
दूसरे हाथमे खड्ग लिया, उसका कर दिया सफाया फिर ॥

बोले हनुमान् "अरे दुर्जन! तूने यह क्या कर दिया बता?
रणधीर वीर कहलाता है, नारीका वध क्यों किया बता ??

कायरताका यह किया काम, लज्जा न तुझे कुछ आई है।
रे दुष्ट! आज यह तूने भी, कैसी की पाप कमाई है" ॥

कुछ ध्यान न देकर इन्द्रजीत, चल दिया वहाँसे उसी समय।
हनुमान् रामकी ओर तभी, चल दिये लिये मनमे संशय ॥

जब समाचार रघुनन्दनको सीताजीके कह दिये सभी।
श्रीरामचन्द्रजी मूच्छित हो, बस धरणीपर गिर गये तभी ॥

सैनिक राघवदलके उदास, होकर रोते चिल्लाते हैं।
इतनेमे वीर विभीषण भी, जब लौट युद्धसे आते हैं ॥

सीताके वधकी बात सुनी, बोले "हैं झूठी बात सभी।
कृत्रिम सीता होगी कोई?, झूठा है यह उत्पात सभी ॥

पर ध्यान रहे अब मेघनाद' कर रहा युद्ध अतिभारी है।
हो गया यज्ञ जो पूर्ण कहीं, तो निश्चय हार हमारी है॥
हे राघवेन्द्र ! दलके समेत, तय्यार कीजिये लक्ष्मणको।
साथी बन मैं भी जाऊँगा, बस भेज दीजिये लक्ष्मणको"॥
राघव बोले "शस्त्रास्त्र सभी, सङ्गमे लेकर आओ लक्ष्मण!
वध करने मेघनादका तुम,अब शीघ्र चले जाओ लक्ष्मण!!"
आज्ञाको करके शिरोधार्य, लड़नेको लक्ष्मण वीर चले।
साथ ही साथ राघवदलके, कुछ चुने हुए रणधीर चले॥
जाते ही जाते लक्ष्मणने, अति विकट घोर सङ्ग्राम किया।
देखते-देखते क्षण भरमे, कइयोंका काम तमाम किया॥
असुरोंका दल भी टूट पड़ा, क्रोधित होकर राघवदलपर।
दोनोको है विश्वास प्रबल, मनमे अपने अपने बलपर॥
लक्ष्मणसे कहा विभीषणनें, "यह ही शुभ अवसर है लक्ष्मण!
इसका जीना मरना अब तो, इस रणपर निर्भर है लक्ष्मण!!"
बोला घननाद विभीषणसे, "तुझको कुछ लाज न आती है ?
किस भाँति मरेगा मेघनाद, ऐसी सम्मति दी जाती है ??
जिस धरतीका खा अन्न पला, परतन्त्र बनाता है उसको ?
जो सगा भतीजा है अपना, रणमे मरवाता है उसको ??"
उत्तरमे कहा विभीषणनें "परनारीगामी भाईको।
नारीको चोरी करता हो, ऐसे भाई अन्याईको॥
त्यागा जाए तो दोष नहीं, कहलाता सच्चा धर्म यही।
पापीको जड़से नष्ट करें, तो कहलाता शुभ कर्म यही"॥

घरका साधारण शत्रु, बाहरके प्रबल शत्रुसे भी भयानक होता है।

लक्ष्मणसे बोला मेघनाद, "जो मार पड़ी थी भूल गये ?
मैंने जो दिये बाण द्वारा, क्या भूल तुम्हें वे शूल गये" ??
लक्ष्मण बोले "सम्मुख आकर, लड़कर वीरत्व दिखाते तुम।
तो तुम्हें समझते वीर पुरुष, छुपकर न भागकर जाते तुम"।।
करके कटाक्ष दोनोने हीं, फिर महाघोर सङ्ग्राम किया।
दोनोने बड़ी चपलतासे, अपना कौशलमय काम किया।।
लक्ष्मणके तीव्रबाण द्वारा, जब कवच अङ्गका टूट पड़ा।
लक्ष्मणका भी उसके द्वारा, तब कवच अङ्गका टूट पड़ा।।
वे दोनो ही समान योद्धा, अपना पौरुष दिखलाते हैं।
दोनो ही खाते हार नहीं, शस्त्रोंपर शस्त्र चलाते हैं।।
जब मार दिया श्रीलक्ष्मणने, उसके बलवान् सारथीको।
बन जाना पड़ा सारथी भी, उस महाबली महारथीको।।
रथको भी चला रहा है वह, फिर छोड़ रहा बाणोंको भी।
बचना है उसको लेना है, फिर वैरीके प्राणोंको भी।।
राघवदलके योद्धाओंनें, फिर उसके रथको तोड़ दिया।
घोड़ोंपर इतनी मार पड़ी, उन सबने जीवन छोड़ दिया
पैदल ही इन्द्रजीत अब तो, लक्ष्मणकी ओर सिधाता है।
चकमा देकर कुछ समय बिता, फिर रथारूढ़ हो जाता है।।
लक्ष्मणने क्रोधित हो फिर तो, झट धनुष काट डाला उसका।
जब लिया दूसरा तो वह भी, चट धनुष काट डाला उसका।।
फिर घोड़े और सारथीको, चट मार गिराया लक्ष्मणने।
रावणके सुतसे कम न यहाँ, वीरत्व दिखाया लक्ष्मणने।।

घननाद दूसरे रथपर चढ़, लक्ष्मणके सम्मुख आ पहुँचे ।
लक्ष्मणके रक्षक बनकरके, उस समय विभीषण जा पहुँचे ॥
रथवान्, अश्व सब चूर चूर, कर दिये विभीषणने आकर ।
तब निशित शक्ति छोड़ी उसने, तत्काल विभीषणके ऊपर ॥
लक्ष्मणने शक्तिबाण द्वारा, उसकी वह शक्ति नष्ट करदी ।
निज अतुल पराक्रमके आगे, उसकी स्थिति अधिक स्पष्ट करदी॥
रौद्रास्त्र उठाया जब इसने, वरुणास्त्र उठाया लक्ष्मणनें ।
इसने छोड़ा जब अग्निबाण, सौर्यास्त्र चलाया लक्ष्मणनें ॥
यों जोड़ तोड़के साथ शस्त्र, दोनो ही ओर निकलते हैं ।
असफल हो करके दोनो ही, अपने हाथोंको मलते हैं ॥
इन्द्रास्त्र लिया फिर लक्ष्मणने, वह मेघनाद पर छोड़ दिया ।
रावणका बलशाली बेटा, निरुपाय हुआ दम तोड़ दिया ॥
सब अङ्ग हो गये छिन्न भिन्न, यों मेघनादका अन्त हुआ !
वह राक्षसदल फिर टिक न सका, भागा निराश अत्यन्त हुआ ॥
राघवदलके सब वीरोंनें, इस भाँति पुकारा हो निर्भय ।
श्रीरामचन्द्रके साथ साथ, बोले "लक्ष्मण भ्राताकी जय" ॥
राघव बोले "भैया लक्ष्मण ! अति दुष्कर काज किया तुमनें ।
है अमित प्रशंसा योग्य कार्य, जो कुछ भी आज किया तुमने" ॥
बोले "हे वैद्य! सुषेण सुनो, सब वीरोंका उपचार करो ।
कर नूतन शक्ति प्रदान इन्हें, झट-पट इनको तैयार करो" ॥

प्रमुख जनोनें जा तुरत, लङ्कापतिके पास ।
कहा, हुआ जिस भाँति था, मेघनादका नाश ॥

इस अशुभ सूचनाको पाकर, रावण शिर धुन--धुन रोता है।
वह शोकसिन्धुमे पड़करके, क्षण-क्षणमे मूर्च्छित होता है॥
"हे बेटे! आज तुम्हारे बिन, लङ्का सूनी दिखलाती है।
युवराज विना लङ्का नगरी, अब मुझको काटे खाती है॥
हे पुत्र! तुम्हारे बिना आज, लङ्कापति साहस हीन हुआ।
बलशाली सुतके मरनेपर, यह पिता तुम्हारा दीन हुआ"॥
वह बोला "जनकनन्दिनीको, जा इसी समय हम मारेंगे"।
ले खड्ग हाथमे, चला तुरत, बोला "शिर अभी उतारेंगे"॥

रावणको आते देखा तब, सीता मनमे घबराती हैं।
"क्या होगा? हे भगवान्! आज, यों कह मनमे भय खाती हैं॥
था शक्तिवान् मन्त्री सुपार्श्व, उसनें जा रोका रावणको।
"ऐसा मत पापाचरण करें," यों कहकर टोका रावणको॥
"वेदज्ञ शास्त्रके ज्ञाता हो, फिर यह कुकर्म क्यों करते हैं ?
रणवीर, धीर होकर साहसको, त्याग पाप यों करते हैं ??
दीना अबलाका वध करना, लङ्केश! आपको उचित नहीं।
कर अधमकर्म अपयश पाना, क्या होगा इसमे अहित नहीं ??
है आज कृष्ण यह चतुर्दशी, कल जब कि अमावस्या होगी।
तब रणमे विजय प्राप्त करिये, सीता अपने वश्या होगी॥
इतना सुन रावण लौट पड़ा, रणका प्रबन्ध सब करता है।
अधिकांश वीर मर जानेसे, उससे कुछ नहीं सुधरता है॥

प्रातकाल जब हो गया, आज्ञा दे लङ्केश।
बुलवाया उनको तभी, वीर रहे जो शेष॥

बोला "है यही समय वीरो! इस जगमे सुयश कमानेका।
मरना तो है निश्चय जगमे, मत सोच करो. मर जानेका॥
जो मारे गये वीर उनका, प्रतिशोध तुम्हें लेना होगा।
रह गये उधर जो भी बाकी, अब दण्ड उन्हें देना होगा॥
लङ्काका लङ्कापतिका भी, बाकी अभिमान तुम्हींपर है।
तिलभर है बात असत्य नहीं, रह जानी आन तुम्हीं पर है॥
अस्त्रों, शस्त्रोंसे सज्जित हो, आगेको बढ़ जाओ वीरो!
नेतृत्व स्वयं मै करता हूँ, डटकर अब अड़ जाओ वीरो!!

. वीर पुरुषो! तुम्हें इस बात का नित ध्यान रहे।
प्राण चाहे न रहे किन्तु सदा मान रहे॥

देहके साथ लगा है यह जीना मरना।
तुम्हें इस बातकी पहचान रहे ज्ञान रहे॥

हार मेरी न यहाँ हार तुम्हारी होगी।
यदि लड़नेमे कोई, आप हैं अन्जान रहे॥

बढ़ चलो तुम न रुको शान्तिका अब नाम न लो।
आज तक स्थान तुम्हारा था वही स्थान रहे॥

साथ साहसके बढ़ो और लगाओ टक्कर।
करो चिन्ता न चाहे सामने चट्टान रहे"॥

लङ्कापतिके भाषणको सुन, आगये जोशमे सबके सब।
बदलेकी लिये भावनाएँ, भर गये रोषमे सबके सब॥
डट गये समरमे दोनो दल, भिड़ गये तुल्य बल वालोंसे॥
शिरसे शिर टकरा गये और, करवाल लड़ी करवालोंसे॥

रावणके चारो घोड़ोंको, मारा जिस समय विभीषणने ।
तब शक्ति विभीषणपर मारी, क्रोधायमान हो रावणने ।।
लक्ष्मणने तभी बीचमे ही, शक्तिको शक्तिपर छोड़ दिया ।
टकराईं दोनो आपसमे, शक्तिने शक्तिको तोड़ दिया ।।
रावणने शक्ति दूसरी ले, झट मारी पुनः विभीषणपर ।
लक्ष्मणने रक्षा की फिरसे, हो सावधान आगे बढ़कर ।।
आवेश रोषमे आकर फिर, लक्ष्मणने वे शर वर्षाये ।
उन निशित शरोंकी वर्षासे, लङ्कानरेश भी घबराये ।।
रावण बोला "हे लक्ष्मण! तुम, रक्षा इसकी यों करते हो ।
अब लो इस शक्ति तीसरीसे, तुम अभी यहाँ पर मरते हो"।।
उस शक्ति बाणके लगते ही, श्रीलक्ष्मण गिरे असुध होकर ।
श्री रामचन्द्रने रावणको, फिर मार भगाया है सत्वर ।।
फिर वीरबन्धुके पास बैठ, श्रीराम दुखित हो रोते हैं ।
इस महाशक्तिसे आहत लख,क्षणभर निज सुध भी खोते हैं ।।
कहते हैं "हेलक्ष्मण ! यदि तुम, यों साथ हमारा छोड़ोगे ।
इस कठिन समयमे हमसे यदि, तुम अपने मुखको मोड़ोगे ।।
तो पुण्य अयोध्या नगरीको, मै मुख कैसे दिखलाऊँगा ?
कौशल्या और सुमित्राको, मै क्या कहकर समझाऊँगा "??
बोला सुषेण रघुवरसे यों, "लक्ष्मण निश्चित ही जीवित हैं ।
शुभ चिह्न दृष्टिमे आते हैं, अत एव न समझें ये मृत हैं ।।
हेमहावीर हनुमान् ! अभी, बस इसी सयम ही जाओ तुम ।
पुर्वकी भाँति वे चारो ही, औषधियाँ लेकर आओ तुम " ।।

हनुमान् उड़े उड़कर चटसे, औषधियाँ लेकर आये फिर।
नियमानुसार फिर कूट पीट, लक्ष्मणको शीघ्र सूँघाये फिर॥
जागे जब लक्ष्मणलाल तुरत, बोले प्रतिशोध लीजियेगा।
हे राम! करें रावणका वध, मेरी चिन्ता न कीजियेगा॥
हो गया युद्धका समारम्भ, भर गई दिशाएँ बाणोंसे।
कितने ही वीरोंके शरीर, हो गये शून्य थे प्राणोसे॥

इतनेमे ले दिव्यरथ, आ पहुँचा रथवान्।
पहुँच रामके पास वह, यों बोला मतिमान्॥

"इस दिव्य स्वर्णमय स्यन्दनको, हेदेव! आप स्वीकार करें।
हैं कवच धनुष औ शक्तिबाण, इनको भी अङ्गीकार करें॥
यह सभी युद्ध उपकरण, देवपतिने, सेवामे भेजें हैं।
रावण न मर सका, अतः देवगणके कँप रहे कलेजे हैं"॥
राघव तुरत रथ पर बैठे, शस्त्रोंको भी स्वीकार किया।
साहस पूर्वक आगे बढ़कर, राक्षस दलका संहार किया॥
रघुनन्दनके द्वारा रावण, मूच्छित होकर गिर जाता है।
सारथी उसे ले रथ समेत, समराङ्गणसे फिर जाता है॥
मूर्च्छा टूटी तब नेत्र लालकर, झूंझला उठा सारथीपर।
"समराङ्गणसे क्यों भगा मुझे? ले आया इसका दे उत्तर॥
मिल गया बता क्या वैरी से,? दूषित मे रायश कर डाला।
वैरीके सम्मुख अरे अधम! कर डाला मेरा मुह काला॥
रथवान् लगा कहने ऐसे, "लङ्केश! ध्यान दे आप सुने।
चिन्ता न व्यर्थकी करें और, बिन किये आप सन्ताप सुने॥

इस भाँति आपकी दशा देख, मैनें तब यही उचित समझा ।
घोड़ोंकी भी दुर्दशा देख, इसमे ही अपना हित समझा ।।
शङ्का न आप करिये कुछ भी, चलियेगा आप अभी रणमे ।
लङ्केश! आपका रथी नहीं, घबराता है समराङ्गणमे ।।
वह तीव्र वेगसे पहुँच गया, समराङ्गणमे रथको लेकर ।
रणमे रावणके आनेंकी, कर रहे प्रतिक्षा थे रघुवर ।।
लड़ते लड़ते श्रीरघुवरने, लङ्कापतिका जब शिर काटा ।
आ गया निकल दूसरा तभी, राघवने उसको फिर काटा ।।
कहते हैं ऐसे कईबार, शिर काटा जब-जब रघुवरने ।।
फिर फिर शिर आने लगे और, चिन्ता रघुवीर लगे करनें ।।
तब कहा, सारथीने "भगवन् ! अब वह ब्रह्मास्त्र लीजियेगा ।
जो दिया आपको अगत्स्यने, उसका उपयोग कीजियेगा" ।।
ब्रह्मास्त्र ले लिया राघवने, रावणके ऊपर छोड़ दिया ।
उसके द्वारा लङ्कापतिका, यमपुरसे नाता जोड़ दिया ।।

रावणवध इस भाँतिसे, हुआ रामके हाथ ।
कहलाये संसारमे, विजयी सीतानाथ ।।

रोकर यों कहा विभीषणनें,सचमुच यह अनुचित काम हुआ ।
हो गया वंशका सर्वनाश, संहारक यह सङ्ग्राम हुआ" ।।
रनवासेमे रानियाँ सभी, व्याकुल होती हैं रो रोकर ।
कर महाभयङ्कर चीत्कार, गिरती हैं मूर्च्छित हो होकर ।।
कहती हैं हे लङ्केश ! कभी, ऐसा यह मरण नहीं होता ।
हे नाथ ! आपके द्वारा यदि, सीताका हरण नहीं होता ??

D

। लाखोंयत्न करने पर भी मृत्युने किसीको नहीं छोड़ा ।

वापिस लौटा दो सीताको, हमने तुमको समझाया था।
पर टाला उनकी बात नहीं, जिन लोगोंने बहकाया था" ॥
समझाने और बुझानें पर, नारियाँ वहाँसे जाती हैं।
अपने अपनें घरमे जाकर, वे रोती हैं चिल्लाती हैं ॥

उधर विभीषणसे तभी, बोले श्रीरघुराय।
"सुन्दर रथ शवके लिये, तुरत सजाया जाय ॥
विधिवत् शवका कीजिए, भली भाँति संस्कार।
करनेंको अन्तिम क्रिया, हो जाएँ तैयार ॥

तब कहा विभीषणनें "ऐसे, मै तो करता संस्कार नहीं।
दुष्टाचारीके लिए कभी, कर सकता यह व्यापार नहीं" ॥
तब कहा रामने "मरने पर, इस भाँति विरोध नहीं अच्छा।
वैरीके भी मर जाने पर, करना यों क्रोध नहीं अच्छा ॥
जीतेजी रावणसे हमने डटकरके लड़ी लड़ाई है।
मरने पर यही समझते हैं, जैसे वह मेरा भाई है ॥
इसलिए त्यागकर वैर भाव, जाओ संस्कार करो भैया।
अपने भाईसे भाईके जैसा, व्यवहार करो भैया" ॥
यह सुन कर तभी विभीषणने, उस शवको रखवाया रथपर।
हो गए लोग एकत्र वहाँ, देखने दृश्य अन्तिम आकर ॥
याज्ञिक जन भी हो गए जमा, हो गई यज्ञकी तैयारी।
चन्दनकी लकड़ी और सुगन्धित, सामग्री ले ली सारी ॥
स्मशान घाट पर पहूँच चितामे, शव को रक्खा ले जाकर।
अन्तिम संस्कार विभीषणने, कर दिया अग्निको सुलगाकर ॥

लक्ष्मणसे कहने लगे, इस प्रकार अवधेश ।
"मित्र विभीषणको बना, दो विधिवत् लङ्केश" ॥

आज्ञा पातें ही लक्ष्मणने जा विधिवत् उसका तिलक किया ।
सारी लङ्काके बीच उन्हें, लङ्काका अधिपति बना दिया ॥

राघवका और विभीषणका, लक्ष्मणका जय जयकार हुआ ।
इनके शासनमे रहनेको, सब प्रजाबृन्द तैयार हुआ ॥

हनुमतसे बोले राघवेन्द्र, सीताकी सुधि लेने जाओ ।
सब समाचार कहकर उनसे, अविलम्ब लौटकर तुम आओ ॥

आज्ञा पाते ही महावीर, झट गए पास सीता माके ।
करके प्रणाम गद् गद् होकर, कह दिया बात सब समझाके ॥

राघवके द्वारा रावणका, संहार हो गया है माता!
यह भी सुन लो शुभ समाचार, सुखपूर्वक हैं दोनो भ्राता ॥

सीताने कहा "सुनाया है, जो समाचार मुझको बेटा!
बदलेमे अब तो इसके मै, क्या दूँ ? बतला तुझको बेटा!!

जग भरकी सभी सम्पदाएँ, दे दी जायें तो थोड़ी हैं।
हे वीर! प्रसंशा कितनी भी, अब की जायें तो थोड़ी है" ॥

हनुमत् बोले "कुछ दो न किन्तु, यह आशा पूरी कर दो माँ!।
कहता हूँ हाथ जोड़, मेरी अभिलाषा पूरी कर दो माँ!!

जिन राक्षसियोंने प्रति दिन ही, दुख देकर तुम्हें सताया है।
मैने देखा है नयनोसे, क्या क्या न कष्ट पहूँचाया है ॥

आज्ञा दो मुझको हे माता! इनको मारूँ मै लातोंसे।
लूं नाक काट इन दाँतोंसे, पीड़ित कर दूं आघातोंसे" ॥

॥ निर्बलोंसे बदला लेना उचित नहीं ॥

सीता बोलीं "हे महावीर ! इनपर लाओ तुम रोष नहीं।
अपना कर्तव्य निभाया है इन सबने, इनका दोष नहीं ।।
लंकेश्वरकी आज्ञानुसार, सब मुझे सताया करती थीं।
अपनी इच्छासे तुम्हीं कहो,? कब मुझे सताया करती थीं"??
हनुमत् बोले "है धन्य तुम्हें, है योग्य तुम्हारा उत्तर यह।
है मानवतासे ओत-प्रोत, अति उत्तम प्यारा उत्तर यह"।।
सीता बोलीं "पतिदर्शनकी, अब प्रबल हो रही इच्छा है।
दर्शन दें शीघ्र कहो उनसे, यह सबल हो रही इच्छा है"।।
हनुमान् विदा सीतासे हो, रघुवरके ढिग आ जाते हैं।
श्रीसीताने जो बात कही, रघुवरको वही सुनाते हैं।।
सीताको लाने हेतु रामने, लंकेश्वरको आज्ञा दी।
लंकापतिने अतिहर्ष सहित,शिरपर धारण वह आज्ञाकी।।
जाकर फिर कहा विभीषणने,"मातः ! प्रस्तुत हों चलनें को।
नव वस्त्राभूषण धारण कर, करुणानिधानसे मिलनेको"।।
स्नानादिक कर श्रीसीताने, समुचित अपना श्रृंगार किया।
मन चरणोंमे था पहुँच चुका, अब तनको भी तैयार किया।।
अतिसुन्दर सजा पालकीको, लंकापतिने फिर मँगवाया।
लंकाका नारी-नर मण्डल, इनको पहुँचानेको आया।।
श्रीसीता, रामचन्द्रजीकी जयका सबने जयकार किया।।
सीताने आगन्तुक जनको, शिर झुका हृदयसे प्यार किया।।
आदरके साथ पालकीमे, बैठाया गया जानकीको।
बिन दर्शन किये किसीके भी, है चैन नहीं उत्सुक जीको।।

राघवदलके सैनिक तत्पर, हो आये दर्शन पानेको।
हो गई भीड़ जब अधिक, तुरत रक्षक आगये हटानेको ॥
तब राम विभीषणसे बोले, "सीताको पैदल आने दो।
संकोच रखो मत कुछ मनमे, सबको ही दर्शन पाने दो ॥
सब लोग यहाँ सम्बन्धी हैं, सबके सब मित्र हमारे हैं।
सब हैं हमको भाई समान, सबके सब हमको प्यारे हैं" ॥
अब तो सीता धीरे-धीरे, पैदल ही चलतीं आती हैं।
सन्तोष सहित सारी जनता, दर्शनका लाभ उठाती है ॥
जब पहुँची वे राघवदलमे, सबके आगे सकुचाती हैं।
मेरे कारण यह काण्ड हुआ, यह सोच तनिक अकुलाती हैं ॥
इतनेमे देखा रघुवरको, फूली मनमे न समाती हैं।
हर्षाती हैं सुख पाती हैं, बाहर न भाव दर्शाती हैं ॥
धीरे-धीरे चलते-चलते, जब और निकट आ जाती हैं ॥
रुक जाती है वाणी ही तब, मुखसे कुछ बोल न पाती हैं ॥
सीतासे बोले राघवेन्द्र, "कैसा प्रतिशोध लिया हमने ?
हे सीते ! तुम्हें सतानेका, समुचित ही दण्ड दिया हमने ??
जो भी कुछ बीती घटनायें, वे घटनायें सब सफल हुईं।
जो भी होता है उचित वही, वह बात आज अब सफल हुई ॥
हनुमतका सुधि लेने आना, सुधि लेकर जाना सफल हुआ।
साथ ही साथ लंका नगरीको, अग्नि लगाना सफल हुआ ॥
सुग्रीव बने जो मित्र, मित्रता, पूर्ण बनाना सफल हुआ।
भाईको त्याग विभीषणका, मेरे ढिग आना सफल हुआ ॥

। सफलता मिलने पर ही किये हुए काम सार्थक होते हैं।

रघुवरनें कहा विभीषणसे, "पूष्पक विमान तैयार करो।
उसमे जो चलनें वाले हैं, उन सबको शीघ्र सवार करो॥
मै सोच रहा हूँ अवधि बीतनेके पहले घर जानेंको।
होंगे श्रीभरतलाल आतुर, अब मेरा दर्शन पानेको"॥

दी तुरत विभीषणने आज्ञा, पुष्पक विमान तैयार हुआ।
उन प्रमुख महारथियोंका दल, उसमे जा तुरत सवार हुआ॥
वह यान उड़ा तब लोग सभी, वह दृश्य देखने जाते हैं।
श्रीसीताको श्रीराघवेन्द्र, सब प्रमुख स्थान दिखलाते हैं॥

"रावण ओ कुम्भकर्ण इनको, मैने ही यहाँ सँहारा है।
लक्ष्मणने देखो इसी स्थानपर मेघनादको मारा है॥
यह देखो सेतु महासागरपर बाँधा है श्रीयुत नलने।
लङ्कापर धावा बोल दिया, इसके द्वारा अपने दलने॥

इस ऋष्यमूक गिरिपर सुकन्ठने मित्र बनाये थे हमको।
तुमने जो गहने, फेंके थे, वे सब दिखलाये थे हमको"॥
चलते चलते किष्किन्धापर, पुष्पक विमानको ठहराये।
फिर प्रमुख प्रमुख महिलाओंको, सुग्रीव तुरत जा ले आये॥

महिलाएँ वस्त्राभूषणसे, सज–धजकर आईं चलनेको।
तारा अपनी प्रिय सखियोंको, अपने सँग लाईं चलनेको॥
पुष्पक विमान फिर उड़ा आगया भरद्वाजके आश्रम पर।
कुछ कारणवश श्रीरामचन्द्रको, यहाँ ठहरना था हितकर॥

हनुमान से कहा "शीघ्रतासे, हे वीर! अयोध्या जाओ तुम।
श्रीभारतलालके समाचार, विस्तार सहित ले आओ तुम॥

सब समाचार कहना उनको, उत्तरमे क्या कहते हैं वे ?
मन, कर्म, वचनसे पता लगा, सब भलीभाँति कहना हमसे ॥
सत्ता, सम्पत्ति और वैभवद्वारा परिवर्तन होता है।
राजसी सुखोंको पानेका, किसका न कहो मन होता है ??
कहना शासन करना ही है, तो करे हर्षसे शासन वह।
सङ्कोच रहित होकर रक्खे, कहना अपना सिंहासन वह ॥
हम रुके रहेंगे निश्चित ही, हेवीर! तुम्हारे आनेतक।
आगे न बढेंगे ध्यान रहे, सब समाचारके पानेतक" ॥

पहुँच गये श्रीपवनसुत, भरतलालके पास।
देखा उनको दूरसे, बैठे हुये उदास ॥

रक्खीं हैं रामपादुकायें, सुन्दर ढँगसे सिंहासनपर।
नीचे बैठे हैं भरतलाल, साधारणसे कुश-आसनपर ॥
कृशतनपर शोभित सरल वस्त्र, शिर जटाजूट शोभायमान।
अति तेजस्वी वह मुख मण्डल, दे रहा तपस्याका प्रमाण ॥
हनुमान् निकट जाकर प्रणाम, करके यह वचन सुनाते हैं।
हैं आप प्रतीक्षामे जिनकी, वे रामचन्द्रजी आते हैं ॥
हैं साथ लक्ष्मण, सीता भी, सानन्द कुशल मङ्गल भी हैं।
सुग्रीव, विभीषण, अङ्गदादि, सङ्गमे कुछ वानरदल भी हैं ॥
इतना सुनते हीं भरतलाल, तत्क्षण मूर्च्छित हो जाते हैं।
जागृत होने पर हनुमतको, झट अपनें गले लगाते हैं ॥
बोले "हेभाई! समाचार, तुमने जो हमे सुनाये हैं।
वर्षाके बाद अमृतवर्षण, मेरे कानोने पाये हैं" ॥

विस्तार सहित सब समाचार, होकर निश्चिन्त सुनाओ तुम ।
सब घटनाओंका सारभाग, हेवीर ! सुनाते जाओ तुम ।।
तब सुना मुख्य घटनाओंको, करके उनका अन्तर्दर्शन ।
वज्राङ्गी लौटे, प्रभुके कानोमे करनें अमृत वर्षण ।।
फिर बोले भरत शत्रुहनसे, "झट-पट सारी तैयारी हो ।
स्वागत करके ले आनेको, तैयार सभी नर-नारी हों ।।
सब राजपथोंका सिञ्चन हो, तोरण बँधवाओ ठौर-ठौर ।
दूकाने सजवाई जायें, जैसी न सजी हों कभी और ।।
श्रृङ्गारित हो पूरीं नगरी, तोरण औ बन्दर वारोंसे ।
श्रीरामचन्द्रके स्वागतमे, सब लोग सजें श्रृङ्गारोंसे" ।।
आज्ञा पाते ही सब प्रबन्ध, कर दिया उचित जो करना था ।
पूरी नगरीनें ठाट-बाट, सब किया उचित जो करना था ।।
हाथियों और घोड़ोंपर चढ़, बैठे हैं लोग कई रथपर ।
सैनिक, सेनापति, जनरक्षक, क्रमबद्ध चल रहे हैं पथपर ।।
रखने अनुशासनमे सबको, कर रहे प्रबन्ध प्रबन्धक हैं ।
हम पर आये कुछ बात नहीं, इससे डर रहे प्रबन्धक हैं ।।
नाना प्रकारके वाद्ययन्त्र, बज रहे मनोज मधुर स्वरमे ।
ज्यों ब्रह्मानन्द छा गया हो, सारी नगरीके अन्तरमे ।।
सब जन प्रसन्नमुख स्वागतमे पुरके बाहर जा खड़े हुये ।
इतनेंमे आ पहुँचा विमान, जिसपर प्रभुवर थे चढ़े हुये ।।
आ टिका भूमिपर जब विमान, तो प्रथम राम बाहर आये ।
सीता, लक्ष्मणके पीछे फिर, सैनिक तमाम बाहर आये ।।

तब सभी अयोध्यावासी जन, देखा कि भानु हो गया उदय।
अति उच्च स्वरोंमे बोल उठे, "श्रीसीता, रामचन्द्रकी जय"॥
श्रीभरत, रामके चरणोपर, ज्यों ही जाकर गिर जाते हैं।
श्रीराम उठा बलपूर्वक फिर उमको निज गले लगाते हैं॥
फिर भरतलालनें सीताके, चरणोमे नम्र प्रणाम किया।
लक्ष्मणनें भरत, शत्रुसूदनसे, मिल उनको सम्मान दिया॥
सब माताओंके यथायोग्य, श्रीरामचन्द्रने चरण छुये।
फिर अग्रजके चरणोमे गिर, शत्रुघ्न अतीव प्रसन्न हुये॥
सम्पूर्ण मार्गपर लोगोंने सानन्द किया फिर अभिनन्दन।
नगरीके प्राणी-मात्र सभी, हो रहे आज हैं हर्षित मन॥
श्रीभरतलालने आश्रमसें, वे युगल पादुकायें ला दीं।
आग्रह पूर्वक कर जोड़, विनयके साथ रामको पहना दीं॥
फिर कहा रामसे "राज्य भार, प्रभु! अपना आप सँभालें यह।
दुर्बल कन्धोंपर धरा हुआ, मेरा अब भार उठा लें यह"॥
श्रीरामचन्द्रने सहमत हो, वह सिंहासन स्वीकार किया।
जिसके ये ही अधिकारी थे, उसपर अपना अधिकार किया॥
नाईको पुनः बुला करके, फिर क्षौरकर्म करवाते हैं।
उबटन शरीरपर मल-मलकर, चारो ही भाई न्हाते हैं॥
सुन्दर चमकीले क्षोम वस्त्र, चारो भ्राताओंने पहने।
फिर धारण किये प्रसन्न चित्त, बहुमूल्य रत्न विजटित गहने॥
सीतानें भी कर स्नान मुदित होकर, उत्तम श्रृङ्गार किया।
वस्त्राभूषण पहना करके, माताओंने था प्यार किया॥

कपियोंकी सभी नारियोंको फिर दिये रुचिर वस्त्राभूषण ।
माता कौशल्याने सबका, सम्मान किया जी भर उस क्षण ॥

राज्य तिलकका कार्य सब, वंश नियम अनुसार ।
किया तभीं गुरुवर्य्यने, विधिवत् भले प्रकार ॥

श्रीरामचन्द्रको रत्न जटित, सिंहासनपर फिर बैठाया ।
गुरुवरने आज्ञा दे करके, झट राज्यमुकुटको मँगवाया ॥
वह राज्य मुकुट देदीप्यमान, गुरुने पहनाया रघुवरको ।
ऋत्विग्जन ब्राह्मण मण्डलने, उच्चारा वेदोंके स्वरको ॥
ले छत्र हाथमे शत्रुदमन, सिंहासनके पीछे आये ।
लङ्केश और कपिराज चँवर, ले खड़े हुए दायें बायें ॥
नाना प्रकारके वाद्य, शङ्ख, नक्कारे बजने लगे वहाँ ।
चहुँ और राम रघुनन्दनका, होता है जय जयकार जहाँ ॥
विप्रोंको स्वर्णिम मुद्रायें, एवम् गौओंका दान किया ।
आमन्त्रित जनताका समुचित, फिर यथा योग्य सम्मान किया ॥
मणियोंसे मण्डित स्वर्णहार, कपिपतिको लाकर दिया जभी ।
अङ्गदको दो केयूर दिये, सम्मान यथा विधि किया जभी ॥
अति सुन्दर चन्द्रकिरण जैसी, अनुपम थी मोतीकी माला ।
श्रीराघवेन्द्रने उसी समय, श्रीसीताजीको दे डाला ॥
सीताने कर स्वीकार उसे, श्रीमहावीरको पहनाया ।
पाकर बहुमूल्य पारितोषिक, हनुमान् हृदयमे हर्षाया ॥
सब वीरोंको दे यथायोग्य, उपहार हर्षसे बिदा किया ।
ज्यों महासिन्धुने जल दे वारिध, दल हो जगमे भेज दिया ॥

जाते-जातें सब लोग वहाँ, यों बोल उठे होकर निर्भय।
"हो असुर निकन्दन, श्रीरघुनन्दन, राजा रामचन्द्रकी जय" ॥

-(०)-

मुनिवर वाल्मीकि लिखते हैं, सुनिये राम-राज्यका हाल।

हर्षित चित नित सब नर-नारी।
अभय मुदित मन नगरी सारी ॥
हृष्ट-पुष्ट सन्तुष्ट, सुखारी।
व्याधि रहित वैभवयुत भारी ॥

चोर, जार, बदमाश, उचक्के, थे न जहाँ कङ्गाल।

ब्राह्मण ब्रह्मकर्म निर्माता।
धर्माधर्म मर्मके ज्ञाता।
क्षत्रिय शूर-वीर बलदाता ॥
गो सेवा कृषि वैश्य निभाता ॥

स्वधर्म निधनं श्रेयःका रखते सभी खयाल।

रहते सब ही अनुशासनमे।
सदाचार भी था जीवनमे ॥
राष्ट्रीयता रखते मनमे।
श्रद्धा रखते वेद वचनमे ॥

"मिश्र" मान मर्यादाको भी रखते सदा सम्हाल ॥

शान्ति कीजिये प्रभु त्रिभुवनमे।
जलमे, थलमे और गगनमे।
अन्तरिक्षमे अग्नि पवनमे॥
औषधि, वनस्पति वन उपवनमे।
सकल विश्वमे जड़ चैतनमे॥

शान्ति कीजिये प्रभु त्रिभुवनमे।

ब्राह्मणके उपदेश वचनमे।
क्षत्रियके द्वारा हो रणमे॥
वैश्य जनोके होवे धनमे।
और शूद्रके हो तन-तनमे॥

शान्ति कीजिये प्रभु त्रिभुवनमे।

शान्ति राष्ट्र निर्माण सृजन मे।
नगर, ग्राममे और भवनमे॥
जीव मात्रके तनमे-मनमे।
और प्रकृतिके हो कण-कणमे॥

शान्ति कीजिये प्रभु त्रिभुवनमे।

॥ प्रार्थना पुरुषार्थ करनेपर ही सफल होती है ॥